गंगा चील के पंख

अंतर्भारतीय पुस्तक-माला

गंगा चील के पंख

लेखक
लक्ष्मीनंदन बोरा
अनुवादिका
श्रीमती शारदा बरुआ

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

प्रथम संस्करण 1989 (शक 1893)
द्वितीय आवृत्ति 1990 (शक 1912)

Original Title : GANGA CHILENIR PAKHI (Assamese)
Hindi Translation : GANGA CHEEL KE PANKH

रु. 12.00

निदेशक, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, ए-5, ग्रीन पार्क
नई दिल्ली-110016 द्वारा प्रकाशित ।

असमी उपन्यास : संक्षिप्त सर्वेक्षण

असमी उपन्यास की रूपरेखा तैयार करना एक खासी लंबी प्रक्रिया है। मध्ययुगीन काव्यों या लोककथाओं में इसका ज़िक्र कहीं नहीं मिलता। वर्तमान असमी गद्य का प्रारंभ असमी की प्रथम पत्रिका **अरुणोदय** (1846-82) से हुआ। इस काल में करीब छह लंबी कहानियां—चार अनूदित, दो मूल—प्रकाशित हुईं। **यात्रिकर यात्रा** (पिलग्रिम्स प्राग्रेस, 1851), **एलोकेशिर बेस्या** (टेल आफ एलोकेशी, द प्रास्टीट्यूट, 1857), **कामिनीकांत** (1877) और **फूलमणि आरु करुणा** अनूदित रचनाएं हैं और **सुधर्मार उपाख्यान** (सुधर्म की कथा, 1884) तथा **बाहिरे रंग चंग भीतरे कोवा भातुरी** (हर चमकने वाली चीज़ सोना नहीं होती, 1876) मूल रचनाएं हैं। अनुवाद अमरीकी बेप्टिस्ट मिशनरियों द्वारा किये गये हैं और मूल रचनाएं क्रमशः एक महिला लेखक पद्मावती फुकनर्नी और सुप्रसिद्ध कोशनिर्माता तथा व्यंगकार हेमचंद्र बरुआ द्वारा लिखी गयी हैं। इसाई कहानियों में शिक्षा का उद्देश्य धर्म-परिवर्तन था। **कोवा भातुरी** में पहली बार हमें स्वस्थ, साहित्यिक व संपन्न गद्य के दर्शन होते हैं। वैसे यह एक व्यंगात्मक उपन्यास है। कथात्मकता और चरित्र-चित्रण का भी इसमें ध्यान रखा गया है।

असमी उपन्यास-लेखन का अगला सीमांत दो साहित्यिक पत्रिकाएं, **जोनाकी** (1889) और **बिजुली** (1890) हैं। **जोनाकी** में एल.एन. बेज़बरुआ की **पदुम कुंवरी** (1905) धारावाहिक रूप में प्रकाशित हुई थी तथा बिजुली में पद्मनाथ गोहांई बरुआ की महत्वपूर्ण रचना **भानुमती** प्रकाशित हुई। **भानुमती** भावपूर्ण कथा की निरंतरता के कारण प्रथम असमी उपन्यास माना जाता है। पद्मनाथ की **लाहोरी** (1892) में भी ये प्रवृत्तियां पायी जाती हैं। दोनों की तुलना की जाय तो **पदुम कुंवरी** कुछ सतही मालूम पड़ती है। ये सभी उपन्यास प्रतिद्वंद्वी उम्मीदवारों की कहानियां हैं, हालांकि इनमें नायक-नायिका को स्पष्ट रूप से

पहचाना जा सकता है। इनमें शृंगार रस प्रधान है और **पदुम कुंवरी** में सामूहिक आत्महत्या का प्रसंग तत्कालीन लेखक लंबोदर बोरा की आलोचना का कारण बना। जाहिर है, आलोचक चाहता था कि उपन्यास में सामाजिक और निष्ठा-युक्त उद्देश्य होना चाहिए।

असम में उपन्यास-लेखन, उन्नीसवीं शताब्दी के समाज पर, भारतीय नव-जागरण के मानवीय असर का परिणाम था। रजनीकांत बार्दोलोई के ऐतिहासिक उपन्यासों की उत्साहपूर्ण कहानी, चरित्रों और घटनाओं की क्रिया-प्रतिक्रिया, भावात्मक वर्णन और देशभक्ति से परिपूर्ण किसी विशेष ऐतिहासिक अतीत की पुकार---गुणात्मक ढंग से भिन्न तथा विशेष रूप से असमी उपन्यास के रूप में एक नये कला-रूप के आगमन के सूचक माने जा सकते हैं। उनके आदिवासी जीवन पर आधारित **मीरी जियारी** (मीरी कन्या, 1894) उपन्यास को कथा-साहित्य का अगुआ माना जा सकता है। इनके ऐतिहासिक उपन्यास **मनोमति** (1900), **रंगीली** (1909), **निर्मल भकत** (1926), **राधा-रुक्मिणी** (1925), **ताम्रेश्वरी मंदिर** (1936) और **दंदुवा द्रोह** (1928) पूर्व-ब्रितानी युग में बर्मी आक्रमण और असमी गृह-युद्ध जैसी उघाती घटनाओं द्वाराउत्पन्न हलचल और कुंठाओं पर आधारित थे। चरित्रों द्वारा संस्कृति, धर्म, सामाजिक-व्यवहार और यौन-नैतिकता पर पूरा प्रकाश पड़ता है। कथानक अकसर उधार लिये होते थे और प्रेमियों के इर्द-गिर्द घूमते थे, समय और भाग्य के विरुद्ध उनके संघर्षों का जिक्र होता था। **ताम्रेश्वरी मंदिर** में बर्मी आक्रमण द्वारा तीखा बनाये गये तांत्रिक-पीटिका के विरुद्ध प्रेमी के संघर्ष का चित्रण है। **मनोमति** का कथानक बड़ा सूक्ष्म और प्रबल है। इसमें प्रेमी सिर्फ आक्रमण द्वारा आरोपित अभियोगों का ही नहीं बल्कि रोमियो और जूलियट की तरह कबीलों के संघर्षों का सामना करता है। **निर्मल भकत** बर्मी आक्रमण के परिणामस्वरूप उत्पन्न कुंठा पर आधारित परिष्कृत प्रेम की कुंठा की कहानी है। **दंदुवा द्रोह** में लेखक पदुम कुंवरी की कथा को अच्छे चरित्र-चित्रण तथा कथानक द्वारा चित्रित करता है। कभी-कभार के असंगत उपदेशों को छोड़ कर, सब कुछ देखते हुए बरदोलोई ने अपने समय की कला की जरूरतों को पूरा किया।

ऐतिहासिक उपन्यासों में रुचि काफी कम हो गयी जान पड़ती है। फिर भी, कुछ लेखक इस क्षेत्र को कभी-कभी अपना योगदान देते रहे हैं। इसकी निरंतरता

को हीतेश्वर बरबरुआ की **मालिता** (1914), शरतचंद्र गोस्वामी की **पानीपथ**, और एच.एन. दत्तबरुआ की **चित्रदर्शन** और दंदीनाथ कलिता के **जन विप्लव** ने बनाये रखा है।

समाज में लौकिक मानवीय शक्ति के उत्थान के साथ-साथ असमी में सामाजिक उपन्यासों का भी आगमन हुआ। ऐतिहासिक पीठिका द्वारा विवस्त्र किये गये प्यार, निषेध द्वारा अकारण दबा दिये गये सेक्स को प्राकृतिक और मानवीय आधार पर खड़ा करना था। इस प्रारंभिक काल में लेखकों द्वारा इस समस्या से साक्षात्कार का विवरण यहां जरूरी नहीं है। इन लेखकों में कुछ महिलाएं भी थीं। इन सबने मिलकर संत्रस्त व्यक्ति की समस्याओं की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करने की कोशिश की। दूसरे गुट में दंदीनाथ कलिता और दैवचंद्र तालुकदार जैसे लेखक गांधीवादी समाज-सुधार से प्रभावित हुए, पर उन्हें अपने उपन्यासों में कला और सुधारवादिता की सुंदर, संतुलित अभिव्यक्ति देने में अधिक सफलता नहीं मिली। इनका असली योगदान था, समाज-सुधारक को नायक के रूप में प्रस्तुत करने पर उत्पन्न होने वाली कशमकश और परिस्थितियों को पहचानना। कलिता की **साधना** (1925) का नायक दीनबंधु स्कूल में पढ़ाता है, लेकिन स्त्री की सुरक्षा और गरीब के सम्मान की रक्षा का नतिक साहस उसमें है; संभाव्य निंदक से अपने-आपको बचाने के लिए आदर्शवाद और उपदेशात्मकता की झलक अकसर दिखायी पड़ती है। तालुकदार के उपन्यासों में आदर्शवाद तथा चरित्रों के व्यवहार की विषमता का चित्रण मिलता है। एक आम प्रशंसनीय बात है—ढीले-ढाले कथानक और अमूर्त चरित्रों में स्वभावतया उभरने वाला लेखक का मंतव्य, जैसाकि **विद्रोही** (1948) में दिखाया गया है। आग्नेयगिरि का कार्त्तिक इतना साहस जुटा पाता है कि एक बाल-विधवा से विवाह कर ले और समाज-सुधार में भी अपनी रुचि बनाये रखे।

दीननाथ शर्मा के **संग्राम** (1954) जैसे उपन्यासों में निम्नवर्ग की सामाजिक कुंठाओं को सहानुभूति और भावुकता सेव्यक्त किया गया है। **संग्राम** का शिक्षित बुद्धिराम बेकार है क्योंकि अमानवीय और ओछी शर्तों पर काम करने के लिए वह तैयार नहीं, और शटल-काककी तरह एक के बाद दूसरी परिस्थिति से जूझते हुए वह एक स्वप्न-सुंदरी की कल्पना में डूबा रहता है और अंततः खत्म हो जाता है। **नदाई** में फिर हमारा सामना एक मेहनतकश किसान से होता है, जो अपनी

संपन्न आजीविका के अंत तक पहुंचने ही वाला था कि एक व्यर्थ की स्थिति में फंस जाता है, जिसमें नयी पीढ़ी उसके वांछित मूल्यों का अनादर करती है। इस तरह की भावुक मानवीयता पर आधारित सन 30 की असमी जिंदगी का ज्यादा संतुलित चित्रण बीना बरुआ के **जीवनोर बाटव**, (जीवन के पथ पर) (1945) में मिलता है। इसमें शैली और विषयवस्तु इस प्रकार एक-दूसरे में समाहित हो जाती है कि परिस्थितियों और चरित्रों की पारस्परिकता विश्वसनीय और वर्णन जमे हुए मालूम पड़ते हैं।

[2]

अगस्त क्रांति और द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद उपन्यासकारों की दो पीढ़ियां सामने आयीं। युद्ध, स्वाधीनता और क्रांति की उपघातीय घटनाओं ने पहली पीढ़ी की कल्पना पर अपना असर छोड़ा, दूसरी पीढ़ी ने यह सब सुनकर जाना, स्वाधीनता का खट्टा-मीठा स्वाद वह चख नहीं पायी। कुल मिलाकर इन लेखकों का एक दल है। स्थान की कमी के कारण सबके बारे में बताने की उत्सुकता मैं रोक लूंगा। एक महत्वपूर्ण व्यक्तिगत कारण से मैं अपने उपन्यासों के विषय में भी कुछ नहीं कहूंगा।

जब उपन्यास लेखकों का ध्यान मानववाद की ओर आकृष्ट हुआ, तब विषय-वस्तु की तलाश में (व्यक्तिगत स्वभाव, विश्वास और अनुभव के आधार पर) जीवन के अछूते क्षेत्र प्रमुख बनने लगे। लेकिन सभी लेखकों ने अपने लेखन को यथार्थ पर आधारित किया हो, ऐसी बात नहीं है। अनेक उपन्यासों में रूमानियत की प्रधानता रही, जोगेशदास के **डावर श्रारु नाई** (बादल छंट गये, 1955) में असम के चाय-बागान में काम करने वाले एक ईमानदार आदमी के नैतिक संघर्ष की कहानी, युद्ध के प्रत्यक्ष और नैतिक विनाश की पीठिका पर कही गयी है। रसना बरुआ (बीना बरुआ या डा. बिरिंचि कुमार बरूआ) की **सेउजी पातंर काहिनी** (हरी पत्तियों की कहानी, 1959) में एक चाय-बागान क्षेत्र के उपनिवेशक जीवन के उत्तेजक यौन-जीवन और विरोधी संस्कृति का मंत्रमुग्ध कर देने वाला वर्णन मिलता है। लोकप्रिय लघुकथा लेखक सैयेद अब्दुल मालिक ने स्वतंत्रता के बाद उपन्यास-लेखन शुरू किया। उनके उपन्यासों से पता चलता है कि उन्होंने एक शैली और एक रूमानी कल्पना का प्रयोग किया है। **सूरजमुखीर स्वप्न** (1960) स्थानीय मुसलमान ग्राम्य-जीवन की एक जीवंत अभिव्यक्ति है। एक सफल आंचलिक

उपन्यास बनाने के लिए इसमें उन सभी विशेषताओं का समावेश किया गया है। **अघोरी आत्मार काहिनी** में त्रस्त नायिका के एक खुशनुमा अंत के लिए जीवंत वार्तालाप और विषम कथानक का समन्वय किया गया है, जो गेरुदास की **सांजुई खेदी** (मृग-तृष्णा) में मध्यवर्ग की एक शिक्षित निर्वासित स्त्री की आंतरिक यंत्रणा का विवरण, प्रफुल्लदत्त गोस्वामी की **केचा पातर कपनी** (कांपते नवपल्लव, 1950) में एक मकान मालिक के एक शिक्षित बेटे की अशांत वेदना का वर्णन है, जो आदिवासी किरायेदारों के साथ वर्गभेद का संघर्ष और विलास साथ-साथ झेलता है। राधिकामोहन गोस्वामी की **चाकनैया** (भंवर, 1954) और **बामरली** (अंधड़, 1958) में सतही आधुनिकता और जीवन पर उसके प्रभाव का लक्ष्य मालूम पड़ता है। होमेन बरगोहांई को आध्यात्मिक आयाम के साथ सेक्स एक रहस्य मालूम पड़ता है। उनकी पुस्तक **तांत्रिक** (1967) में यह स्पष्ट है। अपनी एक प्रारंभिक कृति **सुबाला** में बरगोहांई ने एक वेश्या की कहानी अंतःप्रेरणात्मक आयाम से कही है। नवकांत बरुआ का आंचलिक उपन्यास **कपिलिपरिया साधू** (कपिलिपरिया की कहानी, 1954) एक ग्रामीण भावुक युवती रूपाई की कोमल कथा है जिसके माता-पिता का कोई पता नहीं और जिसका धर्म-पिता उसे एक बाढ़ग्रस्त क्षेत्र से उठाकर लाता है। लेखक ने कपाली में अतिमानवीय गुण दिखाए हैं। चंद्रप्रसाद सैकिया की **ए दिन** (एक दिन, 1951) एक विचारशील और प्रयोगात्मक रचना है। यह राष्ट्रीय स्वतंत्रता और प्रगति के आदर्शों से प्रेरित है।

जीवन को क्षेत्रीय या विभागीय रूप में प्रस्तुत करने का प्रयत्न समकालीन असमी उपन्यासकारों में प्रमुख रूप से पाया जाता है। इसका संकेत पहले ही किया जा चुका है। पद्मबार्कतकी के **मनर दपन** (मन-दर्पण), पशुपति भारद्वाज कृत **उरंत में धार कर** (उड़ते बादलों की छाया), निरुपमा बरगोहांई कृत **सेई नदी निरबधि** (अनवरत बहती नदी), एक युवा लेखक द्वारा **एई पदुमनी** और एक आदि युवक लूम्मेर दाई द्वारा **पृथिबीर हांहि** (अट्टहास पृथ्वी का) में यह स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। **एई पदुमनी** एक ऐसे भदेस ग्रामीण-जीवन की तहरीर मालूम पड़ती है, जो औद्योगिक प्रक्रिया से प्रभावित हो चुका है। महिला लेखकों का उदय भी एक महत्वपूर्ण विकास है। निरुपमा बरगोहांई के साथ **आकाश बंत्ती** की लेखिका नीलिमा दत्त, **उत्तरायन** की लेखिका प्रवीणा सैकिया भी योग्य लेखक की हैसियत से सामने आती हैं। लेखकों की एक लंबी सूची

है—जैसे महम्मद पियार, निरोद चौधुरी, हितेश देका और कुमार किशोर आदि—जो लोकप्रिय हो रहे हैं। गरीबी, रुमानियत और सेक्स-संबंधी विषय-वस्तुओं को लेकर अविवेकपूर्ण वाणिज्यिक प्रयत्न हुए हैं, लेकिन इनमें से अधिक कला की श्रेणी में नहीं आते।

[3]

उपन्यास-लेखन में लक्ष्मीनंदन बोरा अपेक्षाकृत नवागंतुक हैं। उनकी कृतियों में विषमता है। उनके कुछ उपन्यास निश्चित रूप से सेक्स-संबंधी हैं और उनकी सभी कृतियों को वैसा कलात्मक नहीं माना जा सकता। **गंगा चिलनीर पाखी** (गंगा चील के पंख, 1963) में उनकी प्रारंभिक लघु-कथाओं की झलक मिलती है—मुख्य रूप से उस संदर्भ में, जब आधुनिकता से प्रभावित गांव का दृश्य सामने आता है। असमी उपन्यास के जन्म से लेकर अब तक स्त्रियों के प्रति एक उत्कंठा, जिसका वर्णन प्राय: सोत्साह किया गया है, वह वांछित अनुपात में यहां मिलता है। वासंती के चरित्र का विकास मानवीय है और उसकी त्रासदी परिस्थितिजन्य होते हुए भी मानवीयता का प्रतिनिधित्व करती है। पुरुष पात्रों में धनंजय पर्याप्त एकरूप है और **कपिलिपरिया साधू** के रूपाई की याद दिलाता है। मुझे ऐसा लगता है कि भोगराम और मथुरा के चरित्रों में कुछ कमी रह गयी है—खास तौर पर उस जगह, जब वह व्यभिचार करता है, चोरी से अफीम के आयात-निर्यात में शामिल होता है। मथुरा की अनापेक्षित दुर्घटना कहानी की अंदरूनी जरूरत से ज्यादा बाहरी कारणों से प्रेरित मालूम पड़ती है। पुस्तक का आकर्षक अंश वह है, जब लेखक घर की याद में आतुर होकर सोनाई नदी के किनारे का जीवन, आजादी के बाद की चुनाव संबंधी राजनीति, विकास कार्यों और आधुनिकीकरण की बात सामने रखता है। इसमें संदेह नहीं कि यह प्रसंग असलियत का सिर्फ एक अंश है, लेकिन पूर्णत: चित्रित किया गया।

इस संक्षिप्त सर्वेक्षण से यह बात सिद्ध हो जाती है कि बोरा के उपन्यास क्षेत्रीय हैं और असमी उपन्यास-लेखन में प्रचलित शैली का प्रतिनिधित्व करते हैं। यह अनेक में एक है। असमी न जानने वाले पाठक इसे पढ़कर असमी ग्राम्य-जीवन की एक झलक देख सकते हैं।

खारघुलि
गोहाटी-4

—बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य

एक

वह आदमी बासंती के घर परसों भी आया था। बासंती ने याद किया कि वही आदमी अब तक उनके घर तीन बार आ चुका है। पर वह उसके बारे में कुछ भी नहीं जानती। वह कौन हो सकता है? मां से पूछूं? नहीं, वह यह बात पूछ नहीं सकती। मां डांटेगी। उसके बारे में जानने की उत्सुकता देखकर मां शायद कहेगी…बहुत पूछ रही हो, पसंद आ गया है क्या? हां ठीक ही तो है, शक तो जरूर करेगी। यह आदमी नहीं—यह नौजवान भला कहां से आता है? रायडींगया से? पाभचिला का भी हो सकता है। जलमई गांव के बादुला बाईन के घर का है क्या? खलपिया के मुंकद साटोला का भी लड़का हो सकता है। वह कहीं का भी हो, हमारी सोनाई नदी के इस पार का नहीं है। सोनाई के उत्तर पार के कई गांव उसने याद किये—जलमई गांव, पाभचिला, रायडींगया, डेवड़ा, कूंजी, चाबुकघरा, कहूंवा आदि। और भी कितने गांव हैं। उनके घर पहले भी कई लोग आये हैं और आगे भी आयेंगे। भाई व्यापारी आदमी हैं। कई तरह के लोगों से उनका परिचय है। जुबैद अली मुंशी के साथ जिस तरह अपनापन दिखाते हैं कूंजी के बलूका कलिता का भी उसी तरह आदर सत्कार करते हैं। कौन कितना अपना है, यह कहना कठिन है। व्यापारी आदमी की बातचीत से कुछ पता नहीं चलता। इस नौजवान के साथ भी भोगराम का अपनापन है, ऐसा अनुमान बासंती को हुआ।

उस अनजान आदमी के बारे में जिसका नाम अता-पता कुछ भी उसे मालूम नहीं फिर भी क्यूं वह इतना उसके बारे में सोच रही है। उसे शर्म आयी। अचानक उसका मन उलझन में पड़ गया। आज सुबह उसे सोचना चाहिए था—कि गमछे के बाकी बचे फूल कब बुनेगी, पाभचिला की रुकोणी मौसी के घर होने वाले कीर्तन में एक दिन पहले जाये या दो दिन, इत्यादि। पर मन की गहराइयों

में वह उसी नौजवान को ही ढूंढ़ती रही। बहते पानी में नौका का डांड पकड़ना जितना कठिन है मन को बांध रखना भी उतना ही कठिन है।

उसने किसी से सुना था—काचमारी तालाब की गहराई जैसे कोई नाप नहीं सकता, उसी तरह मन की बात का भी पार नहीं मिलता। एक अपरिचित पुरुष के प्रति सहसा इतने आकर्षण ने उसके जवान मन को डांवाडोल कर दिया। वह आतुर हो गयी। उसका स्वाभाविक मन बनवासी हो गया। रोज झाड़ू देना, और बिजली की गति से घरेलू काम करना, करघे पर पैर तेजी से चला कर 'तांत शाल' (करघा) में प्राण डालना, और दो बेला ढेकी में धान कूट कर पड़ोसियों को बतलाना कि घर में कोई जवान सुर्ख, भरे बदन की डीलडौल वाली चंचल लड़की है। उसके बदन में आज जैसे दुनिया का आलस समा गया है। तांत शाल में 'माको' (तागे की अंटी) हिलता रहा। करघे पर चलते हुए अभ्यस्त चरण के छंद रुक गये।

अब सूर्य काफी चढ़ गया है। धूप बदन में लग रही है। आज अभी बहुत-सा काम बाकी पड़ा है। चावल कूटना था, हंसों को छोड़ कर उनका दरबा साफ करना था। चबूतरा लीपना था। घर के दूसरे लोग काम में व्यस्त हैं। भतीजा देवकण, भतीजी चिकूणी, आंगन में खेल रहे हैं। हाथ फैला कर, घूम-घूमकर, चक्कर लेकर गिर रहे हैं। बड़े भाई भोगराम सुबह, तराजू और बाट साईकल पर बांध कर ढलपुरिया गांव चले गये हैं। भाभी शायद पीछे रस्सी पर कपड़े सुखा रही है। बूढ़ी मां आंगन में बैठी है और गुनगुना रही है 'भाल भाल, भाल भाल, भाल नाचे मदन गोपाल।' सिर्फ वही धान गोदाम के सामने बड़ी-सी लकड़ी पर बैठी है। पैर के अंगूठे से मिट्टी खुरच रही है। घर के सामने से शायद कोई बूढ़ा गुजरा होगा। देवकण और चिकूणी महा दुष्ट हैं। वह लोग चक्कर लेना छोड़ कर चिल्ला रहे हैं। 'बांस का मूढ़ा बेर का गूड़ा, कहां से आया गुस्से वाला बूढ़ा।' साथ-साथ भाभी की आवाज आ रही है "तुम लोग बहुत बढ़ते जा रहे हो। रास्ते पर चलते लोगों को चिढ़ाने का मजा मिलेगा।"

कुछ ही देर बाद भाभी उसके पास आयी। एक बार सिर से पैर तक उस पर नजर डाली। जमीन छूता आंचल कमर में खोंस कर विरक्ति से बोली—

"बासंती ठन-ठन मदन गोपाल होकर बैठी हो, उधर सूरज सिर पर चढ़ आया है। तुम्हें शायद पता ही नहीं, अभी भी कितना काम पड़ा है।"

बासंती खड़ीहोगयी। उसे शर्म भी आयी। भाभी शायद जान गयी है। बासंती को काम छोड़ कर, इस तरह बैठे हुए भाभी ने कभी देखा नहीं था। दोष छुड़ाने के लिए वासंती बोली, "आज सुबह से तबीयत अच्छी नहीं लग रही है। सिर भारी-भारी लग रहा है।"

भाभी ने मौका देख ताना देकर कहा, "सच है क्या ? मैं सोच ही रही थी कि दिल की ही बीमारी है। आजकल की जवान लड़कियों को दिल की बीमारी ही ज्यादा होती है। हां, दोष जवानी का है।"

"क्यूं मजाक करती हो भाभी ! आजकल कुछ कहने से तू कुछ और ही समझती है।"

"मुझे तू क्या समझाएगी ?"

"क्या समझी ?"

"तू तो एक लायक लड़की है। हम तो मूर्ख औरत हैं। इससे ज्यादा और क्या समझूंगी ?"

यह कह कर भाभी हंस दी लेकिन बासंती हंस नहीं पायी। उसका दिल धड़क उठा।

"भाभी, देवकण के दो कपड़े शायद धोने के लिए रह गये हैं।"

"अब उसकी जरूरत नहीं है। आज तुम्हें छुट्टी दे दी। दूसरे के घर जाओगी तो इस तरह आराम से बैठकर सोचने का मौका कहां मिलेगा ?"

"ओ हो, आज भाभी को क्या हो गया है ?"

"इस तरह अनजान बनने से क्या होगा। कहते हैं 'आजल जल सात मछली भात के तल'।" इस बार भाभी उसके उत्तर की प्रतीक्षा किये बगैर ही घर के अंदर चली गयी। और ब्याह के गीत की दो पंक्तियां उसके कान में पड़ीं—"फूल आछे फूली, कदम आछे हाली, कीय आईदेव चित्ता करा राम नाहे बुलि।"

वह समझ गयी कि भाभी, अंदर जाकर उसे छेड़ने के लिए ही शादी के गीत गा रही है। उसे आज भाभी के लिए खास प्यार उमड़ा। कितनी रंगीली और प्यारी भाभी है। मन में दुख नाम जैसी कोई वस्तु ही नहीं है। हां, दुखी होगी भी क्यों ? भोगराम उसे कितना प्यार करते हैं ! लेकिन यह भाभी दूसरे के मन की बात कितनी जल्दी समझती है, बासंती को आज ही पता चला।

उनके घर के पीछे की बारी काफी भरी हुई है। सुपारी और पान के पेड़ ही

शायद 'ढाई कूड़ी' (एक कूड़ी में बीस की संख्या होती है) होंगे। दो काले जामुन के पेड़ भी हैं। पाभचिला से लाकर लगाये हुए नारियल के दो पेड़ों में फल लगे हैं। इस बार चकोतरे के तीन पेड़ों में से एक पर, काठ आलू की बेल चढ़ रही हैं। बाग काफी साफ-सुथरा है। वहां पर तो जैसे फूंक मार कर ही खाना खाया जा सकता है। मन उदास होने से बासंती अक्सर बगीचे में ही आ जाती है। एक छोटी-सी खुरपी लेकर आलू-अरबी और अदरक-हल्दी के पौधों के आसपास की जमीन खुरपने लगती है। आज भी वह पीछे वाले बारी में पहुंच गयी। उसे देख कर एक गिलहरी सिर हिला कर तीर जैसी तेजी से सुपारी के पेड़ की चोटी पर चढ़ गयी। पुलिस की टोपी जैसी सिर वाली चिड़िया, काठ-फोड़ा 'ठेकेरा' के पेड़ पर कुछ देर चिल्ला कर अब चुप हो गयी। कण चाचा की बारी के बांस के पेड़ों के झुंड की ओर देखने से, उसकी नजर पड़ी कि, एक 'जहांमाल' (पेड़ में चढ़ने वाला एक किस्म का चीता। जिसके शरीर में असम के 'जोहा' चावल की खुशबू आती है। एक बांस के पेड़ से दूसरे की ओर खिसक रहा है। बासंती ने सोचा—शायद यह सब भी उसके मन की बात का आभास पा गये हैं। पशु-पक्षी सर्वज्ञानी होते हैं। हां इसमें आश्चर्य की बात क्या है यह भी जान सकते हैं और इसीलिए शायद उसका स्वागत कर रहे हैं। हिश—वह यह सब क्या सोच रही है। अक्सर इंसानों को ऐसी बातों का ख्याल होता है क्या ? वह पगली हो गयी है क्या ? यह सब नासमझी की बातें हैं।

लेकिन सोनाईपरिया गांव की लड़की इसी तरह सोचती है। वह समझती है कि सोनाई के आसपास के पेड़-पौधे, पशु-पक्षी और विशाल श्यामल मोहनीय प्रकृति, यह सब अपने मन के करीब होते हैं। यह लोग प्रकृति से अभिन्न हैं। इसीलिए कोयल, केतकी भी मन की बातें कहती हैं। सोनाई के चमकते उज्वल पानी के स्रोत में जीवन के छंद पाते हैं। वह सोनाई को छोड़ नहीं सकती। सोनाई से तो वह जीवन की दीक्षा लेती है। सोनाई तो उनसे बातें करती है, नाचती है, हंसती है, रोती है।

बारी के पार डेढ़ कूड़ी हाथ लंबे जमीन में बांस हैं। सिर्फ दो जगह 'भोलुका बांस' हैं। बाकी सब छोटे कद के मोकल बांस। उनके बीच के रास्ते से सोनाई के घाट पर उतरा जा सकता है। पीछे के आंगन के रास्ते से सोनाई नजर भी आती है। उधर से तो सोनाई दो मिनट का रास्ता है। इसीलिए जब भी पानी

की जरूरत होती है, भाभी और बासंती को लाने में कोई असुविधा नहीं होती। कैसे भी पोशाक में हो उसी से जाया जा सकता है। सोनाई नदी पर जाने के लिए किसी और के आंगन को पार करने या आम रास्ते से जाने की जरूरत नहीं पड़ती। अपनी बारी के पीछे ही सोनाई बहती है। हाथीचुंग गांव के लोगों के लिए जैसे अपने पिछवाड़े का कुआं है, उसी तरह बासंती के लिए सोनाई का घाट है। इस घाट का एक नाम भी है—ठनुआ घाट। उनके कोई पड़दादा का नाम शायद ठनुआ कलिता था। वह बहुत बड़े मछुआ थे। कहते हैं उनकी तरह बंसी डाल कर मछली पकड़ने वाला शायद इस इलाके में और कोई पैदा नहीं होगा। इसी घाट पर बंसी डाल कर पकड़ी हुई, एक हाथ एक मुट्ठी जैसी बड़ी मछली, बांध कर वह जिंदा रखते थे! ऐसे कितनी ही रूई चीतल रखते थे। वह बड़े नामी आदमी थे। उन्हीं के नाम से यह घाट है।

बासंती नहाने के लिए घाट पर पहुंची। उस पार जहां तक उसकी नजर पहुंच सकती थी, उसने देखने की कोशिश की, कौन-सा गांव कहां हो सकता है। सोचा, यह खोलपिया है। वह चाबूक धरा, आंखों के ठीक सीध में पाभचिला। वह जहां खड़ी है वहां से सोनाई पार कर करीब चार 'बेऊ' (पानी में एक डांड से जितना फासला तय किया जाता है उसे बेऊ कहा जाता है। पूर्व की ओर जो घाट है, वहीं से वह नौजवान नदी पार करता है। प्रायः साइकिल लेकर ही पार होता है। लेकिन कहां से आता होगा? पाभचिला, खोलपिया, कूंजी या फिर कोहूंआ आटी गांव का? उसका नाम क्या है। घर में कौन-कौन है? ब्याहता है क्या? वह उसे नहीं जानती है। एक दिन बड़े भाई को खोजते हुए आया था। साईकिल 'नगला' (बांस का गेट) के सहारे रख कर, तेजी से 'सोराघर' (दीवान-खाना) की ओर कदम बढ़ाये। उसे आज यह सब ठीक से याद आया। धोती दो लांग मार कर पहनी हुई थी। कमीज भी बगुले जैसी सफेद पहनी थी। बासंती के बड़े भाई की तरह सीने के ऊपर का बटन खुला हुआ था, और कमीज की बांहें ऊपर की ओर मुड़ी हुई थीं। भाई के मुंह की तरह उसके मुंह पर दूब घास की तरह दाढ़ी नहीं थी। एकदम साफ हजामत बनी हुई थी। गोरे सुंदर मुख पर काली मूंछें थीं। और चेहरा लाल हो रहा था। अच्छा कद। आवाज भी कैसी गंभीर। मर्द की आवाज तो ऐसी ही होनी चाहिए। उसके गंभीर स्वर में जैसे 'गगना' (बांस का छोटा-सा ग्रामीण बाजा) का एक अलग ही स्वर है। ऐसा

लगता है इस तरह के स्वर वाले मनुष्यों को अपने पर बहुत विश्वास होता है। दूसरे लोगों को भी ऐसे मनुष्यों पर विश्वास करना चाहिए। ऐसी आवाज सुनने से भला कौन-सी ऐसी लड़की होगी, जिसका दिल नहीं धड़केगा।

उसने घर की दहलीज पर पैर रखकर पूछा, "घर में कोई है? भाई भोगराम नहीं है क्या?" बासंती ने नजदीक के कमरे में से जवाब दिया, "नहीं है। क्यूं पूछ रहे हैं?"

"तो तुम्हीं सुन लो, एक बात है।"

बासंती 'सोरा-घर' में पहुंची। उसने कहा, "अच्छा तो शायद तुम्हीं बासंती हो। भाई भोगराम रोज ही बासंती का नाम लेते हैं। मैं समझ रहा था कोई छोटी-सी लड़की होगी। अब देख रहा हूं बड़ी सुंदर, घर की शोभा बढ़ाने वाली लड़की है।"

"बैठिए।"

"नहीं बैठ नहीं सकता हूं। बहुत काम है। एक खबर देने आया था। भाई को कहना, पाभचिला से चाकीराम ने समाचार भेजा है कि उनके पास एक गाड़ी धान है। कल तक तोल कर ले जाने के लिए कहा है।"

"अच्छा, कह दूंगी।"

आदमी जैसे आया था उसी तेजी से निकल गया। उससे बातचीत करते हुए जो थोड़ा-सा समय मिला वह नौजवान के मुख की ओर ही देखते बीत गया। नाम पूछना भी याद नहीं रहा। उसे 'सोरा घर' की ओर आते हुए भाभी ने भी देखा था। लेकिन उसने भाभी से पूछा नहीं कि वह कौन है? भाभी इतनी तेज है कि उत्तर देने से पहले ही कह देगी, खूब पूछा तूने? पसंद आ गया है क्या?

वह एक बार और भी आया था। पर उस दिन बड़े भाई के साथ ही बात करता रहा। बासंती उन्हें चाय देकर चली आयी थी। लेकिन उस दिन उसके दिल में एक कोमल-सा तीर चुभ रहा था। उसने बात करते-करते चुपके से दो बार उसकी ओर देखा था। एक बार तो उसकी सुंदर आंखों की तिरछी निगाह बासंती के गठे हुए वक्ष पर आकर रुक गयी थी। उस समय बासंती पर सारी दुनिया की शर्म समा गयी थी। लापरवाही के कारण वह दहलीज से ठोकर खा गयी और तब उसे और भी ज्यादा शर्म आयी।

सोनाई में घुटनों तक उतर कर हाथों से अपने ऊपर पानी उछाल कर सारा शरीर गीला करके बासंती यही सब सोचती रही। भीगे हुए शरीर को धूप में सुखा रही थी। वह डुबकी लगा कर नहाना भी भूल गयी। वह सोच रही थी, उसके आखरी बार आने की बात यानी परसों की बात।

वह 'सोरा घर' में झाड़ू लगा रही थी। उसी समय वह आ पहुंचा। उसने इस बार बड़े स्वाभाविक ढंग से बैठने को कहा। वह एक मूढ़े पर बैठ गया। झाड़ू दीवार से टिका कर उसने खुद ही कहा, "भाई साहब नहीं हैं। फूलगुड़ी बाजार गये हैं।" खुद बोलने की हिम्मत इसलिए हुई कि भाभी घर में नहीं थीं। दोपहर को बदो मंडल के घर में तीन बकरी काट कर भोज दिया गया है। भाभी वहीं गयी है। सब्जी वगैरा काटने की मदद के लिए। सिर्फ देवकण और चिकूणी आंगन में खेल रहे हैं।

"अच्छा तो तुम ही एक बात कह देना। उन्होंने मुझ से कहा था कि वह कल शहर जायेंगे। यह कागज तुम्हें दे रहा हूं, इस पर कुछ दवाओं के नाम हैं। और यह पैसे हैं। उनसे कह देना दवाएं खरीद लाने को, कहा है। मैं परसों तक किसी भी दिनअ आ कर ले जाऊंगा।"

यह कह कर उसने कागज और पांच रुपये का एक नोट नजदीक पीढ़े पर रख दिया। बासंती ने सब अपने हाथ में ले लिया। कुछ देर दोनों चुप रहे। बासंती ने सोचा इस तरह चुप रहना बुरा लग रहा है। बैठकखाने की निस्तब्ध प्यारी वायु में उसकी जल्दी-जल्दी ली हुई सांसें रुंध गयीं। नौजवान निश्चय ही बुद्धिमान है। आखिर में वह स्वयं ही बड़े आत्मविश्वास और मधुरमय कंठ से बोला, "बासंती, घर में किसी के आने से तुम उसको दुश्मन समझती हो क्या?" यह कह कर उसने जोर से हंसने की कोशिश की। निस्तब्ध बैठकखाना अचानक मुखर हो गया। बासंती का मन साफ हो गया। उसने अपने सुर्ख होंठ किंचित टेढ़े किये। उसे ऐसा लगा कि इस हंसी ने उसके जीवन में पहली बार प्यार और वासना का एक नया अनुभव दिलाया। पहले उसकी हंसी निष्कलुष थी। शरद काल के सोनाई के पानी जैसी निर्मल थी। मगर उसकी पहली वाली हंसी कैसी पेचीदा और अर्थपूर्ण। जैसे उसमें नासमझ प्यार की मेंहदी लगी हुई हो।

"आप बैठिये। मैं थोड़ी चाय गर्म करके लाती हूं।"

"चाय नहीं चाहिए। सुंदर लड़की हो, भला यूं क्यों कष्ट करोगी? चाय के

बदले कुछ और बातचीत ही की जाये। घर से मैं अच्छी तरह जलपान करके आया हूं। चाय बनाने का जो समय है, वह तुम्हारी ओर देखकर अच्छा लगेगा।"

पुरुष के मुंह से अपने रूप की प्रशंसा सुनकर बासंती शर्म से जैसे मुरझा गयी। वह पैर के नाखून से जमीन कुरेदती रही। कुछ देर बाद बोली, "एक तांबूल ही खा लीजिए।"

"तुम बुरा मानती हो तो, खा ही लेता हूं।" कह कर उसने अपनी सम्मति दी।

मुंह पर मुस्कराहट लिये और हाथों का पानदान नीचे रखते हुए बोली, "आज को मिलाकर आप तीन बार आ चुके हैं पर नाम नहीं जाना।"

उसने कहा, "तो इसका मतलब है तुमने किसी और से भी नहीं पूछा ? यानी निश्चय ही तुम्हें मेरे बारे में किसी प्रकार का कौतूहल नहीं है।"

बासंती ने कहा, "अरे, हर किसी से कैसे पूछा जा सकता है ?"

इस बार उसने हंसते-हंसते कहा, "ओ, समझा यानी सबसे ज्यादा कौतूहल है तुम्हें। तुम्हारा संकोच।"

वह भी हंस दी। उस हंसी से जैसे सोनाई के बाढ़ के पानी का खल-खल शब्द रुक गया।

"फर्ज करो, मेरा नाम गंधेला।"

"हिश, ऐसे आदमी का नाम गंधेला हो सकता है कभी ?"

"तो समझ लो मेरा नाम राजकुमार है।"

"ठीक से पूछ रही हूं। आपको इस तरह झूठ-मूठ का नाम बता कर क्या आमोद मिल रहा है ?"

"आमोद करने का अवसर फिर कहां मिलेगा ? अच्छा फर्ज करो मेरा नाम अर्जुन। लक्ष्य जिसका स्थिर।"

"इस आदमी को मुझे चिढ़ाने का अच्छा मौका मिल गया है !" इस बार वह और भी मुखर हो गया। नाटक के अभिनेता की तरह बोला, "अर्जुन फालगुनी सव्यसाची धनंजय। कीर्ति विभत्सु श्वेतवाहन विजय।"

"इन्हीं आठ नामों में से एक नाम ढूंढ़ निकालो। तुम्हारे लिए एक पहेली है।"

इतना कह कर वह घर के बाहर निकल आया। बासंती आंगन से ही जोर से बोली, "अच्छा बताओ विजय या धनंजय।" उसने उत्तर दिया, "मेरा नाम सव्यसाची क्यूं नहीं हो सकता, इसका क्या सबूत है ?" वह उसकी ओर बढ़ आया

और बोला, "इन तीन नामों में से कौन-सा पसंद किया ?"

"पसंद करने या ना करने की तो कोई बात ही नहीं है। जिस नाम से लोग आपको जानते हैं, बस वही नाम चाहिए। सव्यसाची नाम हमने तो सुना ही नहीं भई।"

"लोगों को मुझे किसी भी नाम से जानने की जरूरत नहीं। जो मुझे पहचानते हैं वह नाम न जानते हुए भी पहचान लेंगे। इसलिए तुम इन्हीं में से कोई नाम सोच लो। फर्ज करो मेरा नाम धनंजय।"

"नहीं हो सकता।"

"तो विजय।"

"हो, हो सकता है।"

"पर असल में मेरा नाम धनंजय ही है।"

"हिश, तो अब और आपका नाम नहीं पूछूगी। आप जो भी नाम बताएंगे उसी पर शक होगा।"

नहाने के बाद बाल बनाते समय बासंती यही सब सोच रही है। उसने परसों आने को कहा था। और वह परसों तो आज ही है।

वह चुपके से भाभी के सोने वाले कमरे में घुसी, और बड़ी सावधानी से कमरे का निरीक्षण किया। पर कहीं कुछ न मिला। आखिर में बिस्तर के नीचे एक पोटली दिखायी दी। उसने जल्दी से पोटली खोली और देखा कि उसके अंदर कुछ दवा की बोतलें बंधी हैं। बोतलें सब एक ही आकृति की हैं। ऐसी बोतलें होमियोपैथीक डाक्टर ही खरीदते हैं। कुछ बोतलों पर लिखा है पोलचेटिला 30, कुछ पर नक्सवैमिका और साथ एक नंबर। उसने पोटली पहले की ही तरह बांध कर रख दी। उसके कौतूहल का एक अंश तो पूरा हो गया। उसे ख्याल आया कि शहर से भाई के हाथ जो दवाएं लाने को कहीं थी, वह यही हैं।

इसका मतलब है, उसे आकर्षित करने वाला यह पहला पुरुष होमियोपैथी का डाक्टर है। फिर ख्याल आया तो उस दिन डाक्टरी बैग क्यों साथ नहीं था। फौरन सोचा उस तरह का बैग हाथ में नहीं लेते। साईकिल में जो खाकी रंग का बैग था उसी में शायद अपना डाक्टरी बैग रखते हों।

आज अनजाने बासंती का मन नाच उठा। सोनाई से आती हुई ठंडी हवा भी उसके बदन को ठंड नहीं पहुंचा पायी। एक अजीब उत्तेजना ने उसके खून का

संचार बढ़ा दिया। इस सर्दी में भी उसे बुखार जैसा पसीना आने लगा। दोपहर में वह पेट भर खाना भी नहीं खा सकी थी। एक आध ग्रास खाकर हाथ धो लिये। करीब आधे घंटे के बाद ही भूख लगने लगी, तो उसे याद आया कि वह बगैर खाये उठ आयी थी इसीलिए पेट खाली है।

शाम हो गयी। थोड़ी देर बाद ही वह आयेंगे। आज आने के लिए कहा है तो जरूर आयेंगे। मर्द आदमी की एक ही बात होती है। फिर जो इस तरह का इलाज करता है, उसकी जबान का मूल्य तो और भी अधिक है। सूरज डूबने के लिए ज्यादा से ज्यादा दो घंटे बाकी हैं। घर के सामने वाले सुपारी के पेड़ का साया बहुत लंबा हो गया।

उसका दिल अच्छे कपड़े पहनने को हुआ। लेकिन पहने नहीं। पहनने से दूसरों की नजर पड़ेगी। पूछेंगे कहीं जा रही हो क्या ? पर वह तो कहीं नहीं जा रही। अगर कहीं उसी समय वह आ ही पहुंचे तो ? इसलिए रोज पहनने वाले कपड़ों में से जो सबसे अच्छा जोड़ा था वही पहन लिया। जरी का काम वाला पीला ब्लाउज उसे आज ही पसंद आया। मुंह पर थोड़ा-सा 'हमानी स्नो' भी लगाया। फिर पाउडर लगाया। चेहरे की बनावट और रंग में काफी फर्क हुआ, आईना देखने से इसका पता लग गया। अपने मुखश्री की शोभा देखकर बासंती खुद ही विस्मित हुई। आईने के सामने दो-तीन बार विभिन्न भंगिमाओं में मुस्कराते हुए स्वयं ही तृप्त हो गयी।

भाभी कंघी ढूंढ़ते हुए उसी कमरे में आयी। उसे अपने मुंह का इतनी सावधानी से प्रसाधन करते देखकर भाभी ने पूछा, "कहीं जा रही हो क्या ?" वह बगैर झिझके बोली, "नहीं तो। मुंह कुछ सूखा-सूखा-सा लग रहा था इसलिए थोड़ा-सा 'हिमानी स्नो' लगा लिया।"

"जाना है तो कहो, मैं भी चलूंगी। रजीता बहुत दिनों से बुला रही है।"

"नहीं जाऊंगी। तबीयत ठीक नहीं है।"

"हां, यह तो थाली का खाना छोड़ते ही पता चल गया था। पेट खराब है क्या ?"

"नहीं, यूं ही भूख नहीं लग रही है। हां, भाभी तुझसे एक बात पूछना ही भूल गयी थी। बिस्तर के नीचे जो पोटली है, उसमें क्या रखा है ?"

"वह हमारी चीज नहीं है। धनंजय ने बड़े भाई को शहर से दवाइयां लाने को

कहा था। पोटली में वही दवाएं हैं।"

"अच्छा समझी। पर धनंजय का घर कहां है ?"

"पाभचिला में।"

उसने बातों ही बातों में बहुत-सी बातें निकाल लीं। तो उसका नाम धनंजय और उसका घर भी उसके अनुमान की जगह में ही है। उसे कई नाम बता कर, इस तरह उलझन में नहीं डालना चाहिए था।

उसी समय बड़े भाई कहीं से घर लौटे और अंदर आकर बोले, "दीवानखाने में दो कप चाय भिजवानी है।" यह सुनकर बासंती को यकीन हो गया कि धनंजय आया है। एक-दो बार झांककर वह धनंजय के बारे में निश्चित हुई। भाभी के आदेशानुसार उसने चूल्हे में आग जलायी। जब तक पानी गर्म नहीं होता, उन दोनों की बातें सुनी जायें तो कैसा रहे ? धनंजय बड़े भाई के साथ भला क्या बातें करते हैं। वह बेड़े के पास खड़े होकर उनकी बातें सुनने लगी।

बासंती ने धनंजय की आवाज सुनी, "इसका मूल कारण है, कर्ज देनेवाला महाजन ठग है। खेतीहर के खेती करने से क्या होगा ? सब लाभ तो वही ले लेते हैं। खेतीहर को उचित मूल्य पर अनाज बेचने का मौका ही नहीं मिलता।"

भोगराम की आवाज भी उसके कान में पड़ी, "पर यह लोग भी तो ऐसे ही हैं। यह लोग तो महाजन को ही हितकारी आदमी समझते हैं। उधर वह खटमल की तरह खून चूस रहा है, इसका उन्हें पता ही नहीं।"

फिर धनंजय की आवाज, "इसीलिए सोच रहा हूं कि इस बार पाभचिला में एक सहकारी समिति का गठन करना चाहिए। कारण, अगर अभी से जनता जागृत न हुई···।"

उसी समय भाभी ने बासंती को आवाज लगायी। वह रसोई घर पहुंच गयी। भाभी ने कहा, "पानी उबल रहा है। तुम्हीं बाहर जाकर चाय दे आओ। मेरे कपड़े मैले हैं।"

चाय देते समय बासंती धनंजय की ओर देख नहीं पायी। बड़े भाई के सामने उसकी ओर देखते हुए उसे कुछ संकोच हुआ। उसने भी उससे कुछ नहीं पूछा। फिर भी सारे दिन सज-धजकर उसने जो उसकी प्रतीक्षा की थी वह बेकार नहीं गयी, यही उसने सोचा।

दो

बासंती की मां सुजला अब काफी बूढ़ी हो गयी है। शरीर झुक गया है। बाल पक गये हैं। कफ या वात—एक न एक रोग बारह महीने लगा ही रहता है। बूढ़ी साल के हिसाब से अपनी उम्र नहीं बता सकती। सिर्फ कहती है, 'पिछली बार जो बड़ा भूकंप आया था, बस उसकी याद है।' उससे अनुमान लगाया जा सकता है कि उसकी उम्र चार कूड़ी पांच साल अर्थात—85 से ज्यादा है। दवा-दारू पर खर्च देखकर बूढ़ी कहती है, "क्यों मरे हुए हंस के लिए चटाई बिछाते हो? दांत गये, नख मर गये, शरीर पर झुर्रियां पड़ गयी हैं। एक-एक करके यह सब यमदूत के घर जाने की निशानी हैं। मुझे खुद भी जाने को, जाने कितने दिन बाकी हैं। पर लड़का और बहू बूढ़ी की बात पर कान नहीं देते। बीमार होने से फौरन ही दवा की व्यवस्था करते हैं। बूढ़ी भी सबकी कृतज्ञ है। बूढ़े तो हो ही गये हैं, एक आध साल में चले जायेंगे। यह सब तो अब बड़े हो चुके हैं। बूढ़ी न भी रहे तो घर चलता रहेगा। इसीलिए जब तक वह जोर से कराहती नहीं, घरवालों को उसकी बीमारी का पता नहीं चलता। बूढ़ी बोलती कभी नहीं। पर न बोलने से भी क्या होगा? बासंती और उसकी भाभी तरुलता को बूढ़ी से खास प्यार है। थोड़ी-सी भी बीमारी होने से ही वह दोनों बड़ी व्यस्त हो जाती हैं। आज करीब एक महीने से अर्थात अगहन शुरू होने के बाद से ही सुजला बूढ़ी चलने में डगमगा रही है। एक दिन लाठी के सहारे पान ढूंढ़ते हुए कणपायी के घर जा रही थी। पर कणपायी के घर पहुंच नहीं पायी, गलती से मणीपुरिया के घर के पास वाले कचरे के ढेर पर चढ़ गयी थी। मणीपुरिया का बैल बड़ा तेज और तीखे सींग वाला है। उसकी दुम को कोई हाथ नहीं लगा सकता। हल चलाने वाले के सिवा वह किसी की परवाह नहीं करता। हर किसी को सींग मार देता है। वह उसी समय कचरे के ढेर के पास कद्दू की बेल के पत्ते खा रहा था। बूढ़ी को पास आते देख कर वह उसकी ओर कूद पड़ा। सींग मार कैर बूढ़ी को गिरा ही दिया। अगर मणीपुरिया का लड़का लसंग न देखता, तो बैल बूढ़ी को कुचल ही डालता।

उस दिन के बाद से बेटा-बहू ने सुजला को बाहर निकलने से मनाकर दिया। फिर भी सुजला के साथ एक और घटना घट गयी। नारियल के पेड़ के नीचे बूढ़ी के स्नान के लिए एक बाल्टी पानी रख दिया जाता है। बूढ़ी अपने हाथों से टटोल

कर बाल्टी ढूंढ़ लेती है। कभी-कभी पानी के पास रखा लोटा या गिलास न मिलने की वजह से, हाथों से ही पानी उछालकर नहा लेती है। दो दिन बाद एक और दुर्घटना घटी। बूढ़ी घर के पीछे बाहर फिरने गयी थी। प्रायः आधे घंटे तक वापस नहीं आयी तो, तरुलता और बासंती चिंता में पड़ गयीं। घर के सारे कमरों में ढूंढ़ने के बाद भी नहीं मिली तो दोनों बागीचे की ओर गयीं और देखा कि बांस के पेड़ों के पश्चिम की ओर मिट्टी के टीले के अंदर जो चार हाथ गहरा गड्ढा है, बूढ़ी उसी में गिर पड़ी थी।

अब तो सबको पक्का विश्वास हो गया कि बूढ़ी आंखों से कुछ नहीं पहचानती पर भोगराम यह बात नहीं जानते हैं। व्यापार के सिलसिले में घूमते ही रहते हैं। चिड़ियां, परिंदे जितनी देर अपने घोंसले में रहते हैं, वह भी उतनी ही देर घर में रहते हैं। बांसती को मां पर गुस्सा भी आया। आंखों से नहीं दीखता यह बात मां को पहले ही घर वालों को बता देनी चाहिए थी। जब हर बीमारी का इलाज है तो आंखों से न दिखने की चिकित्सा की व्यवस्था क्यों नहीं हो सकती है? मां अगर गिरकर मर जाती तो उन्हें ही दोष लगता था?

लेकिन बासंती ने मां पर गुस्सा नहीं दिखाया। प्यार से पूछा, "मां तुम्हारी आंखों में दर्द होता है या खुजली होती है? नजदीक से भी नहीं दिखता क्या?"

मां ने बेटी की पीठ पर हाथ फेरकर कहा, "हां, कई दिनों से नजदीक की चीज भी दिखायी नहीं पड़ती। पर इसे मेरी आंखों की बीमारी कहने से ठीक नहीं होगा। उम्र हो गयी, आंखों में जाला हो गया है। इसलिए। और कोई नयी बात नहीं है। दांत गये, आंखें गयीं, हर चीज यमदूत के घर जाने की साक्षी है। जन्म-मरण विधि का लिखा है। डाक्टर कविराज हमारी तरह इंसान ही तो है।"

बांसती को मां की बात सुनकर बड़ा दुख हुआ। यही तो जीवन है। तब भी मनुष्य को कितना गर्व है। उसने मां के मुख की ओर एक बार देखा। मां का व्यथापूर्ण मुखमंडल जैसे उसके सारे जीवन का इतिहास कह रहा है। उसकी मां जीवित रही भी तो ज्यादा से ज्यादा और पांच साल। लेकिन अगर यह पांच साल भी पृथ्वी की किरण और सोनाई पार का प्रकृति का रूप न देखकर किस भरोसे और किस आवेग से जीवित रहेगी। मां को तो यह पता ही नहीं लगेगा कि सोनाई के वक्ष पर चमकती सूरज की किरणें कितनी सुंदर दिखायी देती हैं। उसने इसी

जननी के गर्भ में स्थान लेकर ही पृथ्वी की किरण देखी है। आखिर में उसने सोच कर यही निश्चय किया कि जब तक मां की आंखें ठीक नहीं होतीं उसे मरे समान ही समझना पड़ेगा। यह कभी नहीं हो सकता, यह कभी नहीं हो सकता। आज तीन दिन हो गये बड़े भाई घर नहीं आये हैं। दरगियांल गांव गये हैं। वहां एक बड़ा मेला लगा है। अनगिनत जनता गयी है। बाजार वगैरा लगा है। भोगराम भी वहीं तैयार कपड़े, जैसे बनियान, कमीज, ब्लाउज, शीमीज, कंबल इत्यादि बेच रहे हैं। बासंती ने भाभी को मां के बारे में अपना अभिमत दिया। तरुलता ने भी अपनी सहमती दी।

दोपहर को बासंती ने मां का बदन गीले कपड़े से पोंछते हुए कहा, "मां, मैं सोच रही हूं कि बड़े भाई आ जायें, तो उनसे कहूंगी कि तुम्हें एक दिन शहर ले जायें। वहां डाक्टर से तुम्हारी आंखों का जाला कटवा देने से तुम्हें फिर से पहले की ही तरह दिखायी देने लगेगा।"

मां सुजला को थोड़ी देर के लिए ही सही कुछ आनंद तो मिला। पूछा, "सच ! तुझे कैसे मालूम ?"

"पिछले भादों में मौसी के घर जाने से पता चला था। वहां योगेन मंडल नाम का एक पटवारी है। उनकी मां को भी आंखों की यही बीमारी थी। उसने शहर जाकर जाला कटवा दिया। उसके बाद से बूढ़ी को दिखने लगा। पर जाला कट-वाने के बाद ऐनक लगानी पड़ती है।"

बासंती ने देखा कि मां ने उसकी बातें ध्यान से नहीं सुनीं। जैसे वह फिर से दुखी हो गयी। सिर ऊपर उठाकर चितामग्न हो गयी। कुछ देर उसी तरह रहने के बाद एक उबासी लेकर बोली, "आंखों से देखना अच्छा अवश्य है लेकिन तुझे मेरी शपथ, बासंती, बड़े भाई के सामने यह बात बिलकुल न निकालना। वह दुखी होंगे। देख तो रही है कि वह इस महीने कितने खटे हैं। धूप में घूम-घूम कर उसके शरीर का रंग भी कितना काला हो गया है। ऐसे समय उसे मेरे लिए कष्ट नहीं करना चाहिए।"

"परंतु मैं कहे बगैर कैसे रह सकती हूं ?"

"मैं तो बूढ़ी हो गयी। ज्ञान भी लोप हो गया। अब तो मैं तुम लोगों का मुंह देख कर ही जिंदा हूं। तुम लोगों को अगर मेरे लिए कष्ट हो तो मैं कैसे जीवित रह सकती हूं ? मैंने तरु से भी कहा है, कि यह दो महीने भोगराम के सामने मेरी

आंखों की बीमारी के बारे में कुछ भी न कहा जाये। यदि तू कह देगी तो मैं मृत्यु जैसा दुख पाऊंगी।"

"बड़े भाई तो प्रायः शहर जाते रहते हैं। तुझे भी गाड़ी में ले जाने से कुछ भी असुविधा नहीं होगी।"

"परंतु शहर जाने से ही क्या सब ठीक हो जायेगा। कितना खर्च होगा। तू तो देख ही रही है कि हम लोगों को पालने के लिए उसे कितना कष्ट हो रहा है। कुछ उपाय नहीं सूझ रहा।"

कुछ दिनों के लिए बड़े भाई के सामने यह बात नहीं उठायेगी, कह कर बासंती ने मां को वचन तो दे दिया, पर उसका मन भारी हो गया। मां की एक बात पर उसे बड़ा ताज्जुब हुआ। वह खासी बूढ़ी हो गयी, आंखों से दिखायी नहीं देता, सदा चुपचाप रह कर अपने दिन बिता रही है। शरीर को कष्ट जरूर है, पर मन में तो कोई दुख नहीं है, बूढ़ी होने का कोई गम नहीं है। स्वामी के वियोग की यंत्रणा नीरवता व इज्जत के साथ वहन कर रही है। इसलिए बासंती अपनी मां की जवानी से लेकर अब तक के बीते हुए जीवन के बारे में जानना चाह रही है।

अपने ज्ञान और तजुर्बे से सीमित जीवन में बांसती कई जटिल प्रश्नों का सामना कर रही है। जीवन के प्रति उसका कौतूहल बढ़ रहा है।

रात में सोते समय वह मां से कई तरह के प्रश्न करती है और मां शीघ्र ही उसके सब भाव समझ लेती है, इससे बासंती को बड़ा विस्मय हुआ। मां ने उसे बताया कि वर्तमान अवस्था के लिए उसके मन में तनिक भी दुख नहीं है। मां को अपने जीबन में बहुत कुछ मिला। जीवन ने पूर्णता पायी। इसलिए अब कोई पछतावा नहीं रहा। जिसे बीते हुए दिन कुछ भी नहीं दे पाये उस अतीत के खोए हुए अवसर की बातों का स्मरण करने से उसके विकलांग जीवन का हर पल विषमय हो जाता है।

इन सब बातों को मां बड़ी सहजता से कह गयी और उनके जीवन बोध में कोई कृत्रिमता नहीं थी। बासंती ने इस बात को अच्छी तरह अनुभव किया था। इन्हीं सब बातों से उसे जिंदा रहने का भरोसा मिला।

छंदमय, गतिशील जीवन में बहुत-सी घटनाएं ऐसी होती हैं, जो हलचल मचा देती हैं। जीवन में नये रंग आ जाते हैं किंतु काल उसे भूल जाता है। काल यौवन वासना को क्षमा नहीं करता। पुरखों से बहती आ रही सोनाई बासंती को प्रति-

दिन यही कहती है। अलिखित भाषाओं से सोनाई अपने कल-कल स्वर से, बहुत-सी बातें कहकर बासंती का मन वहलाती है। एक अवर्णनीय माध्यम से वह यह सब समझ लेती है। वह समझती है प्रीत की बात, जीते हुए जीवन की बात और जीवन की, नश्वरता की कथा। इस सोनाई के वक्ष में कितनों की प्रीत पनपी है और न जाने कितनों की प्रीत इसी सोनाई की झिलमिल लहरों में लीन हो गयी। और न जाने कितनों की प्रीत नये रूप में इसके हवा-पानी से अंकुरित होगी ? उसने सोनाई के शांत श्यामल प्रकृति के बीच सहज नूतन रूप में धनंजय को देखा। उसमें नयी चेतना का उन्मेष हुआ। उसने समझ लिया वह जवान हो गयी। अपने को किसी पर निछावर करने और दिल से प्यार करके ग्रहण करने का समय आ गया है। धनंजय फिर उसके घर नहीं आयेंगे क्या ? शायद ये दस दिन वह पाभचिला में न हो ? आये भी तो अलग से मिलने का अवसर नहीं मिलेगा क्या ? सोनाईपरिया भैंस ग्वाले ने बांसुरी बजायी। मन व्याकुल करने वाले इस सुर ने उसके ठनुआ घाट को अभी सजीव कर दिया। कलस में पानी भरते समय उसके दिल में बिजली चमक गयी। अकारण ही वह सोचने लगी कि धनंजय अचानक ही एक दिन पहले दिन की तरह आ पहुंचेगा। वह उससे प्यार की बातें करेगा।

मां की दोनों आंखें अब तक अच्छी हो सकती थीं, किंतु उसने मां के आदेश का उलंघन न करके भोगराम से कुछ नहीं कहा है। और कहने का मौका भी नहीं मिला। वह आजकल दिन भर घर में रहते ही नहीं। सोमवार प्रातः ही दस मील साईकल चलाकर शहर पहुंच जाते हैं। कैरियर पर भारी बोझ लादकर रात ही वापस लौटते हैं। शहर से खरीदे हुए माल के बोझ को वह किसी को हाथ नहीं लगाने देते। पोटली में उनके व्यापार का सामान रहता है। जैसे कमीज, कम दाम वाली धोती, एक आध बंडल सूत, छोटे बच्चों के कपड़े फ्राक, आदि और मारकीन कपड़े का छोटा वाला थान, नहीं तो दो-एक सस्ते कंबल, मंगल की सुबह यह सब चीजें साईकल से जाजोरी हाट ले जाते हैं और बेला डूबने के बाद ही घर आते हैं। बुध को फिर उसी काम के लिए शहर जाते हैं और शाम के समय ही घर आते हैं। पिछले दिन का लाया हुआ माल बृहस्पत को दलंग घाट बाजार में बेचते हैं और हांफते-हांफते जब घर पहुंचते हैं तो सूर्य अस्त होने वाला होता है। शुक्रवार को फिर शहर जाते हैं और शनिवार को अपने व्यापार का सामान फुलगुड़ी हाट में बेचते हैं। फुलगुड़ी में बहुत बड़ा हाट लगता है। सारा दिन वहीं रहते हैं।

इसीलिए शनिचर को वह गोधूली के बाद ही घर पहुंचते हैं। उनको कितना कष्ट, वही हैं कि इतना दुख सहन कर रहे हैं। इतना कष्ट न करें तो और कोई उपाय भी तो नहीं। घर के इतने सब लोगों को किस तरह पाला जाये ? खेती वाली जमीन तो सिर्फ तीन 'हालिसा' (बीघे से कम), एक पतीली सब्जी में जैसे एक मिर्च का दाना। इस तरह व्यापर न करें तो घर का दिवाला निकल जायेगा। उनके खाने, सोने का कोई समय नहीं है। दिन में भी भात खाने का कोई समय नहीं है। सुबह भूख लगने से पहले ही उन्हें भात खाना पड़ता है और जब वाकई में भूख लगती है, तब शायद वह बाजार में होते हैं। अनियमित होने के कारण से आजकल उन्हें पित्त हो रही है। जेब में सोड़े की पुढ़िया लिये फिरते हैं। बड़े भाई का कष्ट देखकर बासंती को उन पर बड़ी दया आती है। उन लोगों के पालने के लिए उनकी कैसी अप्राण 'चेष्टा'। मां ने ठीक ही कहा था, "यह कुछ महीने उसके लिए बड़े कष्ट के दिन हैं। मेरे बारे में बताने से तो उसका कष्ट और बढ़ जायेगा।" इतना खटने बाद भी रुपये-पैसे का अभाव क्या वह दूर कर पा रहे हैं ? लाभ के पैसों से किसी तरह जोड़ा ताली करके घर चला रहे हैं।

तब भी बासंती मां के बारे में, बड़े भाई को कहने के लिए अवसर की ताक में है। कहने के लिए कोई मौका ही नहीं मिला। वह इस तरह थक कर घर आते हैं, कि उनको कहने के लिए दिल नहीं होता। तदुपरांत वह कभी-कभी गुस्से में रहते हैं। शायद उन दिनों व्यापार में घाटा होता है। घर में जो थोड़ा समय रहते हैं, अपनी छोटी-सी नोटबुक में कुछ न कुछ लिखकर बड़े ध्यान से औने-पौने का हिसाब करते रहते हैं। उस समय उन्हें आवाज देते हुए भी डर लगता है।

परंतु भोगराम की नजर भी कम नहीं है। घर में कम समय रहते हुए भी, वह मां की ओर लक्ष्य किये बगैर नहीं रहे। मां एक दिन टीले के पास वाले गड्ढे में गिर पड़ी थी, यह उन्हें नहीं मालूम। किंतु मां की दृष्टि-शक्ति पहले जैसी नहीं रही, यह बात उनकी व्यवसायी तीक्ष्ण बुद्धि और सूक्ष्म दृष्टि से वह समझ रहे थे। इसलिए बासंती और तरुलता को यह बात छिपाये एक पखवाड़ा भी नहीं बीता था कि उन्होंने स्वयं ही पता लगा लिया। खाना खाते समय उन्होंने बासंती और तरुलता को गुस्से से कहा, "मैं जानता हूं कि, अम्मा मुझे नहीं बताती है। समझती है, चिकित्सा कराने में मुझे तकलीफ होगी। लेकिन तुम लोगों ने मुझे क्यों नहीं बताया ?"

तरुलता चुप रही। बासंती ने ही उन दोनों का दोष स्वीकार किया। आखिर में भोगराम ने कहा, दो दिन बाद वह बैलगाड़ी में मां को लेकर शहर जायेंगे। यह पटसन बेचने का समय नहीं है, इसलिए अपनी गाड़ी के चक्के खोल कर रख दिये हैं। गाड़ी में बैठने वाली मयान भी खराब है। इसीलिए उसने लदर के घर की गाड़ी और एक गाड़ीवान की भी व्यवस्था कर ली है। वह अस्पताल और डाक्टर के बारे में कुछ नहीं जानता, इसलिए धनंजय को भी साथ ले जायेगा। उसने भी जाने का वचन दिया है।

गोरु गाड़ी का मयान धान पुआल, डालकर नर्म कर दिया गया है। चटाई के साथ एक तकिया भी रख दिया है। बूढ़ी गाड़ी में चढ़ी। पहले वह अड़ गयी थी कि नहीं जाऊंगी। बड़ी जिद्द और मनाने के बाद ही बूढ़ी को लेकर वह लोग शहर जाने को निकले।

धनंजय होमियोपैथी की चिकित्सा करते हुए भी, शहर के बहुत से लोगों से उसका परिचय है। बहुत से डाक्टरों को वह जानता है। उसने सरकारी अस्पताल में बूढ़ी को दिखाया। जिस दिन बूढ़ीकी आंखोंके जाले काटे गये, उस दिन डाक्टर ने घर जाने की आज्ञा नहीं दी। इसलिए गोरु गाड़ी में भोगराम अकेले ही घर वापस आया। कारण अगर वह शहर में तीन चार दिन रह जाये, तो व्यापार में बड़ा नुक्सान होगा। अगर वह बृहस्पत और शनिवार को हाट न करे, तो हफ्ते के लिए घर चलाना ही कठिन है। भोगरामके अनुरोध से धनंजय ही बूढ़ी के साथ रह गया।

आंखों के जाले काटने के बाद, बूढ़ी की आंखों पर तीन-चार दिन पट्टी बंधी रही। चार दिन बाद घर जाने की आज्ञा मिल गयी। उधर बासंती के दिल में कई लहरें उठीं। धनंजय भी काफी व्यस्त आदमी है। तब भी वह उसकी मां के साथ शहर में चार दिन रह गया। इसका कारण यही है क्या कि वह परोपकार करके खुश होता है! यदि वह इतना ही निःस्वार्थ है, तो वह मनुष्य नहीं देवता है। लेकिन उसका मन इस तरह से सोचने के लिए सहमत न हुआ। इसका कारण यह भी हो सकता है कि धनजय बड़े भाई और मां को इस अवसर पर अपना बना कर, उसके साथ मिलन का पथ सहज कर रहा है? यह प्रश्न उसके मन में आते ही, कई तरह के भावों की एक लहर दूर तक उड़ती हुई रूई की तरह फैल गयी।

एकांत में गोपन मन के साथ मित्रता करके, वह पुलकित हो गयी। उसने एक अनजान सिहरन का अनुभव किया। घर आकर बूढ़ी मां दो दिन चुपके से रही। कुछ दिन बाद आंखों की पट्टी खोल दी गयी। बूढ़ी चीजें पहचानने लगी। भोगराम और धनंजय ने बूढ़ी को दृष्टि-दान दिया।

बूढ़ी को शहर ले जाने वाले दिन धनंजय और ही तरह से व्यस्त था। बासंती चाय देते समय उसके मुंह की ओर सीधे देखकर मुस्करा दी। बस इतना ही। पर उसने उत्तर में उससे भी अर्थपूर्ण मुस्कराहट से उसका स्वागत किया था। एक सुंदर लड़की को अपने रूप पर स्वाभाविक विश्वास होने के कारण सारी युक्तियों से धनंजय के व्यक्तित्व की मूल विशिष्टताओं को छोड़कर, उसने घमंड से सोचा था, बूढ़ी के लिए धनंजय की यह सब व्यस्तता किस लिए। केवल क्या बूढ़ी की असह्य हालत की ही वजह से धनंजय ने यह ममत्वबोध और उदारता दिखाई है? उसका सबसे बड़ा कारण, शायद बासंती की बूढ़ी मां ही लगती है।

बूढ़ी जिस दिन शहर से आयी, उस दिन धनंजय भी आया था। बूढ़ी को लेकर शहर में उसे कैसी तकलीफ हुई थी, वह सब उसने विस्तार से भोगराम को बताया था। बासंती उस समय वहीं खड़ी थी। मंत्रमुग्ध होकर उसकी बातें सुन रही थी। उसके बात करने का ढंग भी बड़ा मोहनीय है। वह कितनी अच्छी तरह से बात कर सकते हैं और आवाज भी मर्दानी है। आदमी भी काफी सयाना है। बासंती को उसकी बातों से पता चल गया कि शहर में उसका कितना प्रभाव है।

उस दिन शाम को ही वह लोग घर पहुंचे थे। इसीलिए रात को खाना खाने के लिए धनंजय को ठहरा लिया था। बासंती ने उसके लिए बाहर के कमरे में बिस्तर भी लगा दिया था।

धनंजय ने ही उस दिन उसे बुलाकर पहले बातचीत शुरू की थी। उसने कहा था, "बासंती आज से लेकर मैं अब तक, तुम्हारे घर पांच बार आ चुका हूं। पर तुमने अब तक मुझे किसी संबंध से बुलाया ही नहीं, कुछ पूछने से भी बड़े कष्ट से उत्तर देती हो। मैं क्या 'गोरियों' (स्थानीय मुसलमान) के घर गुसांई आया हूं?"

बासंती ने कुछ भी जवाब नहीं दिया और उसके मुंह की ओर देखकर, रुक-रुककर हंसती रही। हंसते समय उसके दोनों गालों में दो प्यारे गड्डे दिखायी दिये

थे। वह बड़ी आकर्षणीय लग रही थी। जवान लड़की की स्वाभाविक बुद्धि से, वह समझ गयी थी कि वह शिकायत करने के लिए यह सब नहीं कह रहा था। वह तो उससे बात बढ़ाने का उपाय ढूंढ़ रहा था। वह तो शायद उसके मन की बात व्यक्त कराना चाह रहा था, अथवा बात करके अपने प्रति आसक्त करना चाह रहा था। क्योंकि जवान लड़की के सामने हर पुरुष भेड़िया बन जाता हैं और कोई-कोई अति गंभीर आदमी भी ऐसे खास मौके पर वर्षा के मोर की तरह नाचने लगता है। तब पुरुष का दृढ़ कठोर मन भी डावांडोल हो जाता है।

बासंती ने जवाब तो नहीं दिया, तब भी उसके साथ बात करने की इच्छा दमन नहीं कर पा रही थी। वह पूछने लगी, "आपको दूसरों के लिए खटकर इतना अच्छा क्यों लगता है?" उसके बाद अचानक ही उसके मुंह से निकल पड़ा, "आप कितने अच्छे हैं।" वह बड़े मनःयोग से उसकी बातें सुन रहा था और उत्तर देने के लिए कुछ देर चिंतित-सा दिखायी दे रहा था। धनंजय ने धीरे-से कहा था, "सुनो बासंती, इंसान सदा सब काम अपनी भलाई के लिए ही नहीं करता है। अपना स्वार्थ गोपनीय रखकर दूसरे का उपकार करना अब इंसान ने सीख लिया है।"

उसी समय अंदर से बड़े भाई की आवाज सुनायी दी। बासंती को बुला रहे थे। वह फौरन भाई के पास पहुंच गयी। भाई ने कहा, "मेरे कमरे की अलगनी पर एक धोती टंगी है। भाई साहब को बदलने के लिए दे दो।" भाभी उस समय रसोई में खाना बनाने में व्यस्त थी। बासंती धनंजय के पास जब धोती रखने गयी थी, उस समय वह उसके बहुत करीब खड़ा होकर धीरे से कहने लगा, "अच्छा बासंती, दिन में अवकाश के समय कभी कुछ नहीं सोचती हो क्या?" बासंती निरुत्तर रही। उसने दोनों हाथों से मुंह ढांक लिया और काफी देर तक निश्चल खड़ी रही। उसने अपने स्वर में मिठास घोलकर कहा, "तुम बड़ी अच्छी लड़की हो और इसीलिए मेरी पूछी हुई बात का सीधा उत्तर नहीं दे पा रही हो। यह बात मैं समझता हूं। और एक तरह से मुझे उत्तर भी मिल गया है।"

यह बात सुनने के बाद बासंती उसके नजदीक खड़ी नहीं रह पायी। कुछ भी न कहकर रसोई की ओर चल दी। उसका दिल जोरों से धड़क रहा था।

धीरे-धीरे बासंती को धनंजय के सामने जाने का संकोच दूर हो गया। कारण घर के सभी लोग उसकी प्रशंसा में पंचमुख हो गये थे। मां कहती है, "यह किसी

जन्म में मेरा बेटा होगा। पहले सोचती थी कि, "मेरा सिर्फ एक ही बेटा है। पर अब धनंजय बाबू भी मेरा लड़का ही है।" भाई कहते हैं, "धनंजय जैसा नौजवान विरला ही होगा। उसकी तरह अगर मैं भी उतना ही उदार हो सकता तो, ऐसे लोगों के संपर्क में आना भी बड़े भाग्य की बात है।"

बासंती यह सब सुनकर बड़ी प्रसन्न होती है। धनंजय के साथ उसे बड़ा अपनापन लगता है। जवान होने के पांच साल बाद हठात् अपने मन और आकांक्षाओं में परिवर्तन देखकर, वह आशा-निराशा से प्रायः चौंक उठती है।

तीन

पाभचिला के सब लोग धनंजय को पसंद करते हैं। धनंजय किस तरह का आदमी है, यह भी सब जानते हैं। किंतु वह कहां का है, और कहां से आकर यहां बस गया है—यह सब कोई कुछ नहीं जानता। तब भी पाभचिला के लोग उसे अपने गांव का ही एक समझते हैं।

सन पचास में जो भूचाल आया था, उसी समय वह कहीं से यहां आ गया था। उसमें बहुत सारे गुण हैं। सबसे मीठी बात करना जानता है। विपदा में उसी की सलाह काम आती है। उधर वह होमियोपैथी का डाक्टर भी है। लोगों को उस पर असली डाक्टरों से भी ऊंचा विश्वास है। रोगी का मुंह देखकर, बीमारी का अता-पता समझ लेता है। उसके आने के बाद से गांव में काफी उन्नति हुई है। उसके बिना माध्यमिक स्कूल इतनी जल्दी बन नहीं पाता। पाभचिला से बोरबोरी तक जो सड़क बनी है, उसके लिए उसने ही सबके हस्ताक्षर जमा करके, सरकार के साथ कितनी लड़ाई की। सुनकर हैरान होना पड़ता है। पाभचिला में एक पशु-चिकित्सालय बनाने के पीछे भी उसी की चेष्टा थी, इस बात से आम लोग इंकार नहीं कर सकते। अब वह एक सहकारी समिति खोलने के लिए जनमत तैयार कर रहा है। उसकी चेष्टा न होने से, किसान को, सरकार की ओर से, इतनी अच्छी खाद और बीज वगैरा नहीं मिल सकते थे।

सन पचास के किसी एक महीने में धनंजय अचानक पाभचिला आ पहुंचा। गांव के कई लोगों के पास उसने नम्रता से बताया कि वह उत्तरी असम के किसी

शहर से आया है। वह सरकारी नौकरी से त्यागपत्र देकर यहां आया है, रोजगार का रास्ता ढूंढ़ने। वह मैट्रिक पास है। उसके अलावा वह होमियोपैथी की चिकित्सा भी जानता है। लोगों ने पाठशाला के पास कूड़ा डालने वाली जगह पर एक घर बना दिया।

उसके बाद उसके आचरण से गांव वाले मोहित हो गये। वह होमियोपैथी चिकित्सा करके भी पैसा कमाने लगा। होमियोपैथी दवा की कीमत भी कम है। सोनाईपरिया गरीबों के पास इससे ज्यादा कीमती डाक्टरी दवा खरीदने के लिए साधन नहीं है। तदुपरांत बाल-बच्चे और बीमार स्त्रियों के लिए होमियोपैथी दवा ही असली चीज है। पर धनंजय केवल होमियोपैथी की ही चिकित्सा करता है, यह सोचना गलत होगा। दवा और पथ्य देने में वह चिकित्सा-शास्त्र का, जाति-कुल का, विचार नहीं करता। वह मूलतः होमियोपैथी की चिकित्सा करते हुए भी, मलेरिया बुखार में कुनैन ही देता है। खांसी में च्यवनप्राश खाने को देता है। रोगी दुर्बल हो तो सारीबादी सालसा देता है। कुल मिलाकर हस्पताल का न होना और कीचड़ पानी में धंसकर डाक्टर के न आने वाले के इस मुकाम में, धनंजय ही एकमात्र चिकित्सक···असहाय का सारथी।

जनता ने जिस स्थान पर उसे घर बनाकर दिया था, वह जगह उसने सुंदर बना ली है। जमीन का वह टुकड़ा धुलाराम सैकिया का था। उसने धन देकर, वह टुकड़ा खरीद लिया और अपने नाम का मियादी पट्टा बनाकर साबक कर लिया। चार कमरों का एक मकान बनाया। एक कमरे में रोगियों की परीक्षा के लिए अलग इंतजाम किया। धीरे-धीरे उसने स्टेथ्सकोप, अलमारी और साईकिल खरीद ली। माध्यमिक स्कूल का हेडमास्टर बनने के लिए इस साल लोगों का बड़ा अनुरोध था। उसने यह अनुरोध का सविनय प्रत्याख्यान करते हुए बोला, "एक हाथ से दो 'शोल' (एक तरह की लंबी मछली) नहीं पकड़ी जा सकतीं।"

अब तक वह जनता की सेवा करता रहा। एकांत में चिकित्सा की पुस्तकें पढ़ता रहा। रोगियों के लिए खटकर, आत्मसंतुष्टी लाभ करता रहा। पुराने दिनों की असहनीय घटनाओं की याद, अब उसके मन को सता नहीं सकती थी। उसके जीवन को एक गति मिल गयी। उसको जीने का अर्थ मिल गया। कल बासंती के पास से वापस लौटने के बाद, उसने जिंदा रहने का एक और गहरा अर्थ खोज लिया। तो भी उसे बड़ी सख्त परेशानी हुई। उसमें पहले जैसी आत्म-

संतुष्टी, मन:योग और वास्तव को निराशक्त तरीके से ग्रहण करने की क्षमता सहसा शिथिल हो गयी। गोपन में नाना प्रकार के रंगके भाव उसके मन में उभरे। आशा, आकांक्षा बढ़ी। स्वयं को समझने का प्रयत्न किया। उसके मन में बहुत सारे प्रश्न उठे। प्रकृत सुख कहां है? शंकर् गुरु ने कहा है, "हरी भक्ति में, हरी को किंकर समझकर, उसमें अपने को समर्पण करने में।" स्वामी जी कहेंगे, "मानव सेवा में। दरिद्र नारायण की पूजा में।" उसके मन में बड़ा अनुताप। उसे यदि आगे पढ़ने-लिखने का सुयोग मिलता था तो! अब भी अगर पुस्तक पढ़ने की सुविधा होती तो! तब उसे अपने कितने सारे प्रश्नों के उत्तर मिल जाते। हो सकता है उत्तर आंशिक ही हों। जीवन के इस विहंगम खेल में शायद किसी का भी सनातन समाधान नहीं है। तथापि वह लोगों का हित साधन करके सुख पा रहा है। यह सुख आत्मव्यापी है। यंत्रणाओं ने उसके सुख की अनुभूति का ज्ञान बढ़ा दिया है।

आज वह कल की बात सोचकर ज्यादा सचेतन हो गया है। बासंती को उसने अपने मन की बात कहकर, कहीं गलती तो नहीं की? निश्चय ही नहीं की है। उसने कितना अच्छा उत्तर दिया। शायद वह वही जवाब देने के लिए दिन गिन रही थी।

अपने को समझने के लिए उसने पहले की कई घटनाओं का सहारा लिया। दो छोटी-सी घटनाएं। एक बड़ी ही तात्पर्यपूर्ण। पाभचिला के सरुकण को सन्नीपात ज्वर हुआ था। चौदह दिनों बाद बीमारी ज्यादा गंभीर हो गयी। वह उस दिन रोगी के पास था। पहली रात रोगी बड़बड़ा रहा था किंतु दो खुराक देने के बाद उसे नींदआ गयी थी। उसकी पत्नी हल्की होकर पास ही सो रही थी। पत्नी जवान थी। असावधानी से अचानक नींद आ जाने से, उसके शरीर का कपड़ा इधर-उधर हो गया था। दीये की धीमी रोशनी में उसके सुगोल-शुभ्र लोभणीय ऊरुप्रदेश और आधे ढके वक्षस्थल ने उसे अनमना कर दिया था। कामना की अशांत वाहिनी ने उसे दहन कर दिया था। वह सोच रहा था, यदि वह अब उसका हाथ पकड़ ले और दीया बुझा दे, तो वह निश्चय ही उसकी इच्छा पूर्ण करेगी। यह चिंता उसके मन में हर पल प्रबल हो रही थी। वह यह भूल गया था, सोनाई के उत्तरी पार केंद्र करके बना हुआ उसका उभरता हुआ भविष्य और उसकी सामयिक ख्याति···किंतु हठात एक अनजानी शक्ति ने उसमें बाधा डाली। उसने

सोचा था यह असहाय औरत। उसी के लिए उपाय विहीन होकर, शायद अपनी देह संभार अर्पण कर देगी। समर्पण के विनिमय में शायद सोचेगी, सरुकण को जिंदा रहना है और जब सरुकण स्वस्थ हो जायेगा, तब वह चुपचाप आजीवन धनंजय के लिए घृणा पालेगी। एक औरत की घृणा उसका सारा जीवन कलुषित कर डालेगी। यह नीति का प्रश्न है। अपनी लोकप्रियता का फायदा उठाकर वह हीन नहीं हो सकता। मन और इंद्रियों का दमन करके, वह धीरे से रोगी के पास से चला आया था। दूसरे दिन गांव के सबसे बड़े बुजुर्ग आदमी श्रीधर बायन के पास गया था। बायन की उम्र अस्सी के करीब। गांव के लड़ाई-झगड़े वही सुलझाते हैं। ज्ञानी व्यक्ति हैं। उसने बायन से कहा था, "बापू! मैं सोच रहा हूं, कुछ महीनों के लिए इन सब कामों से अलग हो जाऊं। मुझे अपने प्रति अश्रद्धा हो रही है।" बायन ने विस्मृत होकर कारण पूछा था। उसने बड़े आवेग से कहा था, "लोगों ने मुझे इतना प्यार करके गलती की है। मुझे देवतुल्य समझकर और गलती कर रहे हैं। इंसान आखिर इंसान ही है। मनुष्य देवता नहीं हो सकता।" उसकी इच्छा एक और बात कहने की थी कि, उसके अंदर भी एक जहरीला सांप छिपा है। किंतु वह ऐसा कह नहीं पाया। वह क्या कहना चाह रहा था, श्रीधर बायन ठीक से समझ न पाये, फिर भी उन्होंने बहुत-सी अच्छी बातें कहकर उसका मनःताप कुछ कम किया।

अब उसे समझ में आया था कि बासंती को अपने मन की दबाई आकांक्षा की ओर इंगित कर, उसने कोई गलती नहीं की है। इंसान को जीवित रहने के लिए और भी कुछ चाहिए। थोड़ा-सा कामसीत्त अनोखा-प्यार। और बासंती भी उसे प्यार करती है, यह बात उसकी आंखें कहती हैं, मुंह से पता चलता है, देह भंगिमा कहती है। तदुपरांत वह तो उसे लेकर घर बसाएगा।

दोपहर में वह सोनाई पार कर, दक्षिण पार पहुंचा। साईकल साथ नहीं लाया था। बासंती के घर जाने में उसे संकोच हुआ। पहले भोगराम के घर जाने में और अब के जाने में बड़ा फर्क है। उसने सोचा, अब उनके घर जाने से उसे ऐसा लगेगा, जैसे घर की दीवार का हर छेद, आंख कान बनकर उसकी ओर ही लक्ष्य करते रहेंगे! सोनाई के किनारे-किनारे चलते वह ठनुआ घाट पहुंच गया था। अचानक वह चौंक गया। उसने इतनी आशा नहीं की थी। घाट के पास केले के पेड़ों की छाया में, गाल पर हाथ रखे बासंती कुछ सोचती हुई अनमनी बैठी थी।

उसने आवाज दी, "बासंती !" वह चौंककर हठात खड़ी हो गयी। बोली, "ओ, आप हैं।"

धनंजय ने आदेश के सुर में कहा, "बैठो।" वह बैठ गयी। उसने कहना शुरू किया, "तुमसे कुछ बातें करूंगा। यही सोचकर आया हूं। न कहने से मुझे शांति नहीं होगी। मैं बहुत अकेला हूं और यह बड़ी अजीब बात है कि तुम्हारे सामने कुछ दुख की बातें कहकर मुझे अच्छा लगेगा।" इतना कहकर वह खुद भी बैठ गया। भरी दुपहरी का समय सोनाई का पार बड़ा सूना-सूना होता है। दूर से गंगा चील की आवाज बहती आ रही है। नीरवता और मुखर कर रही है। बहुत करीब मछलुका चिड़िया (किंग फिशर) भी बोल रही है। हल्की-सी हवा से ही उस पार का 'कहुआं बन' (नदी पार की ऊंची घास) कांप रहा है। पश्चिम के क्षितिज में दो-एक नौकाएं लकीर की तरह विलीन हो रही हैं। नौजवान लड़के और लड़की के तरुण हृदय कांप रहे हैं। वह लोग अपने में ही मगन हैं। धनंजय कह रहा है, "बासंती, अब तक तुम यह नहीं जानतीहो कि मैं कौन हूं ?" बासंती ने कहा, "और ज्यादा जानना क्या जरूरी है ?" उसने बड़ी शांति से अपना दुखड़ा उसे सुनाकर मन का बोझ हल्का किया।

"बासंती, तुम शायद जानती नहीं हो कि मैं, इस तरह समाज का काम करके अपने को भुला रखने का एक उपाय मात्र है।"

"यह कैसे हो सकता है ?"

"सच कह रहा हूं। बहुत दिनों बाद सच कहने से हल्का लग रहा है। मैं गांव वालों को जो भी कहता हूं, वह विश्वास कर लेते हैं। सोनाईपरिया लोग इतने सरल ! इसीलिए यह जगह मुझे अपने जन्म स्थान जैसी लगती है। उन्होंने मुझसे पूछा नहीं। मैं क्यों अपने घर से दूर हूं, मेरे परिवार में कौन है ?"

"कहते जाओ।"

"हां, मैं अपना जीवन तुम्हारे सामने रखता हूं। तब शायदतुम्हें मेरे ऊपर दया आयेगी। शायद इसलिए तुम भी मुझे कभी भूल नहीं पाओगी।"

"ऐसा क्यों कह रहे हो ? मुझे क्या कष्ट नहीं होता।"

"यह सुनकर अच्छा लगा है बासंती, बहुत अच्छा लगा।"

बासंती की दोनों आंखें गीली हो गयीं। धनंजय की आवाज कांपती-कांपती अस्थिर और विनती से भरी हुई थी।

बासंती ने उसके वक्ष का आश्रय लिया। वह बीच-बीच में उसकी नर्म उंगलियों का स्पर्श करता और कभी उसके मुलायम बालों को सहलाते अपने बीते हुए जीवन की कहानी सुनाता रहा।

लखीमपुर के किसी गांव में उसका घर है। पिता की मृत्यु बचपन में ही हो गयी थी। ताऊ के घर में रहकर मां ने उसे और उसकी बहन को बड़ा किया। गरीबी की हालत में भी दूसरों के घर नौकरी करके मां ने उसे हाई स्कूल की दो-तीन श्रेणी तक पढ़ाया। किंतु मां भी ज्यादा दिन जीवित नहीं रही। ताऊ बहुत अच्छे आदमी नहीं थे। धीरे-धीरे वह उसे और उसकी बहन को सहन नहीं कर पाये। बात-बात पर ताना देने लगे। उसे स्कूल छोड़कर चरवाहा बनना पड़ा। बहिन भी नौकरानी की तरह दिन बिताने लगी। मन के दुख से वह लोग कितने दिन खाना भी नहीं खा पाये। इसका किसी को पता नहीं लगा। कितनी ही रातें उन्होंने रोकर जागते गुजारीं, पर इससे भी किसी का दिल नहीं पसीजा। उधर ताऊजी अपने बच्चों को बड़े ऐशो-आराम से पालते। उनका खाना-पहनना धनंजय और उसकी बहन से अलग था। बड़े होकर उसने यह सब समझा और एक दिन श्मशान में जहां मां को जलाया था, वहां जाकर चिल्लाकर रोया और अपने मन की बातें कहीं। श्मशान के गंभीर और खौफनाक वातावरण ने उसकी वेदना को और असहनीय कर दिया। किंतु भगवान उसके प्रति दयालु न हुआ। स्वर्गवासी मां की आत्मा ने यदि उसे आशीर्वाद दिया, तो भी उस आशीर्वाद का कोई तत्कालीन फल न मिला। छोटी बहन मनतरा के ऊपर बड़ी मां का अत्याचार दिन-ब-दिन बढ़ता ही गया। एक दिन घर आकर उससे अपनी बहन का दुख देखा नहीं गया। एक दिन उसने चुपके से मनतरा से कहा, "मैं एक दिन इन लोगों को दिखा दूंगा, घर छोड़कर चला जाऊंगा। यह लोग मुझे घर में रहने के लिए नहीं कहेंगे, मैं यह बात जानता हूं। कहीं जाकर नौकरी कर लूंगा। तुझे नियमित रूप से पैसे भेजूंगा। तुम इन लोगों का दबाव न मानकर खुशी से रहना। मेरी हालत थोड़ी-सी अच्छी होने से तुम्हें ले जाऊंगा और एक दिन निर्भय आकर, अपनी जमीन जायदाद का दावा करूंगा। नहीं देंगे तो अदालत में जाऊंगा।" मनतरा ने भी उसकी बात में हां मिला दी।

उसने घर छोड़ दिया। पहले आकर डिब्रूगढ़ में एक चाय दुकान में रहा और नौकरी ढूंढ़ने लगा। इस तरह दो महीने बिना फल के गुजर गये, फिर भी उसके

मन का बल बढ़ता ही गया। एक कुड़ी रुपये जेब में लेकर वह फिर घर आया। उसका मन चाय दुकान में फिर से नौकरी करने का नहीं था। उसे देखकर ताऊजी ने कोई हमदर्दी नहीं दिखायी। सिर्फ बीबी को सुनाकर कहा, "यह कहां जायेगा। इसमें कितना दम है मैं नहीं समझा था क्या। ओ, समझा यह बाप की जमीन का भाग लेने आया है।" घर में और किसी ने बात नहीं की। ताऊजी का लड़का नरेन उसी के बराबर का है, उसने भी देखकर मुंह फेर लिया। सिर्फ मनतरा ही उसे पकड़कर दिल भरकर रोयी। पर वह चुप रहा। हद से ज्यादा कठोर हो गया। मनतरा के हाथ पर पंद्रह रुपये रखकर कहा, "मन, इससे एक जोड़ा अच्छे कपड़े बनवा लेना।" यह कहकर,उसकी बात न सुनकर,वह सिर्फ पांच रुपये के संबल पर जीवन संग्राम के लिए, करुणाहीन पृथ्वी पर निकल पड़ा। इस बार वह डिब्रूगढ़ नहीं गया। मरान के लिए ट्रांसपोर्ट बस का एक टिकट लिया। बस का कंडक्टर उसका परिचित था। कारण वह जिस चाय दुकान में काम करता था, वहां यह आदमी प्रायः आता था। खोआंग में बस रुकने के समय उसने धनंजय से पूछा, कहां जाओगे ? यह कंडक्टर दूसरों का दुख-दर्द समझने वाला आदमी था। धनंजय को देखते ही समझ गया था कि यह बड़ा असहाय है। बड़ी सहानुभूति से, उससे गंतव्य स्थान के बारे में पूछा और धनंजय ने भी काफी मुख्तसर में अपना दुखड़ा सुनाया। कंडक्टर भी लड़का-सा था। उम्र बीस-इक्कीस से ज्यादा नहीं थी। कंडक्टर की पास वाली जगह में ही धनंजय को सीट मिली थी। रास्ते में चलती बस में उसने धनंजय से पूछा, "तुम कहां तक पढ़े हो ?" उसने जवाब दिया, "आठवीं क्लास में चार महीने पढ़ा हूं।" उसने दिलासा देकर कहा, "अच्छा तो मैं तुम्हारे लिए एक नौकरी की व्यवस्था कर दूंगा। मैं भी तुम्हारी ही तरह एक असहाय प्राणी हूं। मेरा यह काम केवल पेट के लिए ही नहीं, भविष्य के लिए भी। मैंने ट्रांसपोर्ट आफिस में कहकर, ऐसी व्यवस्था कर ली है कि रोज चार बजे से पहले डिब्रूगढ़ लौट आऊं। मैं रात के कालेज में पढ़ता हूं। इस बार आई. ए. की परीक्षा दूंगा।" सुनकर धनंजय अवाक् हो गया। कंडक्टर होकर रात के कालेज में पढ़ने वाले इस लड़के में तो असीम मनोबल है। कंडक्टर ने फिर कहा, "यह दुख दुर्योग तो चलता ही है। समझ लो, हमारी तरह के लोगों पर कितनी ही विपदा आये, हमें उतना ही दृढ़ होना पड़ेगा। नहीं तो हमारा कोई निस्तार नहीं। और छोटी अवस्था से ही लोग बड़े बनते हैं।"

इन सब बातों ने धनंजय का हौंसला बढ़ाया। कंडक्टर ने उसी दिन उसे सचमुच एक नौकरी में लगा दिया।

चाय बगान से पेंशन प्राप्त एक डाक्टर ने, एक नयी फार्मेसी खोली थी, जिसमें थोड़ी-सी ही दवाएं थीं। उनको अपनी मदद के लिए एक लड़के की जरूरत थी। पर कंपाउंडर लेने की उनकी ताकत नहीं थी। अंग्रेजी जानने वाला, एक लड़का होने से भी काम चल जायेगा, सिखाने से मिक्स्चर बना दे और अगर वह न हो तो, खुद ही ग्राहक को दवा बेच सके। इसलिए कंडक्टर जब धनंजय को अपने परिचित डाक्टर के पास ले गया, तो डाक्टर साहब प्रसन्न हो गये। सिर्फ बीस रुपये महीने पर, धनंजय की नौकरी फार्मेसी में लगी थी। उसी समय में वह चिकित्सा की काफी कुछ बातें सीख गया था। फार्मेसी में रहकर वह समझ गया था, कि ऐसे बहुत से लोग हैं, जो होमियोपैथी इलाज पसंद करते हैं। उसके अलावा कुछ बीमारियों में होमियोपैथी चिकित्सा का बहुत ऊंचा मूल्य है। मरान के पश्चिमी ओर रहनेवाले होमियोपैथी डाक्टर का रोजगार बहुत अच्छा है। धनंजय भी होमियोपैथी विद्या के लिए बड़ा इच्छुक हुआ। यह विद्या सीखना भी आसान है। पुस्तकें बंगाली या असमिया में लिखी हुई हैं। मरान मेंर हते हुए उसने दो-तीन किताबें पढ़ीं भी और एक बड़ी-सी किताब खरीद ली।

मरान में रहना उसे अच्छा लगते हुए भी, उसने सोचा, इस तरह रहने से उन्नति का और रास्ता नहीं है। दो-एक को कहकर, उसने छोटे-से किसी गांव में पाठशाला के पंडित की नौकरी ले ली। कारण पंडित का काम करने से, स्कूल में पढ़े बगैर भी, मैट्रिक की परीक्षा देने का नियम है। यहीं रहकर उसने मैट्रिक पास की। उसका इरादा बढ़ता ही गया। उसने कंडक्टर की तरह कालेज में पढ़ने के बारे में विचार किया। एक नये खुले हुए दफ्तर में (परिसंख्या का दफ्तर) वह क्लर्क लग गया। अगस्त महीने में कालेज में भर्ती होने को सोचा था। वह था सन पचास का अगस्त महीना। हठात आया प्रलयंकारी भूकंप। कितने लोग मर गये, कितनी गाय-भैंसें लुईत (ब्रह्मपुत्र नदी) में बह गयीं, उसकी कोई गिनती नहीं। कितने ही हमेशा के लिए अनाथ हो गये।

इतना सब कहकर, धनंजय थोड़ी देर के लिए चुप हो गया। उसे अभी ध्यान में आया कि बासंती उसकी छाती से अपना सिर हटाकर गालों पर हाथ रखकर, बड़े मनोयोग से उसकी बात सुन रही है।

वह अचानक बोल उठी, "धन भैया।" उसे खुद अपनी आवाज सुनकर आश्चर्य हुआ।

उसने धीरे से पूछा, "क्या तुम्हें कुछ तकलीफ हो रही है बासंती ?"

"मेरी कसम कहते जाओ।"

"मेरी दुरावस्था की कहानी सुनकर दुखी तो न हो जाओगी ?"

"हो भी जाऊं तो क्या है ? लेकिन मैं भी अगर आपकी बात न मानूं तो ?"

"सुनो, और मेरी बहन के लिए थोड़े आंसू बहाओ।"

"आपकी बहन के लिए ? क्या वह भूकंप में मर गयी ?"

"मरी नहीं, मर गयी होती तो अच्छा ही होता। भूकंप का धक्का देखकर, मेरा दिल उसके लिए तड़प रहा था। सोचा मनतरा का क्या हुआ होगा। घर पहुंचा। देखा, हमारे घर की नींव नदी में बह गयी है। हमारी जमीन लुईत ने अपनी गोद में ले ली थी। खेत की जो जमीन थी, वह भी सूखी रेत से भर गयी थी। वहां अब कभी खेती नहीं की जा सकती थी। लुईत के जल से खेत भर गया था। यह है लुईत की कीर्ति।"

"आपको अपने घर में कोई नहीं मिला ?"

"कौन कहां गया, कोई बता नहीं सका। करीब एक महीने बाद खबर मिली, ताऊजी अपने बाल-बच्चों के साथ, शिवसागर अपनी सुसराल चले गये थे। उन्होंने वहीं चाय बगीचे में एक नौकरी ढूंढ़ ली थी।"

"और मनतरा।"

धनंजय इस बार काफी विचलित हो गया। दो बार ठंडी सांस लेकर अपने को बहलाने की कोशिश की और कहा, "क्या कहूं, यह मेरा ही दोष है। सुना है, दो महीने पहले बहुत-सा धन लेकर, ताऊजी ने उसकी शादी एक बुड्ढे से करवा दी। वह पढ़ी-लिखी भी नहीं थी। मुझे समाचार भेजने का भी, उसके पास कोई उपाय नहीं था। कहते हैं, उसे जबरदस्ती ही हवन पर बैठाया गया था।"

बासंती ने लंबी-सी सांस ली। धनंजय ने देखा उसकी आंख से दो आंसू गिरे। वह उसे कंधों से हिलाकर, नाटकीय ढंग से बोला, "तुम्हीं बताओ बासंती, इतना सब सुनने के बाद भी, मैं कैसे धीरज से शहर आकर फिर से काम पर लग सकता था। मनतरा ही एकमात्र मेरा सहारा थी। उसी की अगर यह हालत है तो मैं किसके लिए इतना खटूं और बड़ा आनेमी बनकर भी, मेरा क्या फायदा होगा?"

धनंजय ने बासंती के कंधे से हाथ हटा लिया। और इस बार अपने से ही बोल पड़ा, "उस दिन मैं, लुईत की छोड़ी रेत पर बैठकर, बहुत हताश हो गया था। सोचा शिवसागर और लखीमपुर, किसी भी शहर में रहूं तो शायद मनतरा से भेंट होगी। और मैं भी उससे मिलने की इच्छा दमन नहीं कर पाऊंगा। और अगर मैं उससे मिला भी, तो क्या कहकर उसे सांत्वना दूंगा? उसे एक बूढ़े की पत्नी के रूप में कैसे बर्दाश्त करूंगा?"

वह फिर चुप हो गया। बेबस होकर बैठा रहा। बासंती उसके पास खड़ी होकर, उसके सिर पर हाथ फेरने लगी। वह बहुत धीरे-धीरे कहने लगा, "बहुत सोचने-समझने के बाद मैं इसलिए यहां चला आया। यह मेरा—अज्ञातवास। यहां रहने से निश्चय ही, ताऊजी की बात भी मैं नहीं सुन पाऊंगा और मनतराभी मुझे ढूंढ़ नहीं पायेगी। सोचता हूं, यहां रहने से शायद अपने को भूल सकूंगा।"

बासंती के दोनों होंठ कांपने लगे, वह कुछ पूछने के लिए व्याकुल, किंतु बात मुंह में रह गयी। वह पूछना चाह रही थी, "तुम तो बहुत से स्थानों पर रहे हो और छोड़ भी आये हो, फिर यह सोनाई का पार भी छोड़ दो तो?"

किंतु वह पूछ नहीं सकी। सोचा, वह सोनाई पार से बिछुड़ नहीं सकता। कारण धनंजय बासंती को छोड़ नहीं सकता। धनंजय को एक और संदेह हुआ। उसने इतनी सब बातें कहीं, पर अपनी जाति के बारे में बताना रह गया था। उसने खुद ही कहा, "इतना सब कहा, पर मैंने अपने वंश का परिचय ही नहीं दिया। बासंती, मेरी जात क्या है जानती हो?"

बासंती का दिल हठात धड़कने लगा। क्या जाने, वह कोई ऐसी जात का नाम ले ले, जिसकी वह कभी आशा नहीं कर रही थी। यदि वह कहीं नीच कुल का हो? वह बेचैन और उद्विग्न हो गयी। धनंजय ने बड़ी वितृष्णा से कहा, "जात का मैं ब्राह्मण हूं। समय पर जनेऊ पहनकर, हम लोगों को दूसरी बार द्विज होना पड़ता है। छुटपन से ही सुनता आ रहा हूं कि, ब्राह्मण अगर नीच कुल के आदमी को छू ले तो नहाना पड़ता है।"

बासंती ने दोनों आंखें बंद कर लीं। कुछ दूरी से भाई भोगराम की आवाज सुनायी देने से वह सजग हो गया। दोनों फौरन अलग होकर दो तरफ चल दिये।

चार

पिछले दिन की बात सोचते हुए, बासंती कभी-कभी रोमांचित हो उठते हुये भी, उसे एक बात का अनुताप है। उससे गलती हो गयी क्या—बार-बार यही सोच रही है। देव की दया से, उसे धनंजय के साथ अकेले में बात करने का मौका मिल गया था। और पहले ही दिन उसे अपने हाथ पर उसका हाथ रखने देना चाहिए था क्या ? इसी वजह से धनंजय ने कहीं उसे सुलभ किस्म की लड़की समझ लिया क्या ? उसके बालों में हाथ फेरना भी कैसी बात हुई ?

बासंती ने बड़ी युक्तियों से अपने को सांत्वना देने की कोशिश की। नहीं, उसने कोई गलती नहीं की। अपनी बातें कहने के लिए निश्चय ही उसको उससे उत्साह मिला था। दो-एक बातें करके वह उसकी उंगलियों की ओर देखता रहा। उस वक्त उसका ऐसा भाव हो रहा था, जैसे उसकी उंगलियां ही उसे सांत्वना दे सकेंगी। वह दोनों हाथों से उसकी उंगलियां सहला रहा था। तभी तो वह अपने मन के दुख की बात कह पाया था। उसके स्पर्श कातर यंत्रणा ग्रस्त चित्र ने, उसको स्पर्श करके ही, असहायता से मुक्ति चाही थी। वह अपने हाथ उसके हाथों में छोड़कर, उसका मुंह देखती रही और सोचने लगी कि, शायद उसकी उंगलियां वाकई सुंदर हैं। और उसे आज ही पता चला कि पुरुष के प्रथम स्पर्श ने उसके दिल में धड़कन पैदा करदी, मन डांवाडोल होने लगा, बदन में सिहरन होने लगी। वह अपने को खो बैठी थी। और धनंजय का मुखड़ा भी कितना सुंदर है। बड़ा मासूम लगता है। मुख पर शिशु जैसी पवित्रता है। वह जिस समय बहन के बारे में बात कर रहा था, उस समय उसके पैर कांप रहे थे, दोनों आंखें एक भयानक विद्वेष से बड़ी-छोटी हो रही थीं। आवाज भी रुकती जा रही थी। बासंती ने सोचा था—अकेले में यह सब बातें सोचकर शायद वह आंसू बहाता होगा। बासंती के दिल में उस बिचारे के लिए बड़ी ममता उमड़ी। उसका दिल रोने को कर रहा था। और इसलिए अनजाने में शायद उसका हाथ उसके सिर की ओर चला गया था। बड़े प्यार से वह उसके सिर में हाथ फेरने लगी थी। उसने एक जम्हाई ली, फिर भी वह उसका दूसरा हाथ पकड़े रहा। उसकी पकड़ में कितना उत्ताप, कितना संकल्प, कितनी व्याकुलता। उसकी अनुभूति वह भूल नहीं पायी।

अब वह धीर बुद्धि से सोच पायी कि अपने को छूने देकर उसने शायद कोई

गलती नहीं की है। फिर भी उससे एक बड़ी गलती हो गयी। वह जब उसका स्पर्श कर रहा था, उसे उसी समय उसके पैर छूकर प्रणाम करना चाहिए था। और उसी के सहारे आत्मा की अटल दृष्टि से, उसे देखकर यह समझा देना चाहिए था कि वह आज से उसकी हो गयी है। हां, उसके साथ घर बसाने से इस जीवन में वही एकमात्र अपना होकर रहेगा। उसके दुख-सुख की समभागी भी वही होगी। उसके दुख-सुख में वह भी बराबर का हिस्सा लेगा। उन दोनों का अलग सुख-दुख नहीं होगा। दोनों एक ही साथ संतान-संतति के बारे में सोचेंगे, दोनों एक ही साथ बूढ़े होंगे; जीवन के बारे में एक ही मत, एक ही धारणा ग्रहण करके मरण की राह देखेंगे। उसे उसी तरह प्रणाम करके, मन ही मन में, उसे स्वामी वरण करके ही, उसके करीब जाना चाहिए था। उसने आवेग से पागल होकर, उसकी छाती पर सिर रख दिया था। और उसका प्यार पाकर ही उसका दिल शांत हो पाया था। यही उससे गलती हो गयी थी। लेकिन इतना संयत होने का उसमें धैर्य नहीं था। सोनाईपरिया वह लड़की। शायद यह सोनाई की हवा-पानी का ही दोष है। दोपहर के निर्जन वातावरण में, पवन के मृदु हिल्लोल से कांपता हुआ, उलवनी और कहूंआवन, दूर-दूर तक फैली हुई श्यामल विस्तृति के बीच और सोनाई के अविश्रांत स्रोत की लहरों में वह खो गयी थी। मोहनीय प्रकृति के बीच उसने धनंजय को भी एक अंश की तरह ही देखा था। उसने बिना संकोच प्यार की भेंट कर दी थी।

बासंती को अपनी मां के प्रति ज्यादा भक्ति और प्यार हो गया है। उसे यह घर छोड़ना पड़ेगा। जन्मे हुए घर को छोड़ना कितना कठिन है। कितनी माया! बूढ़ी अम्मा तो, कुंआरी लड़की को, कुछ देर के लिए रुकी हुई, मधुमक्खी की तरह समझती है। वह खुद भी तो जन्म लिये हुए घर को छोड़ आयी थी।

आंख के जाले कटने के बाद, बूढ़ी अम्मा के आचरण में काफी परिवर्तन हुआ। आजकल वह बेटी को प्रायः उपदेश देती है। बहुत आदर-सादर करती है। कहती है, "देख बेटी, मुझे मरने के लिए और ज्यादा दिन नहीं हैं। मैं जीवित रहते, अगर तेरा ब्याह देख सकूं, तो कितना अच्छा हो। एक को तो पार कर दिया। लड़का भी खुद कमाने लायक हो गया है। मुझे केवल तेरी ही चिंता है।" बासंती बड़े मनोयोग से सुनती रही। स्वयं कुछ नहीं बोली।

आज सोते समय मां ने कहा, "बासंती, तू आजकल अलग ही सोती है? बूढ़ी

के साथ सोना शायद बुरा लगता है ?" बासंती ने कहा, "मां, ऐसे क्यों दिल पर चोट करती हो। तुझे असुविधा होगी सोचकर ही···"

"मां की गोद में लड़की सोये तो भला कौन-सी मां को बुरा लगेगा ? फिर आजकल मेरा मन भी बड़ा उदास रहता है।"

बासंती समझ गयी कि अगर वह मां के साथ नहीं सोयेगी, तो उसे बहुत बुरा लगेगा। भाभी भी मां की उस अभिलाषा के बारे में जानती है। भाभी ने कहा, "बासंती, तुम मां के साथ क्यों नहीं सोती हो? इस घर में और जाने कितने दिन रहोगी। जवान लड़की को दूसरे घर जाने के लिए तैयार रहना पड़ता है।" भाभी की बात का इशारा समझते हुये, शर्म दिखाकर उसने कहा, "जा बड़ी आयी बोलने वाली।"

रात को मां ने उसे बहुत-सी बातें कहीं। बासंती के मन में यह प्रश्न आया—इतने दिनों मां ने ऐसी बातें क्यों नहीं कहीं। कहीं कुछ बात चल रही है क्या ?

"बासंती, देखते-देखते ही तू पेड़ जैसी बढ़ गयी। अब पूरी तरह जवान हो गयी है। तेरा मुंह देखते हुए मुझे ऐसा लगता है, जैसे तुझे किसी को अपनाने की उम्र हो गयी है। तू अब पहले की तरह खिलखिलाकर हंसती भी नहीं है। किंतु बेटी, यह निश्चय है कि जन्म, मरण, विवाह, यह तीनों बातें देवता से भी अविदित हैं। इसीलिए मैं अपना सिर खपा रही हूं।"

बासंती मां से जोर से लिपटकर सजल नयन से बोली, "मां हठात तू आज यह सब कहकर मुझे क्यों दुख दे रही है। मैं तुम सब पर आपद बन गयी हूं क्या ?"

मां जरा भी विचलित न होते हुए, गंभीर आवाज से बोली, "ठीक, आपद नहीं, असल में एक बहुत बड़ा बोझ है। तेरा विवाह न होने तक, मुझे और तेरे भाई को, किसी को भी शांति नहीं होगी। लड़की की ठीक उम्र में शादी करने से ही हमें पुन्य मिलेगा।"

"अम्मां, तू जो भी कहेगी मैं सुन सकती हूं। किंतु यह सब बातें तू मत कहा कर, यह सब मुझसे कहने से क्या फायदा।"

"मैं इसलिए कह रही हूं कि तू आजकल घाट पर बहुत देर तक बैठी रहती है। घर में भी अनमनी होकर कुछ सोचती रहती है।"

बासंती इस बार कुछ नहीं बोल पायी। मां जैसे सर्वज्ञानी होकर उससे बात कर रही है। रात में उसे नींद नहीं आयी। मां की कही हुई बातें, उसके कानों में

गूंजती रहीं। मां ने कहा था, "औरत अगर असल में अच्छी हो तो किसी भी पुरुष के साथ, सुखी संसार बसा सकती है। औरत का अगर एक बार पैर फिसल जाये तो एक दोष ढकने के लिए, हजार दोष करने पड़ते हैं। और सुख-शांति उसी दिन उससे विदा ले लेती है।" पर एक बात का मर्म अब तक उसको समझ में नहीं आया। मां ने कहा था, "भगवान ने नारी को एक विशेष गुण दिया है, वह जैसी भी अवस्था में हो, गुजारा कर लेती है।" किंतु यह सब बातें, तो मां को शुरू में ही सिखाना चाहिए थीं। रात को मां बातें करती रही और वह बगैर प्रश्न किये, एक छोटी लड़की की तरह सुनती गयी, गौर से सोचने पर, उसे एक नैतिक चेतना ने बेचैन कर दिया।

अगले दिन प्रातः की किरण भी उसके दिल का अंधेरा दूर नहीं कर सकी। काम से मन बहलाने की कोशिश की। बहुत सारे मैले कपड़े घाट पर ले जाकर, बहुत देर धोती रही। घर वालों के उठने से पहले ही, उसने तीन टोकरी धान कूट लिया था। दोपहर के बाद, उसने तीन 'काठी' कपड़ा बुना। शाम को भी मां और भाभी से अलग-अलग ही रही। धूप जलाकर सारे कमरों में धुआं दिया था। गोशाला के पास, कचरे में आग लगा कर, उसका धुआं गोशाला की ओर पंखा किया, जिससे कि मच्छर भाग जायें। शाम को खाने के बाद, बिस्तर में लेट कर भगवान का नाम गुनगुनाती रही थी। दूसरे दिन सुबह जागने के बाद, काफी ताजगी महसूस करने लगी। रात उसे अच्छी नींद आयी थी।

सुबह उठकर, वह रोज घर झाड़ती थी। भाभी अगर सुबह उठकर बगीचों में काम करती होती तो वह घर के सामने पदुली (दहलीज) साफ कर देती। घर के पीछे नारियल के पेड़ से, नदी के घाट तक, पेड़-पौधों के बीच, सिर की मांग की तरह, जो दो हाथ चौड़ा रास्ता है, वहां भी झाड़ू लगा देती। रजनी गंधा के दोनों पेड़ों के तनों के आसपास भी साफ कर देती। आज भी उतनी ही झाड़ू लगा दी। सब कुछ साफ करने के बाद, घर के सामने 'पदुलि' के दोनों तरफ, जो दो हारसिंगार के पेड़ हैं, उनके नीचे से थोड़े फूल चुन कर, आंचल में रख लिये। उन फूलों की एक माला बनाकर, अपने जूड़े में लगा ली। दूसरी माला सामने वाले घर में राधाकृष्ण की तस्वीर पर चढ़ाने जाते हुए, उसे घर की हालत देखकर बड़ी झुंझलाहट हुई। इतने दिनों उसे ख्याल ही नहीं आया कि सामने वाला कमरा, कितनी खराब हालत में पड़ा है। आज ही उसको

महसूस हुआ कि जिस घर में जवान लड़की हो, उसके सामने वाला घर तो देखते ही, दिल खुश हो जाना चाहिए।

कमरे के दक्षिण की ओर रखे तीन धान के थैले, वह किसी तरह खींच कर एक कोने में ले गयी और किसी की नजर न पड़े, इसलिए उन्हें चटाई से ढांक दिया। धान के दो बड़े टोकरे, गोदाम के सामने किनारे से रख दिये। कमरे के उत्तर की ओर बेड़े के पास, मेहमानों के लिए रखे, तख्त पर, एक रंगीन चादर बिछा दी। लकड़ी के खंभे में टंगे दो हिरणों के सींग साफ किये। छोटी टेबल, दो कुर्सियों के बीच में रख दी। दो मूढ़े और दो पीढ़े वृत्ताकार रूप में रख दिये। टेबल पर एक फूलों वाला मेज़पोश बिछा दिया। बोतल में फूल लगाकर, उसे भी टेबल पर रख दिया। दीवानखाने की सूरत ही बदल गयी। मन के इस बाह्य प्रकाश से वह खुद स्तंभित हो गयी।

भाभी भी कम चतुर नहीं है। बासंती का यह सब काम देखकर, उसे कुछ आशंका हुई। उसने मुस्कराते हुए कहा, "हूं, मुझे तो आज ही तेरा काम पसंद आया। अगर कोई लड़की देखने आये, तो लड़की पसंद करने से पहले कमरा देखकर ही खुश हो जायेंगे।"

बासंती ने अभिमान से अपने को थोड़ा झुका दिया। भाभी ने फिर कहा, "समझ लो, अब और ज्यादा दिन नहीं हैं। वह दिन भी आ जायेगा। तुम्हारे भाई ने, एक जगह बात चलाई है।"

"भाभी, अगर इस तरह मुझ से छेड़-छाड़ करोगी, तो मैं तुमसे बात ही नहीं करूंगी।"

"अरे वाह। सच बोलने से भी गुस्सा आता है?" अब तो बासंती का सब संदेह दूर हो गया। भाभी को इस तरह बोलते देखकर, बासंती को और बात का पता नहीं चला। कोई बात नहीं, धनंजय के घर आने से वह उसके सामने तो निकल सकेगी और उससे बातचीत भी कर सकेगी। पर यह सब बातें, चार दिन भी छिप नहीं पायीं। शनिचर को भोगराम हाट से सूर्य अस्त होने के बाद ही घर आता है। इसलिए उस दिन घर के सब लोग खाना खा लेते हैं। केवल तरुलता ही पति की प्रतीक्षा में रहती है। वह सामने बैठी खीलें चुन रही थी। उसी समय लड़की दौड़ती आयी, तरुलता ने गुस्से से लड़की की ओर देखते हुए कहा, "घाट की ओर अकेले जाने को मना किया था ना। बोल क्यों गयी थी।

बहुत चुस्ती आ गयी है क्या ?"

बेटी मालस की उम्र सात साल है। उसे अभी तक ज्यादा बात की समझ नहीं आयी है। मां का गुस्सा देखकर, उसने डरते-डरते कहा, "मैं अकेली नहीं गयी थी। बासंती बुआ भी साथ गयी थी।" तरुलता ने वृथा गुस्सा रोककर खुश होकर कहा, "हां, किसी के साथ जाना समझी, उस पार बहुत ढलान है, अगर पैर फिसल गया तो नदी के अंदर चली जाओगी। तुम्हारी बुआ आयी या नहीं।"

"अभी नहीं आयी। अच्छा मां, बताओ आज पिताजी, मेरे लिए लाल फ्राक लायेंगे या नहीं ?" तरुलता ने मालस की बात का जवाब ना देते हुए पहले की ही तरह गुस्से से पूछा, "बुआ क्या अब तक कपड़े ही धो रही हैं ?"

"अभी धुले ही नहीं।"

"तो क्या शाल की लकड़ी काट रही है।"

"बुआ बड़ी खुश है। खूब हंस रही थी। आदमी के साथ बात करने से ही हंसती है। वह आदमी भी हंसता जाता है।"

"आदमी ! किस आदमी से बात कर रही है ? बताती क्यों नहीं ? बेवकूफ की तरह क्या देख रही है ?"

"वही, जो बूढ़ी अम्मा को शहर ले गये थे, वही डाक्टर। और बुआ का भी कितना साहस। इतने बड़े आदमी को बुआ तुम कह कर बोलती है।"

तरुलता बड़ी चिंतित हो गयी। खीलों की डलिया जोर से जमीन पर रख दी। और आंगन में आकर, घाट की ओर देखने लगी। बासंती को धीरे-धीरे आते हुए देखा। आमने-सामने होते ही, बासंती को सिर से पैर तक देख लिया और ताना देते हुए कहा, "तुझे घाट पर इतनी देर क्यों लगती है, अब समझी। हमारी लड़की को मर्द देवता मिल गया है !"

बासंती पर जैसे बिजली गिर पड़ी, वह खड़ी की खड़ी ही रह गयी। कुछ न कहने से बुरा होगा, इसलिए सहमी-सी बोली, "क्या हुआ ? मैंने ऐसा क्या किया ?"

"अब नादान बनकर मत दिखाओ। तूने क्या किया उसका जवाब भी क्या मुझे ही देना पड़ेगा ? अब इतना ही कहना काफी है। तुझे सच बात कहने का मुझे अधिकार नहीं है क्या ?"

"भाभी !"

बासंती की आवाज विनती भरी थी। भाभी ने बड़े कोमल स्वर में कहा, "क्या ?" फिर अंतर के पूरे आवेग से बासंती ने कहा, "भाभी अगर मैं तेरे सामने अपना दिल खोल कर दिखा सकती तो।"

भाभी सिर नीचे करके चुप ही रही।

पांच

बासंती का मन भटक गया है, जानते हुए भी, तरुलता ने उसे सावधान नहीं किया। केवल बासंती, किस घड़ी ठनुआ घाट जाती है और वहां कितनी देर रहती है, उस पर नजर रखने लगी। बासंती को यह समझने में देर नहीं लगी कि तरुलता उसका पीछा कर रही है और जासूस की तरह काम कर रही है। वह पहले की ही तरह, घाट पर, जाती-आती रही। पहले की ही तरह, लोगों के घर आना-जाना भी करती रही। नाटक कथा में भी जाती रही। तथापि वह पहले से ज्यादा पराधीन हो गयी। पहले जैसे मुक्त चित्त और दुविधाहीन सरल स्वभाव को प्रेम के गोपनीय स्पर्श ने, उसे कुचले हुए तृण की तरह मसलकर रख दिया। सदा घर में रहनेवाली, स्वभाव में तनिक भी चटर-पटर न दिखाने वाली, यह लड़की, जो पहले की तरह जीवन-यापन करते हुए भी, पहली बार अनुभव कर रही है कि वह पिंजरे का पंछी है।

जिस भाभी ने उसे इतने प्यार से रखा, उसको भी यह विश्वास होने लगा कि पिंजरे का पंछी किसी दिन उड़ न जाये। तीन बच्चों की मां तरुलता गृहस्थी के जंजाल में बच्चों को पालने में, पारिवारिक जीवन की यंत्रणामय गतानुगतिकता में, यह भूल गयी कि वह भी एक दिन जवान थी और बांसती ही की तरह उसका भी एक व्याकुल मन था। मालस के मुंह से, बांसती के दिल लेने-देने का निश्चित इंगित पाकर, तरुलता उसको पहले की तरह सदभाव से ग्रहण न कर सकी। वह सोचने लगी कि, बांसती को, इस सर्वनाशी पथ से बचाना उसका कर्त्तव्य है। तभी बांसती की भलायी कर सकेगी।

बासंती तब भी तरुलता के प्रति कृतज्ञ हुई। और डर-डर कर रहने लगी। कृतज्ञ होने का पहला कारण था कि आज दो दिन होते हुए भी, तरुलता ने यह

बात अपने पति को नहीं के बतायी भोगराम। आचरण से ही बासंती समझ गयी थी। शायद मां को भी नहीं बतायी होगी, क्योंकि मां पहले की तरह ही उसके साथ बातें करती रही। किंतु कितने दिन वह ऐसे रहेगी ? जब ममता हुई, स्नेह के साथ चक्कर ने, उसका देह मन बांध लिया तो और क्या उपाय है। निठुर नियम से बंधे हुए वंश परिवार की सुप्राचीन बाधायें, तोड़ने की, उसकी दुर्निवार इच्छा हुई। जैसे वह खुले प्रांत में, यौवन उन्मुक्त बांसुरी का स्वर सुन रही है और संस्कारों की परिधि को कुचल तोड़कर, बाहर निकल पड़ने को बेचैन हो रही है।

एक ग्रामीण लड़की, जितने आवेग और मनोवेदना से, अपनी कहानी हृदय-ग्राही और सहानुभूति योग्य कर सकती है, उतने ही आवेग और मनोवेदना से भाभी को उसने सारी बात बतायी। उसकी बात सुनकर, तरुलता के दिल में सच-मुच अनुकंपा हुई। अच्छी बुरी राय न देते हुए उसने कहा, "बासंती मैं तुम्हारा मन अच्छी तरह समझ नाप सकती हूं। पर एक बात, बार-बार मेरे मन में आ रही है, कितने लोग हैं जो अपने मन के खुदे तालाब में पानी पी सकते हैं ? बेटी अपनी देह बचाकर रखना। याद रखना, जितना नशा होगा, उतना ही अपना कुछ नहीं रहेगा। उतनी ही दुखी होगी।"

बासंती ने एक ठंडी सांस भरी। तरुलता को इतनी हमदर्दी दिखाने के बावजूद दूसरे दिन जब धनंजय घर आया था, तो चाय या तांबूल देने के लिए बासंती को उसके सामने आने का मौका नहीं दिया। उसे अंदर-ही-अंदर भाभी पर बहुत गुस्सा आया और रसोई में बर्तन पटकती रही। भाभी की कड़ी नजर की वजह से, दरवाजे की दरार से झांक कर देखने का भी भाग्य न हुआ।

तरुलता बासंती के बारे में भारी चिंता में पड़ गयी। बासंती हमेशा चुप रहने लगी। पहले की तरह परिपाटी से बाल बनाना भी छोड़ दिया। अपने आपसे ब्याह के गीत नाम गुनगुनाना भी छोड़ दिया। धनश्री राग की मधुरता जैसे अचानक करुण मूर्छना में, स्तब्ध हो गयी हो। तरुलता ने, गोपन में सास को सब बातें कहीं। सुजला ने उसकी तरह उत्कंठा नहीं दिखायी। सिर्फ कहा, "तो जल्दी ही इसकी व्यवस्था करनी होगी। यह सब पायमाल का शीघ्र ही सफाया करना पड़ेगा। नहीं तो विपद। किसका मन किस ओर जाता है कौन जानता है ? फिर पुरुष का मन तो फाल्गुन के मौसम जैसा। बहुत दिन तक चिपककर रहने से, औरत को ही पछताना पड़ता है।"

"अच्छा अम्मा, वह लड़का कैसा रहेगा ?"

"कुछ तय नहीं कर पा रही हूं। देखने सुनने में तो अच्छा है, उससे ज्यादा और गौर नहीं किया, बातचीत सुनकर तो यही समझी हू कि वह चालाक तरह के लोग नहीं हैं।"

शाम को बासंती मां के पास ही थी। आंखें खराब होने के बाद से मां, आजकल पहले की तरह पोथी आदि पढ़ नहीं सकती हैं। बासंती मां को पोथी पढ़कर सुना रही थी। कीर्तन के पद सुर में पढ़ रही थी, इसीलिए कहीं रुकावट नहीं आयी थी। हठात वह अन्यमनस्क हो गयी थी। घर के सामने साईकल की घंटी सुनायी दी। क्रिक, क्रिक, करके दो बार घंटी बजने के बाद, फिर दो बार घंटी बजी थी। उसके कान इस घंटी के परिचित थे। उसने पोथी पढ़ना बंद कर दी थी और मां का यह प्रश्न कि अध्याय समाप्त किये बगैर, उसने पढ़ा क्यों बंद कर दिया, उसको सुनायी नहीं दिया। कानों की तेजी से उसे पता चल गया था कि उसने साईकल सहारे से टिका दी थी। थोड़ी ही देर बाद, सामने के कमरे से उसकी आवाज सुनायी दी थी। वह उसे जवाब देने के लिए बाहर जाना चाह रही थी, किंतु मां को उसके मन की अवस्था का पता चल गया था और गुस्से से उसे अपनी जगह बैठे रहने के लिए कहकर, वह धीरे-धीरे सामने के घर की ओर चली गयी। धनंजय के साथ थोड़ी-सी बात कर, उसे विदा करके, अंदर आकर, बासंती को बड़े दुख से अपने मन की बात कही थी, "बेटी यह तूने क्या किया ? मैं उसकी आंखों में तेरा सर्वनाश देख रही हूं।"

बासंती सिसकियां भरकर रोयी थी, मां ने खुद ही फिर कहा, "तीन काल, मैं बिता चुकी हूं। अब भी मुझे लोग पहचानने में देर नहीं लगती। धनंजय को देख कर, मुझे यह ख्याल हुआ, वह लायक आदमी नहीं है। कुछ लोग ऐसे होते हैं, जो हर तरह से अच्छे होते हैं। धनंजय भी वैसा ही है। तब भी उसे देखकर, ऐसा लगता है, जैसे वह संसार बसाकर, रहने वाला आदमी नहीं है। ऐसे भी कुछ लोग हैं, जो सब कुछ कर सकते हैं, प्यार दे सकते हैं, प्यार ले सकते हैं, किंतु वह एक ही स्थान पर जम नहीं सकते। 'साईथा' चिड़िया की तरह आकाश में ही विचार करना पसंद करते हैं। धनंजय भी शायद ऐसे ही बहने वालों में से एक है।"

बासंती का सुबकना दुगुना हो गया। दूसरे दिन सुबह घाट पर पानी लेने के लिए जाते हुए, उसने धनंजय को नदी के उस पार, अकेले बैठे देखा था। वह वन हिरणी

की तरह उसी ओर देखती रही। तरुलता किस मौके पर उसके पास आ खड़ी हुई बासंती नहीं जान सकी। धनंजय तरुलता को देखकर एक पेड़ की ओट में हो गया था।

बात की गंभीरता देखकर, मां और तरुलता ने गोपन में काफी देर तक विचार-विमर्श किया। उन्होंने तय किया था कि लड़की का मन अगर एक में अटका हो, तो, उसे उसको सौंप देना ही मुनासिब होगा। भोगराम को यह सब बताना तय किया। वह सुनने से शायद गुस्सा नहीं करेंगे। शादी कर देंगे। तब उन लोगों की चिंता भी दूर हो जायेगी। यह तय किया कि बासंती को कुछ दिनों के लिए मामा के घर भेजना ठीक रहेगा। मां ने कहा, "उसके दिमाग में तो शनी चढ़ा है, उसमें कुग्रह बैठा है, कुछ घूम-घाम कर आने से, कीचड़ में फंसा मन शायद साफ हो जाये। वहां कुछ दिन रहने से उसकी चिंता भी शायद कम हो जायेगी।

लेकिन यह बात भोगराम के सामने नहीं निकल पायी। इस महीने उसको व्यापार में घाटा हुआ है। घर में रहने का जो थोड़ा समय है, वह गुस्से में चीखता रहता है। छोटी-सी बात पर भी उसे गुस्सा आता है। पकवान के स्वाद में थोड़ा इधर-उधर होने से थाली पटक देता है। बच्चों के थोड़े से शोर से, वह उग्र रूप धारण कर लेता है।

इधर बासंती को मामा के घर भेजने का आग्रह देखकर, मां और तरुलता पर उसे बहुत गुस्सा आया। उन लोगों से उसने स्पष्ट बता दिया कि वह नहीं जायेगी। मां सुजला को, लड़की के प्रति अब सही मानों में गुस्सा आया। अपने पेट की औलाद होते हुए भी, अब वह बड़ी-बड़ी बातें करने लायक हो गयी है? एक सामान्य परदेसी लड़के के लिए मां की अवज्ञा करने का भी उसका साहस बढ़ गया है।

"बासंती, तू जायेगी या नहीं ठीक से बता?"

"जाना क्यों है, उसे क्यों नहीं बताती? मैं तुम लोगों को मुफ्त में मिली गुलाम हूं कि, जहां जाने को कहो वहां दौड़कर चली जाऊंगी?"

"तुम्हारी मामी तुम्हें बहुत दिनों से बुला रही है, इसीलिए।"

"मैं समझ गयी हू, तू चुपके से मुझे अनाथ करना चाह रही है।"

"मुंह संभालकर बात कर। कुंवारी लड़की होकर ऐसी बात करते हुए तुझे लाज शर्म नहीं आती?"

"मैंने कह दिया है, मैं नहीं जाऊंगी, नहीं जाऊंगी। मेरी एक ही बात है बस। तुम लोगों के लिए अगर मैं इतनी ही आपद हूं, तो गले में घड़ा बांध कर, सोनाई में डूब मरने के लिए क्यों नहीं कहते ?"

"तू तो बुरे रास्ते की बात कर रही है बेटी।"

दो दिन मां और तरुलता की बातचीत बासंती के साथ बंद रही। तीसरे दिन मां सुजला को बेटी के लिए ममता सजग हुई। सोने के समय बेटी के सिर में हाथ फेरने लगी। बासंती भी मां के गले में हाथ डालकर रो पड़ी। मां ने कहा, "बेटी, सच बात कहने से तू बैरी क्यों समझती है ? तेरे लिए मेरा प्यार कम हो गया है क्या ?"

उसने शांत शिशु की तरह मां की बातों पर ध्यान दिया। मां उसे सोनाई परिया जीवनधारा और दर्शन की इतिकथा बखानती रही।

सोनाईपरिया गांव का जीवन, विपद शंकुल। सोनाई पर भरोसा करके ही यहां के ग्रामीण जीवन ने रूप धारण किया है। हर साल सोनाई खाद बिछाकर उसके पार की मिट्टी को, शस्य-श्यामला बनाती है। कई साल सोनाई शायद रुष्ट हो गयी। बाढ़ का पानी 'भराल' (धान का गोदाम) की छत तक पहुंच गया था। धान और पटसन पानी के नीचे जम गये। सोनाईपरिया लोग, बड़ी मुसीबत से जीवन बिता रहे हैं। बीमारी फैली है। आकाल पड़ा है। इसकी सामूहिक जीवन यात्रा ऐसी है कि, स्रोत ही जीवन की गति का निर्णायक है। प्रकृति के भीषण वैषम्य में भी, सोनाई के ऊपर से, यातायात न करने से नहीं चलता। तदुपरांत वर्षा में, पांच-छह हाथ गहरे पानी में, खेती करना भी आसान बात नहीं है। कपाल मंद होने से तो, किसी भी स्थान में, विषैला नाग फन खोले खड़ा रह सकता है। पानी में डुबकी लगा कर, पटसन काटने के समय, 'मछंदरी' (काली पीठ वाली एक प्रकार की बड़ी मछली) के टकराने से, कलेजा हिल जाता है। काल बैसाखी का झक्कड़ और बावंडर आदि तो हैं ही। झक्कड़ का घर उड़ाकर ले जाना, तेज हवा का घर गिरा कर, लोगों को कुचल देना, बावंडर से सांस बंद होकर लोगों की मृत्यु की घटना, सोनाईपरिया लोगों के लिए वार्षिक खबरें हैं, वार्षिक बली देने की प्रथा। कब किसके भाग्य में क्या है, खुद कोई नहीं जानता। न देखे हुए जन में भरोसा रखकर, सोनाईपरिया लोग अकातर जीवन

बिताते हैं। आंचलिक विश्वास, सामाजिक नीति नियम और कुसंस्कार से ही वह जीवन की छंद परंपरा रखकर चलते हैं। प्रकृति को तुष्ट करने के लिए 'लालुंग' (असम उपत्यका की एक जनजाति) लोग, समस्ती सर्प पूजा करते हैं, वृक्ष के तने में सिंदूर लगाकर पूजा करते हैं। कोई आंचलिकअधिष्ठात्रीदेवी के सामने, बकरी हंस, और कबूतर की बली देते हैं। मोरापुर, बोरबोरी, दरगियाल, माझगांव आदि के नामघरों में कथा कीर्तन होता है। तिथि और दूसरे उत्सवों में, हर नामघर में, शंकर माधव गूंज उठता है। बिमारी, आकाल, अनातन सूखा, सैलाब और आकस्मिक विपदा विघ्न का शिकार बनते हैं, पर पराजय नहीं मानते। और वह लोग तो सोनाई छोड़कर कहीं जा भी नहीं सकते। विपद की आशंका लेकर ही उन्हें जीने में आनंद मिलता है। विपद को साहस से तुच्छ करना ही सोनाई-परिया लोगों का स्वभाव है।

किंतु पुरुष श्रेणी को ही सोनाई पार की सब तरह की विपद का सामना करना पड़ता है। औरतें केवल भूमि रोपती हैं, धान काटती हैं और घरेलू काम करती हैं। सोनाई पार के लोगों में यह प्रचलित धारणा है कि, पुरुष अपने दैनंदिन विपद शंकुल जीवन और अपनी निरपवाद अवस्था में निर्भर करता है अपनी घर की औरत पर, घर की औरतें यदि सच्चे मन से दिन बिताती हैं, पर प्रेम नहीं चखती हैं, अवैध प्रणय से मन मत्ताल (पागल) नहीं करती तो नारी के सतीत्व गुण के बल पर ही, पल-पल विपदग्रामी पुरुष, कुल का उद्धार करता है। यही है सोनाई-परिया पुरुष का पारिवारिक दर्शन।

लेकिन प्रकृत जीवन, नियम पालन नहीं करता, प्रचलित दर्शन नहीं मानता, संस्कार नहीं मानता। बीच-बीच में सोनाई के पार पर, प्रीति हो ही जाती है। मदन के शर, कानून मानकर, युवक-युवती को नहीं बोंधते 'बिहू' (असम का वंस्तो उत्सव) गीत की लहर बिहू 'पेपा' (शहनाई की तरह का बांस का बाजा) का स्वर ढोल की लगातार थाप और जंगल काटकर, बहता हुआ 'वन घोष' (ग्रामीण गीत) की उर्वर अश्लीलता, सामाजिक नियम के बांध तोड़ देती है। और सुजला की तरह अभिज्ञता वाली बहुत-सी औरतें, सोचती हैं कि, पुरुष की अनीष्टता का मूल स्त्री जाती के पाप से ही है।

सोते समय बेटी के सिर पर हाथ फेरते हुए मां ने कहा था, "गंधकलायी पटसन काटने जाकर, सोनाई में डूब मरा था। इसलिए कि उसके घर की औरत

पाप के काम करती थी। उस दिन सोनाई में तूफान भी नहीं था। नौका भी मज-बूत ही थी।"

बासंती गंधकलायी की बीबी चित्रा की कहानी जानती है। पति न होने के समय, वह स्वरूप दुकानदार के पास जाती थी। स्वरूप ने उसे जरी के काम वाला पाट का 'मेखला' (असम प्रदेश की औरतों का पहरावा) दिया था। खुशबुदार तेल जो वह सिर में लगाती है, वह भी स्वरूप का ही उपहार है।

मां की बात पर बासंती को विश्वास हो गया। उसकी छाती हिल गयी थी। मां ने फिर बताया, "जानकी के बड़े भाई को जंगल में बांस काटते हुए, भरी दुपहरी में, नाग सांप ने काट लिया था। निमिष में उसके प्राण निकल गये। पर उसकी घरवाली अच्छी औरत थी। सब अनर्थ का मूल, उसकी छोटी बहन जानकी थी। वही घर की अलक्षी। उसी के लिए घर ध्वंस होने जा रहा था। कारण उपा-र्जन का स्थल, बड़ा भाई भी मर गया। एक बार उसका गर्भ गिराना कौन नहीं जानता ?"

मां के ऐसा कहते ही बासंती चीख पड़ी। उसके लिए, यदि भोगराम को कुछ हो जाये तो सारा घर अवश्य उजड़ जायेगा। बाप मरने के बाद, यह दस साल उन्हीं ने घर बना कर रखा है। उन लोगों को दो वक्त, दो मुट्ठी खिलाने के लिए वह दिन रात, चांद सूरज की तरह बाहर घूमते हैं। बासंती का आर्तनाद सुनकर मां ने उसे सांत्वना देने की चेष्टा करते हुए कहा, "औरत है घर की लक्ष्मी। औरत के धर्म के फलस्वरूप, वंश के तीन कुल का उद्धार हो सकता है। अभी भी समय है बेटी। तू अभी है ही कितने साल की लड़की ? धीरज के साथ काम ले। उल्टी बातें मन से निकाल दे। तेरे बूते पर हम भी तर जायेंगे, तू जिसके घर जायेगी उस घर के लोग भी तेजी से प्रगति करेंगे। यह कुल बचेगा और वह कुल बढ़ेगा, तू मेरी आखिरी लड़की है। बूढ़ी उम्र में, मां की इतनी-सी बात भी नहीं रखेगी क्या ?"

इन सब बातों को कहते सुजला की आवाज कांप रही थी। बासंती का एक हाथ पकड़कर, हिला-हिलाकर अपने अनुरोध की तीव्रता प्रकट कर रही थी। धंसी हुई आंखों में, चिराग की रोशनी में, आंसू दिखायी दे रहे थे। बासंती मां की गोद में रो रही थी और अनिच्छा से थोड़ी देर के लिए, प्रथम पुरुष के प्यार, मोहब्बत और आकर्षण को तिलांजलि दे कर, मन-ही-मन बार-बार प्रतिज्ञा की

थी, कि वह धनंजय की छाया से भी दूर रहेगी। शाम को कहीं से वापस आते हुए वह साईकल की घंटी बजाकर, जब इशारा करेगा तो वह कान बंद कर लेगी। जब कभी वह घर आयेगा तो वह घाट पर चली जायेगी। उसे घाट के उस पार देखने से वह भागकर घर लौट आयेगी। ऐसा करने से वह, उसकी आशा-भरोसा छोड़ देगा। उसे तो मुक्ति मिलेगी। वह तो पवित्र होगी। यदि भाग्य के बल से, उसके साथ उसकी शादी हो गयी, तभी वह उसे अपना समझेगी।

दूसरे दिन सुबह उसने मां को बताया कि वह कुछ दिन के लिए, कहींगुरी वाले मामा के घर जायेगी। बात सुनकर मां और तरुलता के सिर से जैसे भारी बोझ उतर गया। दो दिन बाद बासंती मां के साथ कहींगुरी चली गयी। जाते समय तरुलता ने उसके कान में कहा, "पर मैं तुम्हारे बड़े भाई से बात करूंगी और कुछ नहीं, सिर्फ पूछूंगी, धनंजय तुम्हारे लिये कैसा रहेगा ?"

बासंती को, भाभी के प्रति कृतज्ञता से आंखों में आंसू आ गये। मां की नजर से बचने के लिए आंचल से आंखें पोंछकर स्वाभाविक हो गयी।

छह

अपनी अलग धारणा होने की वजह से और पुराने जमाने की निष्ठावान औरत होने के नाते, सुजला का अभिमत और इच्छा अनिच्छा किसी काम नहीं आते। बासंती को मां से कोई विशेष आशा नहीं है। तरुलता पर ही उसे सारा भरोसा है। उसके प्रति तरुलता ही सहानुभूतिशील है। उसी पर उसकी आस्था। औरत का मन फिसलने से, घर के लिए बुरा पुरुष के लिए बड़ी विपद, सोनाईपरिया की यह विश्वास की जानकारी होने से ही, वह भुगत रही है। तब भी आशा में है, भाभी भोगराम को बतायेगी और भाई भी शायद धनंजय को पसंद करेंगे। समाज के दस्तूर से ही उनकी शादी हो जायेगी। किंतु पिछले चार महीने से; बासंती का, धनंजय के साथ मानसिक योगायोग होने के, एक महीने पहले से ही, भोगराम एक ऐसे संकट में पड़ा है, कि उससे उद्धार पाना तो दूर की बात है, उसका भविष्य भी धुंधला हो रहा है। उसके भविष्य के माने हैं, परिवार के सात प्राणियों का भविष्य। सोनाईपरिया जीवन में परिवर्तन आ रहा है। सामाजिक

जीवन में नये मूल्यबोध उभर रहे हैं। कृषि जीवन में रुकावट न होने से भी, लोग नयी समस्याओं का सामना कर रहे हैं। अभाव बढ़ रहा है। साथ ही साथ लोग स्वार्थी हो रहे हैं। पुराने समय की मानवीयता में कमी दिखायी दे रही है। सोनाई-परिया का मन, 'बन गीत' (असम का लोक गीत) की कोमल अरुण मूर्छना से, या 'बर गीत' (असम का अन्यतम भक्ति गीत) के आध्यात्मिक तात्पर्य से, अथवा प्रकृति के अकृपण रूप से, जैसे संतुष्ट नहीं हो पा रहे हैं। जीवन में जटिलता आ रही है। जीवन संग्राम, संगीत होता जा रहा है। उसके फलस्वरूप कई तो हीन हो गये हैं। नैतिक तात्पर्य समझ नहीं पा रहे हैं। नयी परिस्थिति में कई हो गये हैं दक्ष, और विशेष चतुर। पुराने संभ्रांत लोग गरीब हो रहे हैं और कुछ नये परिवार उभर आ रहे हैं।

सोनाईपरिया गांव की जनसंख्या बढ़ रही है। खेती के लिए जमीन की कमी हो रही है। किसी के बाप दादा की छोड़ी, तीस चालीस बीघा जमीन पर हर पीढ़ी के, भाईयों में हिस्सा होने के बाद अब शायद एक परिवार के लिए दो चार बीघे ही रह गयी है। तदुपरांत अंग्रेज शासन के काल से अब तक, नये-नये तरीके लेकर शोषक दल, रक्त बीज की तरह पैदा होते ही जा रहे हैं। सोनाईपरिया कच्चे पथ के स्थान पर, बड़े चौड़े पत्थर बिछाकर, रास्ते का निर्माण काम चल रहा है, कई स्थानों पर सरकारी विभाग के सफेद दफ्तर दिखायी पड़ रहे हैं और हर गांव में तीन-चार ठेकेदार रोड़ मोहरी और मीटिंग जमाने वाले, चालाक लोगों के पक्के घर, गांव अंचल की शोभा में वृद्धि करने लगे हैं। तथापि सर्वसाधारण की अवस्था पहले से खराबी की ओर ही जा रही है। गरीब धीरे-धीरे और ज्यादा गरीब हो कर, अस्तित्वहीन होते जा रहे हैं। नयी परिस्थिति में सोनाईपरिया निष्ठुर हो गये हैं, असत हो रहे हैं, पुराने और नये की खींचतान से आशाहीन हो रहे हैं। शिक्षा के प्रसार के अभाव में, लोगों के मन में, नयी नीति बोध का जन्म नहीं हुआ है। सोनाईपरिया लोग, उदार मन से जीवन को नापना नहीं सीखे हैं। किसी एक युग में, शायद उपयोगी पुरानी प्रथा को, अब तक पकड़े हुए हैं।

भोगराम भी नयी परिस्थितियों के साथ अपने को मिलाकर चलने की कोशिश कर रहा है। किंतु दिन-ब-दिन, वह उपायहीन होता जा रहा है। भोगराम के पिता, उसके लिए ज्यादा जमीन जायदाद नहीं छोड़ गये थे। सिर्फ एक-दो बीघा जमीन। वह इसके लिए गलती से भी, कभी बाप को दोष नहीं देता। उन लोगों

के जमाने में, जमीन उतनी कीमती चीज नहीं थी। सोनाई के पार में सामग्री प्रचुर थी। अभावहीनता ने उनकी दूर-दृष्टि समाप्त करने के कारण ही, बेटे के लिए, ज्यादा जमीन-जायदाद छोड़ जाना, प्रयोजनीय नहीं समझा था। उनके जीवनकाल में, कृषक का जीवन स्थावर और स्वच्छल था। वैसे समय में मनुष्य की उच्च आकांक्षा और लौकिक उन्नति के मोह का शिथिल हो जाना स्वाभाविक ही था। तब मनुष्य को चिंता थी, परजन्म की सद्गति के विषय में। धर्म की भूल व्याख्याओं ने भी, लोगों को कर्म विमुख कर दिया था। इन सबने, मनुष्य के सामाजिक इतिहास में, केवल पूर्व पुरुष की परंपरा ही प्रतीत की है।

भोगराम ने बाप की मृत्यु के बाद ही अनुभव किया था कि वह तो जमीन छोड़ गये हैं, उसके आसरे पर उसका भविष्य नहीं बन सकता। उनके जीवनकाल ही में भोगराम खेती का काम छोड़ने पर मजबूर हो गया था। और व्यापार में लग गया था।

भोगराम का व्यापार कुछ अजीब तरह का था। माघ से बैसाख तक गांव-गांव जाकर धान, दालें, सरसों आदि खरीदता है। और सप्ताह में एक-दो गाड़ी माल, शहर में ज्यादा दाम पर बेचता है। बैसाख से श्रावण तक, वह फुलगुरी, जाजोरी और दलंगघाट के बाजार में सिले हुए कपड़े बेचता है। बाद के चार महीने पटसन का कारोबार करता है। दो-तीन दिन घूमकर, दस-बारह मन पटसन इकट्ठा करके, एक दिन शहर में बनिये को बेच आता है। यह कारोबार काफी हिम्मत का काम है। पटसन का कारोबार जुआ खेलने की तरह ही है। एक गाड़ी पटसन में सौ रुपये का भी मुनाफा हो सकता है और भाव गिरने से मूल रुपया भी जा सकता है। पटसन का बाजार भाव समझना और सुंदर लड़की का मन समझना जैसे एक ही बात है। तब भी साधारणतया भोगराम को नुकसान नहीं होता। वह व्यापार करते-करते सयाना हो गया था। उसका संबल है, एक बैलगाड़ी, एक बैलजोड़ी, एक तराजू, कुछ बाट और पटसन तौलने का एक कांटा। मूलधन भी दो-तीन सौ ही लगता है। उसीसे एक घर का पालन-पोषण हो जाता है। लाभ के रुपये से, अपना ब्याह किया और बहन रूपंती को भी कहोंगुरी में ब्याह दिया। सन अड़तालीस में पटसन का भाव खूब चढ़ा था। उस साल उसने काफी पैसा कमाया था। मकान अच्छी तरह से बना लिया। एक गाड़ीवान भी रख लिया। साईकल भी खरीद ली। घुटने तक की धोती, पैर तक आ गयी। वह

भद्र लोग बन गये। जेब में फाउंटेन पेन भी लगाने लगा। लाल कपड़े से बंधे हुए, बहीखाते में, अपना हिसाब रखने लगा। भात के साथ अचार खाने लगा। चाय के साथ, गाय के घी से, तली हुई लूची खाने लगा। भोगराम कलिता, भोगराम महाजन बना।

सन अड़तालीस की तरह लाभ न होते हुए भी, कई साल से उसका व्यापार अच्छी तरह चलने लगा था। मूलधन में भी बढ़ोतरी हुई। वह धनी न होते हुए भी, मोरापुर गांव के, गोपाल मंडल, केरपाई महरी, जोगेरा बायन और जयराम पंडित से उसकी अवस्था अच्छी हुई। किंतु पिछले दो सालों में कुछ टेढ़ा होने लगा। किसी तरह से भी काम नहीं बना रहा है। वर्षा में थोड़ा ही पटसन बेचा जा सकता है। विशेष लाभ भी नहीं होता। कारण तब से पटसन के भाव में जल्दी उतार-चढ़ाव नहीं हो रहा है। धान और सरसों का कारोबार भी, उसी तरह मंदा। इसलिए उसको व्यापार करना कड़वा लगने लगा। व्यापार के लाभ से ही, घर चलाना पड़ता है। इसलिए वह मौका देखकर, हर तरह के छोटे-मोटे कारोबार में, हाथ डालकर, खींचतान कर घर चला रहा है। तैयार कपड़ों का व्यवसाय हाथ में न लेता तो, घर ही नहीं चलता। आखिर में गाड़ीवान रखने का उपाय भी न रहा। बैलगाड़ी साल में सिर्फ दो महीने ही चलती है। वह भी सिर्फ पटसन के व्यापार के समय में। भाड़े पर लिया आदमी ही गाड़ी चला लेता है।

पांच-छह साल से भोगराम, यह बात, देख रहा है, कि सोनाईपरिया लोग, पहले की तरह, धान नहीं बेच पा रहे हैं। सरसों के खेत में भी 'आहू' (वर्षा के पहले कटने वाला धान) धान बो रहे हैं, पानी न होने के समय उसी जमीन पर, गोभी बैंगन बो रहे हैं। उसी में एक साल छोड़ दूसरे साल सरसों छिटक देते हैं, तब भी लोग, धान सरसों नहीं बेच पा रहे हैं। एक पखवाड़ा घूमने से एक ही गाड़ी पटसन जुगाड़ कर पा रहा है। पर इस रफ्तार से व्यापार का सामान इकट्ठा करने से, व्यवसाय नहीं चलता। उसने यह व्यापार छोड़ ही दिया।

देश में खाने वालों की संख्या में बढ़ोतरी हुई। खेत की लक्ष्मी से, मुंह भरना कठिन होने लगा। भूमि में उर्वरा शक्ति की कमी हो गयी है क्या? सोनाई-परिया भोगराम को, यह दो कारण, सच मानना कठिन लगा। पर पटसन की फसल अब तक पहले की ही तरह है। समय पर खरीदना भी मिलता है। हां,

पर पटसन तो खाया नहीं जा सकता। तदुपरांत पटसन बोने से, एक ही हिस्सा जमीन में, दो बार खेती की जा सकती है। कारण पटसन काटने के बाद पानी कम होने से ही 'शालि धान' (शीतकाल में पकने वाला धान) रोपा जा सकता है। इस अंचल में, पटसन बोने वाले, कुछ घरों की हालत हीं अच्छी है। जिनकी भूमि पटसन बोने लायक नहीं है, उन लोगों की हालत बड़ी खराब है। एक समय ऐसा भी था, जब सोनाईपरिया लोगों ने, पटसन का मोल समझा ही नहीं था। गाय बांधने की रस्सी के लिए ही दो-चार गज जमीन में पटसन बो देते थे। प्रथम महासमर के बाद ही, इसकी खेती के प्रति लोग आकर्षित हुए।

भोगराम की हालत खराबी की ओर जाते हुए भी, उसे एक बात का आश्वासन है कि धान का व्यापार खराब हो रहा है, इसलिए कि 'बाउ धान' (एक किस्म का धान) की जमीन में, पटसन बोया जा रहा है। और सोनाई पार, पटसन की फसल उगती रहने से, उसका व्यापार भी चलता रहेगा। उसके अलावा पटसन बेचकर, लोगों को जो रुपया मिलेगा, उससे उनकी खर्च करने की क्षमता भी बढ़ेगी। इसलिए उसका तैयार कपड़े बेचने का व्यापार भी चलता रहेगा। किंतु पिछले दो महीनों में वह बहुत हताश हुआ है। बेबेजिया से हाथीपुर तक के रास्ते पर, पत्थर डालना समाप्त हो गया है। रास्ता काफी चौड़ा किया गया है। यही रास्ता, आगे जाकर, सोनाई पार के चार गांव को छुएगा। पिछले वर्षों में, घुटनों जांघ तक कीचड़ पानी से, रास्ता भरा रहता था, पर अब, पत्थर डालने की वजह से रास्ता अच्छा हो गया है। अब शहर तक, पटसन की गाड़ी ले जाने के लिए बड़ी आसानी होगी। बाद में जो भी कुछ सुविधा होगी, पर अभी तो बड़ा घाटा हो रहा है। रास्ते के पत्थर बड़े नुकीले हैं। बाहर जाते हुए, हाथीचुंग से बेबेजिया तक, अल कतकरा डाला हुआ है, फिर भी सदर रास्ते तक पहुंचने से पूर्व, पत्थर कंकड़ उसकी साईकल को कम कष्ट नहीं देते। भोगराम को डेढ़ महीने में दो टायर बदलने पड़े। टायर के दामों में तो जैसे आग लगी है। एक टायर के दस रुपये। छोटी-मोटी दुकान में तो दस रुपये से भी कुछ ऊपर। डेढ़ महीने में, यदि साईकिल पर ही बीस-पच्चीस रुपये खर्च हो जायें तो व्यापार कैसे चलेगा।

भोगराम दो साल से बाप का श्राद्ध भी नहीं कर पा रहा है। सभा या एक भोज देने के लिए, उसके पास उपाय नहीं है। इस बार तीन दिन तक वह बाप को स्वप्न में देखता रहा। उसने समझा कि श्राद्ध में, सिर्फ कच्चे दाल चावल का

प्रसाद और थोड़ी-सी पोथी पढ़कर टाल देने की वजह से पिता की आत्मा रुष्ट हुई है। इसीलिए मोलाई मोहरी से पच्चीस रुपया कर्ज लेकर, जेठ महीने की अट्ठाईस तारीख को किसी तरह बाप के श्राद्ध में लोगों को बुलाया। आज दो महीने हो गये पर मोहरी को रुपया वापस नहीं कर पाया है।

मां के साथ बासंती के मामा के घर जाने के दूसरे ही दिन मोलाई मोहरी सुबह-सुबह पैसे लेने आया था। मोहरी ने कड़ी बातें सुनायीं। भोगराम ने जीवन में, पहले कभी ऐसा अपमान नहीं सहा था। जो मोलाई मोहरी एक दिन उनके घर दूध बेचता था और पैसा लेकर बगीचे में काम करता था, उसी मोलाई मोहरी के मुंह से बड़ी बातें सुनने से पहले उसके दोनों कान बहरे क्यों न हो गये ? भोगराम के बदन में आग लग गयी। उसने बड़े धीरज से काम लिया और मोहरी को मारा नहीं। उसने प्रतिज्ञा की कि दो दिन के अंदर ही वह रुपया वापस कर देगा।

साईकल की हालत खराब होने की वजह से वह दो सप्ताह से फुलगुड़ी हाट नहीं जा पाया। दूसरे दिन शनिवार था इसलिए कपड़ों की पोटली साईकल पर रखकर फुलगुड़ी हाट पहुंच गया। हाट पहुंचते ही वह हैरान हो गया। सिले हुए कपड़ों की दुकानें ही दस-बारह हैं। पर वहां तो हर तरह के कपड़ों से दुकानें जगमगा रही थीं। सब व्यापारी शहर के थे। फुलगुड़ी के ही धान, पटसन का व्यवसाय करने वाले गेरुआ महाजन भी इस कारोबार में लग गये थे। उसने भी एक बड़ी दुकान खोल ली है। इन दुकानों में रंग-बिरंगे विविध पसंद के कपड़े होने की वजह से, खरीदारों के झुंड लगे हैं। उसके अलावा इन शहरी दुकानदारों के व्यापार करने का कैसा अनोखा तरीका। वह लोग खरीदारों को आदर-सादर से बुलाकर बीड़ी-सिगरेट भी पिला रहे हैं। इधर मामूली कपड़ों की दुकान वाले, भोगराम की ओर कोई देखने वाला भी नहीं है। वह आकाश-पाताल की सोचता है। दस बजे तक, उसे बिक्री की आशा भी नहीं है। दुखी मन से उसने सब कपड़े समेट लिये, उसके मन में बहुत-से प्रश्न उभरे। गांव में, दिन-ब-दिन, मिल के कपड़ों की बिक्री बढ़ती जा रही है। औरतों को भी, मिल की तैयार पतली चादर न पहनने से, बदन को जैसे चैन नहीं पड़ता। बरबस यह शौक कहां से पैदा हुआ। विलासिता में वृद्धि देखकर, ऐसा लगता है लोगों की हालत अच्छी हो गयी है क्या ? नहीं, लोगों की हालत अभी तक ठीक नहीं हुई

है। यह सिर्फ एक-दूसरे की देखा-देखी की हवा है। किंतु यह तो गांधी का देश है। आंदोलन के समय, नेताओं ने, जनता को कहा था, कि एक घर में एक चर्खा चलने का अर्थ, विलायत में यंत्र-चलित एक मिल का बंद होना है। अपना कपड़ा स्वयं बुनने का अर्थ है, स्वावलंबी होना। कहते थे, चरखे पर ही, देश की उन्नति निर्भर है। ऐसी बातें, गांधीजी सारा जीवन कहते रहे और खुद भी सूत कातते रहे। अब गांधीजी नहीं हैं, इसलिए चरखे की गुनगुन आवाज बंद हो गयी क्या? पहले भाषण देने वाले नेताओं ने, अब अपने मन परिवर्तन कर लिये हैं क्या? लोगों को सूत कातने में आलस्य लगने लगा है क्या? गांव की सारी औरतें फूहड़ हो गयी हैं क्या?

विफल मनोरथ और दुखी मन से हाट छोड़कर, वापस आते समय, भोगराम ने सोचा, गांव के लोग यदि स्वराज्य के दिन की तरह हाथ के कते सूत के कपड़े पहनते थे तो, इन व्यापारियों को, लोगों को भड़काना, इतना आसान नहीं होता था। और वह भी आज इतनी शोचनीय दशा में उनके सामने हार नहीं मानता था। लोगों को पहनने ओढ़ने का पहले जैसा अभ्यास होता, तो वह अपने घर के दो करघों से ही, काफी पैसा अर्जित कर सकता था।

हाट छोड़ कर, सदर रास्ते पर पहुंचते समय, हाट के एक और महाजन तिलक से भेंट हुई। इस बार, तिलक ने, यह हाट, सालाना बीस हजार के टेके पर लिया है।

"क्यों भाई महाजन, इतनी जल्दी बाजार छोड़ दिया ?"

"हां, भई मत पूछो, बिक्री नहीं है। सिलहटिया व्यापारियों ने हमारे पेट पर लात मार दी है। उन लोगों के साथ किसी तरह ताल मिलाई नहीं जा सकती। हां, अचानक इतने सारे लोग कहां से आ गये ?"

"आह, तो तुम भी, बहुत-सी बातें नहीं जानते हो। आज आठ दिन हो गये। इस तरफ दिन में तीन बार सर्विस बस आती है। एक भूरबंधा तक जाती है, और एक मयोग और दूसरी रहा तक जाती है। बस चलने से ही, यह लोग आने-जाने लगे हैं। हाट भी पहले से बड़ा हो गया है।"

तिलक की बात सुनकर, भोगराम ने कोई अभिमत नहीं दिया। उसने एक दुख की सांस ली। आज से फुलगुड़ी हाट आने का प्रयोजन नहीं होगा। वह जाजोरी और दलंग घाट के हाट में ही, व्यापार कर सकेगा। उसने भगवान से

विनती की, कि इनके इस हाट में, शहर के सिलहटिया व्यापारी न पहुंचने पायें।

दोपहर के खाने के बाद, पत्नी के, बासंती को जल्दी ही कहीं ब्याह देने की बात निकालते ही, वह गुस्से में चिल्लाकर बोला, "तुम औरतों को और चिंता नहीं है। सिर्फ, ब्याह, ब्याह और ब्याह। अरे उसके लिए वर का इतना ही आकाल हुआ है, तो पेड़ के नीचे बैठे हुए बाबाजी को ही क्यों नहीं दे देते। औरतों में धीरज जैसी कोई वस्तु है ही नहीं।"

"इतना गुस्सा क्यों ? मैं क्या दुनिया में न होने वाले काम के लिए कह रही हू। और आपकी तरह ही बहुत से मर्द भी, एक ही आवाज से कहेंगे, 'जवान लड़की वन के बाघ समान'।"

"और मैं भी, उस बाघ के मुंह में, लगाम लगाना जानता हूं। समझी तरु, यह सब चिंता अब छोड़ दे।"

एक-दो महीने के बाद ही समझ जाओगी कि बासंती का भाई, उसकी शादी करना छोड़, उसका पालन-पोषण भी कर सकेगा या नहीं, उस पर भी संदेह है।"

"आज आप कैसी बातें कर रहे हैं ? मुझे कुछ समझ में नहीं आ रहा है।"

भोगराम ने पहले से सुस्थिर होकर, उस दिन फुलगुड़ी हाट में जो उसकी दुर्दशा हुई, उसके बारे में बड़े दुखी मन से बताया। तरुलता का मन बिलकुल बैठ गया। बासंती के बारे में, गोपनीय कहानी बताने की जरूरत नहीं समझी। वह शायद गुस्से से जल जायेंगे, हित से विपरीत हो जायेगा।

उस रात भोगराम को नींद नहीं आयी। बहुत-सी आशंकायें कीड़े की तरह उसके मन की शांति को कचोटने लगीं। दो महीने में ही 'गढ़ कप्तानी' विभाग का पत्थर-कंकड़ बिछा रास्ता बेबेजिया से जाजोरी तक पहुंच गया। उनके गांव तक पहुंचने के लिए और कितने दिन लगेंगे ? देश में रास्ता, पथ अच्छा होने .ड़ों जनता का मंगल होता है, यह जनता खुद स्वीकार करती है और अखबार भी पुनः-पुनः वही बात लिखते हैं। किंतु उसे आज ही समझ आया कि यह नया रास्ता जैसे उसको काल सर्प बन कर लिपट जायेगा। लेमलेमीर का मजबूत लकड़ी का पुल, अगर वह निमिष में जला कर, खाक कर दे सकते थे तो ! बेरचुक के बांस का पुल तोड़ कर, अब लकड़ी के खंभे गाड़े जा रहे हैं, उसका मतलब .[illegible] है कि सभी पुल लकड़ी के हो जायेंगे। लकड़ी का पुल होने से, [illegible] - पार तक मोटर चलेगी। मोटर का नाम लेने से ही, उसका दिल [illegible] ठता है ! मोटर

[illegible]

चलने की वजह से ही, उसे फुलगुड़ी हाट से चिर विदा लेनी पड़ी।

उस दिन से भोगराम दलंग घाट और जाजोरी हाट जाने लगा और दूसरे व्यापार भी किसी तरह चलाता रहा। पर उसमें, पहले जैसा उत्साह नहीं रहा। वह सहमे-सहमे, दिन बिताने लगा। साधारण बातों पर भी, उसे गुस्सा आने लगा था। तरुलता कई बार, कोशिश करते हुए भी, बासंती के बारे में, असली बात करने का साहस नहीं कर पायी।

मां और बासंती एक दिन कंहिगुरी से वापस आ गयीं। भोगराम ने उन लोगों से मामा के घर के बारे में कुछ नहीं पूछा। उसे तो बस एक ही चिंता है। उसको बहुत से रुपये का मूलधन चाहिए। नहीं तो उसका व्यापार करना बेकार है। किंतु मूलधन कैसे जुगाड़ होगा! यह तीन महीने भी लाभ के रुपये से घर नहीं चला है। व्यापार में लगा हुआ रुपया दिन-ब-दिन कम होता जा रहा है।

सात

बरसात आयी। आकाश ने नये-नये रूप दिखाये। नद नदी को यौवन मिला। सोनाई पानी से भरपूर हो गयी। हरी लक्ष्मी के भार से खेत झुक गये। 'शराली' (एक तरह का जल पक्षी) वन हंस, और 'कामपक्षी' के वर्ण वैचित्र्य ने, खेत का नीरव गांभीर्य, मुखर कर दिया। झुंड बांध कर, विविध 'वन पक्षियों' ने मेघ और मिट्टी के बीच मित्रता स्थापित की। पाभचिला, जलमई गांव और मेरापुर के वन को सुशोभित करते हुए मोर पक्षी ने, केश वर्ण मेघ के गर्जन से, आत्महरा होकर, नृत्य किया। 'डाउक' और मछुआरा पक्षी के शोर ने याद दिलाया कि सब्ज लक्ष्मी से ढकी हुई उज्वल जल राशि में, मेघाली, सोनाली और रुपाली मछलियां छलक रही हैं। काम पक्षी के पांव, जैसे बाऊ धान के बीच, मांग जैसे पानी के रास्ते से नौका की तरह आने-जाने लगे।

फूलों में कलियां लगीं। कहुंवा विरिणा भी (तरह-तरह का धान) सब्ज रंग से प्रा[illegible] हो उठा। नाले-खड्डे सब पानी से पूरे हो गये। मेढकों की दिल खोल आवाजों म[illegible]ली। [illegible]नाई का क्लांतीहीन स्रोत का वेग बढ़ गया। सोनाईपरिया गांव, प्रकृति की [illegible] घाट के [illegible]मा से सरस हो उठा। सोनाईपरिया लोग भी, प्रकृति

के नूतन रूप में, हिल-मिल गये। वर्षा के उद्भ्रांत असंयत प्राणमय वैषम्य के साथ, ताल मिलाकर चलने के लिए, मनुष्य ने भी अनुरूप साहस जुटाया। शुरू हुआ मछली पकड़ने का नशा, सोनाई के वक्ष में, कौशल से नौका चलाकर, दु:साहसिकता से जिंदा रहने का नशा। यही समय है पटसन काटना, पटसन भिगोना और पटसन छीलने का। यही पटसन बेचकर, सारे साल के लिए पैसा बनाने का समय।

खेत में गीले पटसन की गंध ने, किसानों में पहले की ही तरह, धन का लालच जगाया। आंगन-आंगन, बांस के डांड में, लड़की-बहुएं पटसन फैलाकर, शरद पूर्णिमा का स्वप्न देखने लगी हैं। सोनाईपरिया कर्म जीवन छंद में, एक बन गीत मिल गया।

जब भी श्रावण की चिकमिक बिजली से अशांत आकाश की वारिधारा ने नद-नदी का पानी बढ़ाया तब उप-नदियों का भी पानी बढ़ा और लोगों का उत्साह भी बढ़ गया। पर भोगराम का मन पहले जैसा ही रहा। क्योंकि नदी का पानी जैसा पटसन का दर भी बढ़ता गया, फिर भी उसके व्यापार में बढ़ोतरी नहीं हुई, खुद नौका चलाकर, दिन में दो-तीन बार सोनाई के इस पार उस पार किया। घर-घर पटसन ढूंढ़कर हड्डी की मिट्टी और खून का पानी किया, पर एक सप्ताह दस दिन के अंदर, लाभ करने वाले दर में, वह एक रस्सी भर भी पटसन का जुगाड़ न कर सका : सब लोग सियाने हो गये हैं। वह दरो दाम की काफी खबर रखने लगा। पहले कांटे को टेढ़ा करके, नाप में भी इधर करके, वह मुनाफा कर लेता था। अब वह भी संभव नहीं है। लोग यह सब चाल समझ गये हैं। किंतु एक साल में ही लोग इतने चालाक कैसे हो गये ? उसी की तरह व्यापार करने वाले साकीराम ने बताया कि पटसन काटने के पहले, सोनाईपरिया गांव में कई मारवाड़ी महाजन आये थे। वह लोगों को बयाना देकर गये थे और कहा था कि पटसन हमेशा 'पद्म कांटे' (एक तरह का तराजू) में तोलकर ही बेचना चाहिए। पाकिट वाले छोटे कांटे का तौल ठीक नहीं है। पत्थर डाला हुआ पक्का रास्ता, सोनाई के दक्षिण तक आ पहुंचा, इसीलिए शहर के सब व्यापारियों को आने का मौका मिला। यही रास्ता साधारण व्यापारियों का काल बना।

लेमलेमीर का पुल और हाथीचुंग जाजोरी के बीच का पुल चैत्र बैशाख में ही

बन गया था। श्रावण में इंजीनियर ने परीक्षा करके, कितने वजन वाला यान-वाहन पुल पार कर सकते हैं, उसका निर्धारण कर दिया। पुल के सामने साईन बोर्ड लगा दिया। 'मैक्सिमम टनेज' लिखा गया। बेबेजिया से दलंग घाट तक तैयार किये गये नये, रास्ते पर से ट्रक, बस आदि की आने-जाने की अनुमति सरकार ने दे दी। उसी के फलस्वरूप, भोगराम और उस जैसे बहुतों को चर्म-विपद का सामना करना पड़ा।

दलंग घाट सोनाई का ही एक घाट है। भोगराम के अपने गांव मोरापुर से शायद एक मील पश्चिम में होगा। सोनाई से नौका में आने से शायद एक फर्लांग कम होगा। जाड़े में हर साल, इस घाट पर, एक बांस का पुल तैयार किया जाता है, इसीलिए इस घाट का नाम 'दलंग घाट' अर्थात् 'पुल घाट' कितने दिनों से कहलाया जा रहा है, इसका अता-पता सोनाईपरिया लोग नहीं जानते। दलंग घाट के दक्षिण में 'मनीपुर-बरि' नामक भूमि गोचारण भूमि संलग्न। उसी घाट के नजदीक दलंग घाट का बाजार लगता है। वही बाजार उत्तर पार और दक्षिण पार के लोगों का संजोग स्थल है। भोगराम के सिले हुए कपड़ों का व्यापार यहां अच्छी तरह चलता है। वर्षा काल में सोनाई पार के दूर गांव के लोग, नौका से यहां पटसन लाते हैं। भोगराम यहीं से कम कष्ट से पटसन खरीदकर, शहर में बेचकर, लाभ करता आ रहा है। किंतु इस वर्षा काल में, उसका कपाल मंद। दलंग घाट के बाजार में बहुत पटसन आया है। परंतु कीमत बहुत चढ़ गयी है। इतने दाम में खरीदने से उसे मुनाफा नहीं मिलेगा।

पत्थर-कंकड़ का रास्ता सोनाई तक पहुंचने के एक पखवाड़े के बाद ही, एक रविवार उसे इतने संकट, और हताशा का सामना करना पड़ा कि वह अपना अस्तित्व अनुभव करने की मानसिक शक्ति खो बैठा। वह बाजार वाले दिन, खाली बैलगाड़ी के पीछे, कंकड़ वाले रास्ते से साईकल खींचकर आ रहा था। उसका उद्देश्य था, दलंग घाट के बाजार से पटसन खरीदने का, किंतु रास्ते में बड़े-बड़े ट्रकों से उड़ती धूल के बीच, वह और उसकी बैलगाड़ी लीन हो गयी। बाजार पहुंचकर उसने देखा, शहर से पटसन का कारोबार करने वाले, धनी मारवाड़ी महाजन बाजार में आए हुए हैं। ऊंचे खंबे गाड़कर बड़े-बड़े 'पद्म कांटे' तानकर, अभिराम पटसन तोल रहा है। थोड़े से समय में पर्वत के समान पटसन को ट्रक

पर लादकर, टाऊन ले जा रहे हैं। वह कहीं से भी एक मन पटसन न खरीद सका। मन के दुख से और अपनी क्षुद्र शक्ति का परिचय पाकर, उसने लाज से अपना कांटा जेब में डालकर छिपा दिया। अब लोगों को उसे पटसन बेचने का प्रयोजन नहीं। जिन-जिन महाजन को वह पटसन बेचकर नफा उठाता था, अब वही महाजन, खुद ही बाजार आकर, उपजकारियों से सीधे-सीधे पटसन खरीद रहे हैं। चिर-परिचित दलंग घाट में, जाने-पहचाने खरीदार और बिक्रीदार के सामने, वह अपना मुंह दिखाते हुए लाज और अपमान का बोध करने लगा। दस बजने के पहले ही वह बाजार से चला आया। घर आकर, वह पहले घर के पीछे की तरफ, ठनुआ घाट में अकेला ही बहुत देर बैठा रहा। अकेले में वह सोनाई के सामने रो पड़ा। उसके जीवन में आज सबसे बड़ी पराजय हुई। यह हार एक दिन उसे खत्म कर देगी। दरिद्रता उसके जीवन की सब आशा-भरोसा और सुख-संपदा छीन लेगी और दारिद्रय जैसी वस्तु को वह अंतर से ही घृणा करता है।

दो दिन तक वह घर ही में घुसा रहा। घर में किसी ने उससे बातचीत नहीं की और कपाल में चिंता की रेखा देखकर, घर में भी कोई उसे अपने से बुलाने का साहस नहीं कर पाया। इस नये संकट से, उद्धार पाने का, कोई नया पथ वह खोज नहीं पा रहा था। सोनाईपरिया संपद और प्रकृति का माधुर्य ही उसको जैसे सता रहे थे। उसने सोचा था, समय ने उससे प्रतिशोध लिया है, प्यारी सोनाई आज से उसकी दर्दहीन सौतेली मां जैसी हो गयी!

तब भी वह पराजय की ग्लानि सहन करने के लिए सहमत नहीं हुआ। जेब में कांटा लेकर, वह सोनाई पार के सब गांव घूमा। पर चार-पांच दिन घूमने से भी एक गाड़ी पटसन जुगाड़ नहीं कर सका। इस बीच खरीदार का मन पलट गया। अक्सर लोग, दलंग घाट बाजार के जरिये ही ज्यादा रुपये के मालिक बनने का सपना देख रहे हैं। इस बाजार में लेने से ही अगर शहर का भाव मिलता है, तो किरकिरी करके स्थानीय व्यापारी को पटसन बेचने का क्या प्रयोजन? तदुपरांत दलंग घाट में जो मारवाड़ी महाजन शहर से आते हैं, कहते हैं, वही पटसन का बाजार भाव, उतार-चढ़ाव करने के कर्ता-धर्ता और विधाता हैं। उनका खरीदा हुआ पटसन सीधे कलकत्ते की मिलों को भेजा जाता है।

भाद्र शेष होने से पहले ही भोगराम पूरी तरह से टूट गया। व्यापार का असली समय आने के पहले ही, उस पर चरम विपत्ति आयी। देखते ही देखते चार

महीने में ही उसको फुलगुड़ी हाट में, सिले हुए कपड़े बेचने का काम बंद कर देना पड़ा। सोनाईपरिया गांव में, पटसन खरीदने का रास्ता बंद हो चुका था। दलंग घाट के बाजार में, वह पटसन बेचने वालों से, दाम पूछने के लिए भी डरने लगा। आखिर में उसने सोचा उसके पास कोई अन्य उपाय नहीं। जाजोरी और दलंग घाट के बाजार में वह कपड़े बेचकर अन्न संग्रह कर सकेगा। कारण कि अभी तक, शहर से सोनाई पार तक, सर्विस बस नहीं चली, इसलिए शहर के ढाकई पट्टी के व्यापारी, इन दो हाट में नहीं पहुंच पाये हैं।

आठ

आशा-निराशा और बहुत-सी छोटी-मोटी घटनाएं पीछे छोड़कर, समय आगे बढ़ता गया। बासंती के इन कई महीनों के आचरण से सुजला और तरुलता मोहित हो गयीं। बासंती आजकल घर में ही रहती है। ठनुआ घाट पर जाने से भी वहां ज्यादा देर नहीं रुकती। मां को हर रोज पोथी पढ़कर सुनाती है। मन की सारी आशाएं आकांक्षाएं लंबे सूत के धागे की तरह, करघे में अटककर रह गयी हैं। वह पहले से ज्यादा मनोयोग से करघे पर बुनने लगी है। ग्रामीण लड़की को, प्रीत का स्पर्श भी असीम धीरज प्रदान करता है। अब धनंजय का स्मरण उसके जवान मन को बेचैन नहीं करता। उसके साथ शादी न होने तक, उसके बारे में सोचने का उसको कोई अधिकार नहीं। चंदोके 'मेरघर' (गोलाकार) के छोटी-सी औख से न दिखने वाले, छिद्र से पाप-रूपी सर्प को प्रवेश नहीं करने दिया जा सकता। यह पाप सोनाईपरिया की धारणा का पाप है। होम अग्नि को साक्षी करके, मंत्र उच्चारण के पश्चात, सोनाईपरिया नवयुवती मन में काम-वासना को आश्रय दे सकती है; देह की चंचलता को भी, आत्म-समर्पण से, सहनीय बना सकती है। यही है सोनाईपरिया का पारंपरिक नैतिक बोध। बासंती अपने जवान मन को संयत करके ही, भविष्य का रंगीन सपना देखती है। आजकल ठनुआ घाट के आस-पास धनंजय दिखाई नहीं पड़ता। सुना है कि वह आजकल मेरापुर से होकर शहर जाता है।

उसे केवल मां से ही अशांति है। आंखों के जाले कटवाने के बाद ऐनक लगाने

से उसे कुछ दिन फायदा हुआ था। किंतु अब फिर देखने में दिक्कत होने लगी है। ऐनक भी कोई काम न देने लगी। मां का हाथ से टटोल-टटोलकर घूमना-फिरना, उससे बर्दाश्त नहीं हो रहा है। किंतु इस समय चिकित्सा कराना भी नामुमकिन है। घर की अवस्था, हर दिन, हीन होती जा रही है। तब भी एक दिन बड़े भाई से कहकर देखा। कंहिगुरी से सुनकर आये हैं कि दो तरफ भाग किया हुआ एक तरह का नया चश्मा निकला है। इस शीशे के ऊपरी भाग से दूर की वस्तु पहचानी जा सकती है और नीचे के हिस्से से नजदीक की चीज देखने में सुविधा होती है। इस तरह की ऐनक में करीब दस रुपये खर्च होते हैं। बड़े भाई उस दिन दलंग घाट के बाजार से अपनी पराजय का बोझ लेकर घर लौटे थे। बाजार में वह सिले कपड़े बेच नहीं पाये थे। इस बाजार में भी फूलगुड़ी जैसी हालत थी। तीन दिन पहले से, अर्थात अगस्त की पंद्रह तारीख से, नगांव से दलंग घाट तक दैनिक दो बस सर्विस चलने लगी हैं। दलंग घाट का रविवारीय बाजार ढाकई पट्टी के व्यापारियों से भर गया। मंगलवार को जाजोरी बाजार में भी उनकी वही हालत होगी। इस महीने के अंदर ही उसे व्यापार छोड़ने को मजबूर होना पड़ जायेगा। फलस्वरूप मूलधन के रुपये से ही उसे घर का खर्च चलाना पड़ेगा। वह रुपया खत्म हो जाने से उसकी प्यारी साईकल भी बेचनी पड़ेगी। उसके बाद शायद फुकन पठार की तीन 'हलिसा' (दो हलिसा का एक बीघा होता है) जमीन मोलई मोहरी को बेचनी पड़ेगी। मोलई ने कर्ज के पच्चीस रुपये मांगे थे तब उसने अपमान बोध किया था। पर मोलई की बात ठीक ही निकली। एक दिन ऐसा भी आयेगा कि भोगराम को अपनी पैतृक संपत्ति देनी पड़ेगी।

ऐसी मानसिक अवस्था में बासंती की मां के लिए चश्मा खरीदने की बात सुनकर, भोगराम को जैसे आग लग गयी। उसने पीती हुई बीड़ी का टुकड़ा वितृष्णा से फेंककर बासंती को कड़वी बातें सुनायीं, "तुम सब औरतें मिलकर मेरा सिर खा गयीं। मैं जब तक मारवाड़ी का गाड़ीवान न हो जाऊं, तब तक तुम लोग मुझे छोड़ोगे नहीं। मुझे पूरा यकीन है। तुम्हारी मां को चश्मा चाहिए, तुम्हें चश्मा नहीं चाहिए क्या ? अब तो लड़कियों को चश्मा लगाकर, स्टाइल करके सड़क पर फिरने का समय आ गया है।"

वह समझती थी कि बड़े भाई उसे बहुत प्यार करते हैं। अब तक उसे कभी ऐसी बातें नहीं कही थीं। पर अब हठात भोगराम की ऐसी ताना देनेवाली बात

सुनकर वह फफककर रो पड़ी। वहां से फौरन चली गयी। सोने वाले कमरे में घुस गयी। रात को तरु और सुजला की खुशामद-बरामद भी उसे खाने के लिए राजी नहीं कर सकी। वह सारी रात रोती रही। आंसुओं से तकिया भीग गया। सोनाईपरिया नवयुवती की सहिष्णुता हार गयी। वह भोगराम को शत्रु समझने लगी। पैदाइशी घर कैदखाना लगने लगा। सुजला और तरु की प्यार भरी बातों में भी उसे कपटता का ही इंगित मिला। उसकी सजल आंखों से धनंजय देवता होकर दिखायी देने लगा। उसका सोनाईपरिया संयम का बांध विश्रंखल अनियमित बाढ़ ने आकर तोड़ दिया। उसने जैसे अमावस्या की रात में अकस्मात उल्का की किरण देखी। जीवन में प्रथम पुरुष की सार्थक चिंता और प्यार के संजीवनी स्पर्श ने, उसके मन की सब दीनता दूर कर दी। अगले दिन से वह फिर से पहले जैसी बासंती बन गयी। उसकी पूरक मोहनीय देह के साथ मन ने मित्रता कर ली। मधुर अतृप्ति और आशा से भरी नदी में उसके मन को पूर्णता मिली। ठनुआ घाट के आम, जाम, कदंब और केले के पेड़ की छाया में बैठे रहना, उसे अच्छा लगने लगा। शरद काल में सोनाई के निर्मल जल में उसने संसार का प्रतिबिंब देखा। सोनाई में छप-छप डांड चलाकर आगे जानेवाले, नौकावार के गीत में उसने सुनी, दूर सुदूर की वाणी। बासंती सोनाई के किनारे पर, देर-देर तक, अकेली बैठी रहकर भी बेजार नहीं होती थी।

बासंती ने बाहर वाला कमरा पहले की तरह सजाया। सोने वाले कमरे की छत से पानी टपकता है। खेर (घास की छत) की छत के मकान के दो खंबों में दीमक लग गयी है। रसोई घर को दीवार टूटकर, सियार घुसने के काबिल हो गयी है। धान का गोदाम घर, उत्तर की तरफ टेढ़ा हो गया है। घर के हर कोने के अलावा, लोगों के चेहरों और पोशाक से भी अभाव के चिह्न दिखायी दे रहे हैं। ऐसे में सामने का घर, पहले की तरह सजाना, कौए के पर में, मोर के पंख लगाने की तरह होगा। तब भी बासंती ने कुछ भी अमेल महसूस नहीं किया। क्या जाने किसी दिन धनंजय आ जाये तो! वह उनके घर के बाहर का हाल देखकर निश्चय ही उसके मन का हाल भी जान जायेगा।

खाली पेड़ में जैसे नये पत्ते निकलकर बसंत ऋतु अपने गौरव की घोषणा करती है। उसी तरह से बासंती की प्रेम तृष्णा ने प्रातईक दैन्यता को भी मधुर बना दिया है। प्रेम का अपार्थिव विकल्प, रक्त-मांस का रूप लेकर, अपनी रंगीन

माधुरी का वितरण कर रहा है।

बादलों में नित्य नूतन रंग भरकर, शरद ऋतु बीत गयी। हेमंत के आगमन में सोनाईपरिया जीवन में विश्राम आया। पेड़ फल देने लगे। धान के पौदों में अंकुर फूट गये। सूखे मौसम ने तालाब, नालों, का पानी सुखा दिया। मछुओं ने सोनाई में बड़े जाल डालकर 'रोऊ-सीतल' पकड़ी। घर-घर में खोल मृदंग की थाप ने, हेमंत के शांत वातावरण को मुखर कर दिया। सोनाई पार में बांसुरी, 'पेपा' और 'गगना' के बोल से, मन नाच उठा। फसल काटने की आशा में, सोनाईपरिया कंगाल कार्तिक महीने का दुख भूल गये।

आखिर एक दिन धनंजय उनके घर आया। भोगराम आजकल अक्सर घर में ही रहता है। उसने थोड़ी देर तक भोगराम के साथ बात की। बासंती उसके सामने दो बार आयी-गयी। उन दोनों की आज शहर जाने की बात है। भोगराम के पास जितने 'हलीसा' जमीन है, उसी पर दिल लगाकर, खेती करने का निश्चय किया है। लेकिन खेती के लिए बैल नही हैं। इसलिए कृषि ऋण लेने के बारे में सोचा है। उसने एक दरख्वास्त दी है। धनंजय की शहर में बहुतों से जान-पहचान है। और वह अफसर को समझा-बुझाकर बात कर सकेगा, इसलिए भोगराम ने धनंजय की मदद से कर्ज का रुपया पाने की आशा की। इसीलिए धनंजय भोग-राम के अनुरोध को मान करके ही बहुत दिनों बाद इधर आया है। वह इस बीच बासंती के आचरण से असंतुष्ट था। तीन महीने पहले जब वह आया था तो वह उसके सामने नहीं निकली थी। ठनुआ घाट पर भी दो दिन उसे देखकर भाग गयी थी।

धनंजय को बाहर बिठाकर भोगराम अंदर खाना खाने बैठ गया। धनंजय खाना खाकर आया है, इसलिए उसे चाय का एक प्याला देने के लिए भोगराम ने आदेश दिया। बासंती चाय लेकर उसके सामने खड़ी रही। उसने मुंह फेर लिया, कुछ बोला नहीं। बासंती ने जब चाय कहा, तब भी अनसुना कर दिया। बासंती की आंखें गीली हो गयीं। सिसकी की आवाज सुनकर धनंजय का पुरुष हृदय आखिर कोमल हो ही गया। शोक भरे कंठ स्वर से उसने आतुर होकर कहा, "बासंती!"

"धन!"

बासंती ने दोनों आंखें आंचल से पोंछीं।

"तुमने मुझे क्यों नहीं बताया कि तुम मुझे अपना समझती हो। मैं एक साधारण आदमी हूं। मैं तो इधर-उधर घूमनेवाला आदमी हूं। मेरी मां नहीं, बाप नहीं, कोई भी नहीं है। मैं एक परदेसी हूं।"

"तुम कब से इतने कठोर हो गये हो ? मुझे कष्ट देकर तुम्हें शांति मिलती है क्या ? इन चार महीनों में तुम एक बार भी नहीं आये ?"

"मुझे समय नहीं मिला, पाभचिला में हैजा फैला था, कुत्ते और सियार की तरह इंसानों की मौत देखकर मैं सब कुछ सारहीन समझने लग गया था। उनके लिए अविराम खटते हुए भी कोई एक चिंता मुझे कांटे की तरह चुभ रही थी और तुम भी मुझे···"

"अब उन सब बातों को जबान पर मत लाओ धन ! मेरी शपथ ! मुझसे भूल हो गयी थी। मुझे क्षमा कर दो।"

"बासंती, मेरी आंखों में देखकर तुम एक बात कह सकोगी ?"

"मैं दिल से कह रही हूं। मैं तुम्हारे लिए सब कुछ छोड़ सकती हूं।"

सिसकियों के बीच निकले हुए उसके स्वर से धनंजय काफी प्रभावित हुआ। उसने उसको बताया, "मैं इस समय तुम्हारे बड़े भाई को और तकलीफ नहीं देना चाहता हूं। उनका व्यापार गिर गया है। खेती में लगकर, यदि अवस्था सुधर गयी तो एक दिन उनसे बात करूंगा। ठीक है ना ?"

धनंजय के मुंह से ऐसी बातें सुनकर उसने निर्वाक् विस्मय से उसके मुंह की ओर देखा। इतने में अंदर से भोगराम की आवाज सुनायी दी।

"डाक्टर को तांबूल पान दिया है क्या ?" उसका खाना खत्म हो गया। बाहर से उसकी आवाज करीब आने लगी, इसलिए बासंती फौरन धनंजय के पास से चली गयी और अंदर जाकर सुपारी काटने लगी। उसके मन में बिजली-सी चमक गयी।

धनंजय और भोगराम को शहर जाते देखकर, बासंती ने सोचा, साले-बहनोई के हिसाब से, इनकी जोड़ी अच्छी रहेगी। उसने भगवान से प्रार्थना की कि भोगराम को आज ही, बहुत से रुपये का ऋण मिल जाये। जल्दी ही वह उत्तम खेतिहर बन जाये। धान के दानों से भरे हुए गोदाम का वह मालिक बने। मन-ही-मन में उसने 'जुरिया नाम घर' (भगवान का नाम कीर्तन का समूह-स्थल) को दो दीये तेल की भेंट की।

नौ

शाम को भोगराम घर लौटा। आंगन में पहुंचते ही, बच्चों ने उसको घेर लिया। एकदम छोटे वाले ने धोती पकड़ ली। मालस साईकल के पैंडल पर पैर रखने की कोशिश करने लगी। बीच वाली, "पिताजी मैं चढ़ूंगी" कहकर, जिद्द करने लगी। रोज ही वह लोग ऐसा करते हैं। परंतु आज भोगराम ने मानस के मुंह पर एक ऐसा तमाचा लगाया, कि जिससे उसके कान ही बंद हो जायें। दूसरे बच्चे डर के मारे इधर-उधर भाग गये। वह चीखकर बोला, "कहीं से आते ही, यह आकर घेर लेते हैं। यह सब मरते भी नहीं।"

बासंती बाहर के कमरे से सब देख रही थी। उसका दिल बैठ गया। निश्चय ही भोगराम को कृषि ऋण नहीं मिला। घर आतेही उसके लक्षण दिखायी दिये। असल में यह बात ठीक ही है। धनंजय ने शहर के कर्ज देनेवाले, उस अफसर की, बहुत विनती-मिन्नत करके देखा—भोगराम नेभी अपनी गरीब हालत के बारे में, जो कुछ हो सका बताया। पर कठोर अफसर का दिल नहीं पसीजा। उसने कहा, "व्यापारी आदमी को किसी हालत में कृषि ऋण नहीं दिया जा सकता। असली कृषकों की ही बहुत सारी दरख्वास्तें उसकी मेज पर पड़ी हैं। उनको देने के लिए ही, रुपया पूरा नहीं पड़ेगा। तदुपरांत इस किस्म का कर्ज देने के लिए बहुत सारे सरकारी नियम हैं। सब नियम पालन करके मिलने वाले कर्ज को देने में भी कम-से-कम छह महीने लग जाते हैं।" अफसरों की बात सुनकर, धनंजय को गुस्सा आ गया। असम के कृषि जीवन के विकलांग रूप ने उसको हताश कर दिया। सरकारी अफसर में सहानुभूति के अभाव ने उसको बेचैन कर दिया।

ऋण मिलने की किंचित भी आशा न देखकर, भोगराम अति निराश हो गया था। उसके लिए उन्नति के सब पथ बंद हो गये।

किंतु आखिर में उसका भाग्य उदय हुआ। एक दिन एक प्रतापी व्यक्ति उसके घर आया और उसीके जरिये उसकी ज़ीवन गति में परिवर्तन आया।

सोनाईपरिया गांव, पांच साल बाद, फिर एक अलग उत्तेजना और चहल-पहल से भर गया। सोनाईपरिया ने, खेत की लक्ष्मी 'माघ-बिहू' (माघ महीने में फसल कटने का उत्सव। इसे 'भोगालि बिहू' भी कहते हैं) मनाया। बिहू का

पेपा, ढोल-दगर की, मन हरण थाप और माघ के चुस्त मौसम ने, नौजवान और नवयुवतियों के मन को, उड़ती हुई रूई की तरह कर दिया। पतली कमर वाली 'नाचती' लड़की का यौवन छंद, कदम-कदम पर फूट पड़ा। कोई सेवती-मालती का दिल, किसी की याद में धड़क उठा। अभाव से, सामयिक मुक्ति पाकर, बूढ़े, अधेड़ सब ही भक्ति रस में गद्गद् हो गये। 'भोगालि' ने, कंगाली'[1] सौतन को, अपनी उदारता से क्षमा कर दिया।

सोनाई के ऊपर, जगह-जगह बांस के पुल बने। इस पार, उस पार सब एक ही हो गया। देवड़ा, पाभचिला और बिहू मन पठार में, भैंसों की लड़ाई करवायी गयी। बाऊ-धान, साली-धान के पौधों के तने से पीले और खाली-खाली बड़े पठार में, लोगों के समागम से रौनक आ गयी। साथ-साथ ही शुरू हुई, वोट की लड़ाई। इस बार वोट देकर, किस को शिलांग भेजा जायेगा? वोट, वाक्य बेचने वाले वकील को दिया जायेगा? या बचपन के जाने-पहचाने इस इलाके के एक आदमी को दिया जायेगा? 'अमुक' को देने से, किंतु वह शिलांग में, अंग्रेजी बोल नहीं पायेगा और 'अमुक' को देने से, वह अंग्रेजी फरफर बोलने से भी बाद में हमारी ओर घूम कर देखेगा भी नहीं। पर हर बार उनको वोट देने से हमारा क्या लाभ हुआ? मेंढक की पीठ पर यूं ही बाल नहीं उगते। दूसरे लोग, हमें तरा नहीं सकते। ठीक ही है, गहरी चिंता करनेवाले, एक ने मत दिया, "जो लंका जाते हैं, वही राक्षस बन जाते हैं।"

माघ महीने के पहले दिनों में ही, तूफान की तरह गड़बड़ा कर आया है, वोट देने का पर्व। रास्तों में, जैसे सुंदर-सुंदर मोटरों की शोभा यात्रा शुरू हुई। सोनाई के इस पार भी, सूखी रेत ने, शहर के आराम में पले हुए लोगों के, सुकोमल पद युगल का स्पर्श पाया है। यह खूबसूरत लोग, अब सभा-समितियों में, अच्छी-अच्छी बातें कहने लगे हैं। सोनाई पार में, आजकल बसंत आया है। सोनाईपरिया ने इस नयी विचित्रता को समेट लिया है। कई मग्न हो गये हैं। कईयों को बोलने का मौका मिला है और बहुतों ने रंगीन सपने देखे हैं।

ऐसे ही एक दिन, माघ महीने के चार दिन गुजरने के बाद, वह आदमी, भोगराम के आंगन में आकर खड़ा हुआ। उसने उनको आदर से अंदर बुलाकर बैठाया। वह मामूली आदमी नहीं है। वह है शहर के प्रख्यात वकील सुबोध

---

[1]कार्तिक महीने का बिहू उत्सव जब गांव में अनाज का अभाव होता है।

साईकिया। देश में उनके जैसे और उनका नाम न जानने वाला, कोई भी नहीं होगा। उनकी समता, राजा के समान है। उनकी कोप-दृष्टि से, शहर के बड़े-बड़े लोग 'त्राही' 'मधू-सूदन 'देखते' (डर जाना) हैं। और कृपा-दृष्टि से 'गंधेला-मेडेला' (साधारण लोग) 'गंधेश्वर-महेश्वर' (बड़े) बन जाते है।

सुबोध साईकिया कुर्सी पर बैठ गये। चौड़ी डंडी वाला चश्मा उतार कर, रूमाल से पोंछते हुए कहा, "तुम्हारा ही नाम. भोगराम है ?"

भोगराम ने नम्रता से कहा, "जी सर।"

उसने ऐनक पहन कर कहा, "हां, तुम्हारा नाम तो बहुत दिनों से सुन रहा हूं। पर मिलने का मौका आज ही मिला है।"

भोगराम प्रसन्न हुआ। दारिद्रय ने उसको इतना झुका दिया था, कि बड़े आदमी की एक बात में ही जैसे उसने बड़ी आशाओं का कारण देख लिया। परिवार की चिंताओं और हताशा ने उसको इतना कमजोर बना दिया है कि वह अपना निजत्व भूल गया है। आजकल वह सफल जीवन वाले व्यक्ति पर, श्रद्धा करने लगा है। धनी को सब का मालिक समझने लगा है। और खुद गरीब होकर भी, अपने जैसे दरिद्रों से, दिल से घृणा करने लगा है। साथ-साथ अपना व्यक्तित्व भी खो बैठा है।

"भोगराम, मैं तुम्हारे साथ एक विशेष बात करना चाहता हूं। मैं केवल इस-लिए ही आया हूं।"

भोगराम का मन डांवाडोल होने लगा। उसने नम्र भाव से हंस कर कहा, "मैं क्या इतना लायक हो गया हूं सर ?"

"तुम लायक हो या नालायक, यह बात तो तुम्हीं ज्यादा समझते हो। परंतु मैं तुम्हें उससे भी ऊपर का स्थान देता हूं। बयालीस के आंदोलन के समय में इस अंचल की बात निकालने से, सबसे पहले तुम्हारा ही नाम याद आता है।"

सन बयालीस में भोगराम का बाप जिंदा था। वह तब बेफिक्र था और कांग्रेस वालंटीयर बन गया था। जुलूस की पहली ही कतार में वह था। गांव-गांव जाकर विदेशी कपड़ा और मिल में तैयार कपड़ा जला रहा था। विदेशी कपड़े का वर्जन करना चाहिए, यही बात उसने सोनाईपरिया जनता को समझायी थी। पर काल की गति कुछ ऐसी टेढ़ी हुई कि, बाद में उसे ही मिल के तैयार कपड़ों का व्यवसाय

करना पड़ा। सब-डिप्टी आफिस के गेट के सामने लेट कर, उसने और बहुतों ने 'पिकटिंग' की थी। दफ्तर में राष्ट्रीय झंडा फहराने के लिए जाकर, वहां उसने और उसके साथियों ने पुलिस का सामना किया था। उसके बाजू में बायनट लग गया था। जख्म के दाग अब भी भोगराम के बदन पर हैं। आहत अवस्था में ही, वह गिरफ्तार हो गया था। जेल ही में उसका इलाज हुआ था। उसने छह महीने तक जेल का खाना चखा था। आज सुबोध साईकिया के कहने के बाद, उसे यह सब बातें ऐसे लगीं, जैसे किसी दूसरे आदमी के बारे में बातें कही जा रही हों।

साईकिया ने कहा, "तुम्हें इस बार, मेरी मदद करनी पड़ेगी। मैं जानता हूं, यहां के लोग तुम्हारी बात मानते हैं। मैं इस बार इस अंचल से खड़ा हो रहा हूं।"

साईकिया बड़ा चालाक आदमी है। उसने सोचा होगा भोगराम तो व्यापार करके फिरता रहता है, इसलिए सोनाईपरिया गांव के प्रायः सब ही लोग उसे पहचानते हैं। और कौन कैसा आदमी है यह भी वह जानता है। इसलिए ऐसा एक आदमी अपने साथ रखना अच्छा होगा। तदुपरांत बयालीस का उसका रिकार्ड तो है ही। उसके मुंह से देश के हक में कही बातें, ज्यादा काम आयेंगी। वोट पर्व में, ऐसा आदमी, धन-कुबेर, बृज-मोहन नंदलाल जैसा काम आयेगा।

भोगराम ने साईकिया का प्रस्ताव सुनकर, थोड़ी-सी आपत्ति की। उसने कहा, "किसी भी तरह, वह घर का खर्च नहीं चला पा रहा है। यही सब चितायें उसे परेशान कर रही हैं। ऐसी हालत में, समाज के काम के लिए घूमने का उसका मन भी नहीं है, अभिलाषा भी नहीं है। परेशानियों से ही वह तंग आ गया है।

एक कूटनीतिक हंसी से, साईकिया ने भोगराम की बात काट दी। अपनी क्षमता, होशियारी से छिपा कर, उन्होंने उसे इशारा किया कि वह उसकी बहुत मदद कर सकते हैं। चतुर भोगराम भी समझ गया था। दूसरे दिन सुबह ही साईकिया फिर आया। इस बार दोनों में साफ-साफ बातें हुई। साईकिया ने बताया कि, आजकल 'वीवींग लोन' नामक एक तरह का कर्ज देने का नियम निकला है। भोगराम के घर में जब तीन औरतें हैं, तो डेढ़ हजार रुपया आसानी से मिल सकता है। यह कर्ज जल्दी वापस करना भी जरूरी नहीं है। कई साल के लिए मुफ्त रकम मिलने की तरह ही है। साईकिया जल्दी ही, यह कर्ज मंजूर करवा सकते हैं। ऐसी हालत में भोगराम को और रोजगार करने की चिंता नहीं करनी पड़ेगी।

साईकिया की कृपा देखकर भोगराम ने तो जैसे स्वर्ग पा लिया।

दूसरे दिन, सुबोध साईकिया फिर आये, और बताया कि दो हजार रुपये का 'वीविंगलोन' मंजूर हो गया है। माघ महीने के भीतर ही, सुजला और तरु के नाम पर सब रकम मिल जायेगी।

इतना कह कर, उसने ड्राइवर को आवाज दी। ड्राइवर जीप के अंदर से एक नयी चमकती साईकल, घर के अंदर ले आया। सुबोध साईकिया ने कहा, "भोग-राम, यह साईकिल तुम्हारे लिए है। अब तुमको घूमने में सुविधा होगी। तुम जिनके साथ जाओगे, उनको भी, अगर साईकल की जरूरत हो तो बताना। ड्राइवर, लीफ़लेट आदि ले आओ। ड्राइवर ने बड़े-बड़े अक्षरों में छपे हुए काग-जात और एक बंडल छोटी वाली 'अपील' जैसी छपी हुई पुस्तिकायें, साईकिया के सामने रख दीं। साईकिया ने यह सब भोगराम के हाथ में देते हुए कहा, "तुम्हें कैन्वस करते समय, एक और खास बात कहनी पड़ेगी, कहना, "कि सोनाई पार तक का पक्का रास्ता मेरी चेष्टा से ही बना है। सर्विस बस की लाईन भी मैंने ही मंजूर करवाई थी।"

यह बात सुनते ही, भोगराम का सारा शरीर गर्म हो गया। उसकी दोनों आंखें हठात बड़ी हो गयीं। आक्रोश से दोनों कान लाल हो गये। पत्थर-कंकड़ डाला हुआ रास्ता, कैसे उसका काल बना, उन सब बातों का ब्यौरा, उसने बड़े आवेग से साईकिया को दिया। साईकिया, बड़े धीरज से, यह सब भाषण की तरह सुनता रहा। फिर बोला, "हजारों रुपया खर्च करके रास्ता बनाया गया है, यह तो सच है। पर तुम्हारे लिए अप्रिय हुआ, तो भी, सच कहने में क्या हर्ज है ?"

"और ज्यादा मत कहिये सर। इसी रास्ते ने मुझे दिवालिया बना दिया और इसी रास्ते के कारण, सोनाईपरिया लोगों की सुख-शांति लुट जायेगी।"

"तुम बड़े सीधे-सादे हो भोगराम। असली अवस्था और समय की तुम कभी अवहेलना नहीं कर सकते।. लोगों को, वक्त की कीमत समझ कर, अपने लिए नये मौके निकाल लेने चाहिए।"

साईकिया ने और भी बहुत कुछ कहा। प्रवीण वकील की युक्तियों में, भोग-राम आ गया। उसने साईकिया के सामने सिर झुका दिया। अगले ही दिन से, भोगराम ने, अपनी संपूर्ण नयी भूमिका ग्रहण कर ली। सोनाईपरिया लोगों के जरिये से, वह फिर से आशा की नयी किरण देखने लगा।

दस

सोनाई के पार में 'क' को न पहचानने वालों की संख्या ज्यादा है। ऐसे लोगों को विश्वास दिला कर, बात करना सहज है। बहुत-सी सभा-समितियां हुईं। अलग-अलग दल के लोगों ने, सोनाईपरिया लोगों को, तरह-तरह की बातें कहीं। वोट पाने के लिए कौन उपयुक्त, देश की उन्नति के लिए कौन ज्यादा काम करेंगे—यह सब तो पहेली ही होकर रह गयी। सीधे-सादे गांव के लोगों का, सौ तरह की बातों से मन भटक गया। सोनाईपरिया 'राजनीति' नहीं समझते हैं। एक समय जब 'गांधी-राजा' रहते थे, तब समझते थे। अब तो उन लोगों की हालत, दिन-ब-दिन खराब ही होती जा रही है। पर उसके लिए वह लोग, अपनी अदूरदर्शिता को ही दोष देते हैं।

शिलांग की सभा के लिए तीन आदमी खड़े हुए हैं। दूसरे दो जने हैं, संजीव बरुआ और लोकनाथ तामुली।

संजीव बरुआ के दल में बहुत ज्यादा लोग हैं। उन्होंने बयालीस के आंदोलन के समय में, इस अंचल में बहुत काम किया था। उनको पकड़वाने के लिए, ब्रिटिश सरकार ने दस हजार रुपये की घोषणा की थी। सोनाई पार के गांव में, आत्म गोपन के समय, गांव के मुखिया लोगों से काफी अपनापन हो गया था। इस अंचल के लोगों के दिल में अभी भी उनके लिए प्यार है। वह भी गांव आते रहे हैं। बाढ़ और महामारी के समय वही लोगों का सहारा है।

वोट के चार दिन पहले पता लगा कि असली प्रतियोगिता सुबोध साईकिया और संजीव बरुआ में होगी। संजीव बरुआ के दल के लोग कह रहे हैं, "भाइयो, इस दफे आप लोगों के वोट के बल पर ही सरकार बदल जायेगी। आप लोगों के दुख मिट जायेंगे। सुबोध साईकिया को वोट देकर आप लोग गलती नहीं करियेगा। आप लोग जानते हैं, मीटिंग करके ही, साईकिया जेल गये थे। कहते हैं जेल में उन्हें घी, मक्खन खाने को मिला था। और हमारे संजीव बरुआ? जिनको ब्रिटिश सिंध भी पकड़ नहीं पाये वही···"

सुबोध साईकिया के दल के लोगों ने समझाया, "साथियो, साईकिया महोदय इस बार निर्वाचित होने से मंत्री बनेंगे। तब हमारे सोनाईपरिया के दुख दूर हो जायेंगे। बांध बनेंगे पुल बनेंगे, स्कूल घर बनेंगे। सोनाईपरिया लोगों को, अच्छी-

अच्छी नौकरियां मिलेंगी। पर संजीव बरुआ, एक कमजोर पार्टी के मेंबर होकर क्या कर सकेंगे ? शिलांग में अपना भत्ता लेकर बैठे रहेंगे।…"

सोनाईपरिया गांव के लोग यह पांच साल गरीब तो जरूर थे, पर उन लोगों के बीच एकता थी। ब्राह्मण लोग लालुंग को (असम अपत्यका की जन-जाति) नीच समझते थे। खलपिया, पाभचिला के मैमनसिंग लोग अलग धर्म के हैं, यह बात भी अभी उनके दिमाग में आयी है। कलिता जाति में भी पानी कलिता, नट कलिता, कुमार कलिता, सोनार कलिता आदि अलग-अलग स्तर हैं, बहुतों को यह भी अभी पता चला है।

भोगराम वोट की लड़ाई में सक्रिय अंश ग्रहण करने लगा। मुंह से मीठी-मीठी बातें करने लगा। उसकी बहुत क्षमता हो गयी। सुबोध साईकिया ने उसे इन दिनों के लिए एक जीप गाड़ी दी है। उसके नीचे बहुत से कैन्वसर काम करते हैं। उसने सुबोध साईकिया से कह कर, उन लोगों को भी एक-एक साईकल दिला दी है और हाथ खर्च के लिए पैसे भी दिला दिये, लोगों कोई कैसे क्या समझाना चाहिए, वह भी सिखा दिया। उत्तर पार मोटर नहीं जाती है, इसलिए वहां ज्यादा समय खर्च हो रहा है। उनको खाने-पीने को भी समय नहीं मिल रहा है। तब भी इन सब जगहों में घूमने का उनको नशा हो गया है।

सोनाईपरिया गांव तो जैसे 'देव-धई' (तडांव नृत्य की तरह का नृत्य) नृत्य में व्यस्त। अकाल बसंत ने रास्ते की धूल, मिट्टी को भी प्राणमय कर डाला। बेकार, आलसी, सजधज के घूमने-फिरने वाले, कुछ नौजवानों को जैसे गणतंत्र अधिकारों के बारे में अब ही कुछ समझ आयी। शहर के काले बाजार के व्यापारी भी, जातीय स्वार्थ के बारे में भाषण दे रहे हैं, सुबोध साईकिया के नैतिक मानदंड के बारे में बातें कर रहे हैं। यहां आकर स्वार्थांध व्यवसायी भी दाता होने का असामान्य नमूना दिखा रहे हैं। 'शाई-लाक' रूपी धनी व्यवसायी भी धन की कठिन गांठ खोल रहे हैं। बड़े-से-बड़े घमंडी लोग भी, धूल, मिट्टी से मैले में पड़े हुए अख्यात लोगों को, अपने चाटुवाक्य से बहला रहे हैं।

भोगराम के दल ने, जलमई गांव, राईडिंगया और चाबुकधरा के लोगों का मन फेर दिया है। किंतु पाभचिला, कूंजी और बोरबोरि में ही बाट विषम है। इस अंचल में धनंजय बड़ा प्रतापी है। यहां के लोग उसके सिवा और किसी की बात नहीं मानते। सोनाई के उत्तर पार वालों के लिए, वह देवता है। बीमारी में

वह, उनका इलाज करता है, मुसीबत में वह, उनकी मदद करता है। वह सब को एक समान देखता है। इससे ज्यादा सोनाईपरिया लोगों को और क्या चाहिए ? सबको इकट्ठा करके धनंजय ने कहा, "याद रखना भाइयो, हर चमकने वाली चीज सोना नहीं होती। हमें ऐसे लोगों का चुनाव करना है, जो खुद को, जनता में एक समझते हैं और जनता के दुख को, अपना दुख समझते हैं। जो लोग खड़े हुए हैं, उनमें संजीव बरुआ ही सब से लायक आदमी हैं। उनका उद्देश्य सच्चा और उपाय भी सच्चे हैं। साईकिया का उद्देश्य भी सच्चा हो सकता है, किंतु उपाय सच्चे नहीं हैं। ऐसे लोग, देश का उपकार नहीं कर सकते।"

जनता ने अपना समर्थन दिया। एक सामान्य परदेसी लड़के की, एक ही बात से, लोग एक गुट हो गये। प्रबल प्रतापी साईकिया, अपना प्रमाद गिनने लगे। भोगराम के मन में तूफान उठा। वह सोचने लगा, लोगों को समझाना कितना कठिन है। अवशेष में, धनंजय ने भी उससे शत्रुता की। अपने छोटे भाई की तरह उसे चाहा था, घर के अंदर पीढ़े पर बिठा कर, जलपान कराया था। अब वही भोगराम के सामने, कालांतक मूर्ति धारण करने लगा। भोगराम को लगा कि वोट के जरिये उभरता हुआ अपना भविष्य, केवल धनंजय के लिए ही चूर हो जायेगा। सच है, परदेसी का भरोसा नहीं है। कभी कुछ न कहने वाले लोग, बड़े जटिल होते हैं।

सुबोध साईकिया भी पाभचिला गये थे। भोगराम उनके लिए, एक भी मीटिंग जमा नहीं पाया। कहते हैं, गांव के नौजवानों ने, साईकिया और भोगराम का अपमान किया था। साईकिया को धनंजय के प्रति गुस्सा आया। पर कुछ नहीं बोल सका। यह समय तो, उनके लिए जनता के चरणों की धूल लेने का समय है! उनके मन में तो विष भरा है, पर मुंह में अमृत घोल कर, धनंजय को अपनी ओर खींचने की चेष्टा करके भी वह विफल हुए। धनंजय ने उसको शायद कहा था, "सबको खरीदा नहीं जा सकता साईकिया। आपको क्षमता के मोह ने वश कर लिया है। आप हमारे यहां पाप लाये हैं।"

यह बात सच है। दो दिन पहले, वह मोरापुर की तरफ गया था। लड़कों के एक झुंड ने उसे घेर लिया था। लड़के उस पर गाली-गलौज करने में भी पीछे नहीं हटे थे। एक ने तो कमीज गले से पकड़ ली थी। पर इन लड़कों के मां-बाप के लिए धनंजय भी अपने लड़के की तरह ही है। सुबोध साईकिया से, पैसे लेकर,

यह सब लड़के जैसे गुंडे बन गये हैं। मारवाड़ी की दी हुई नयी साईकल पाकर, यह लोग बड़ों का मान भी भूल गये हैं। शराब पी रहे हैं, पैसा भी हजम करना सीख गये हैं। सुबोध साईकिया का विवेक बनवासी हो गया है। भोगराम की तरह भले आदमी भी अमानुष हो गये हैं। सोनाई पार में पाप घुस आया है।

निर्वाचन के पहले दिन, पाभचिला में एक बड़ा हंगामा हो गया। मध्य स्कूल के सामने एक बरगद का पेड़ है। इसकी छाया में, दोपहर, गोधूली, गांव वाले इकट्ठा होकर दुख-सुख की बातें करते हैं। आज बरगद के तने पर, हर किस्म के निर्वाचन वाले इश्तहार :

"···जय-हो जनता की जय।" "···को वोट देकर निश्चित होइये।" "···को वोट। जनता बदलाए मोट॥" "···बक्स है कल्पतरु। जनता से ही निकलेंगे छोटू बड़ू॥" इत्यादि। उसी में भोगराम ने भी सुबह एक बड़ा-सा इश्तहार टांग दिया। नजदीक ही कुछ नौजवान लड़के खड़े थे। वह सब गुस्से में आ गये। उन्होंने इश्तहार फाड़ डाला। तभी भोगराम के साथी उसके पास आ गये। दोनों दलों में खूब हाथा-पाई हुई। मुक्का, घूंसा और थप्पड़ों के बाद, ईंटों की वर्षा शुरू हुई। उसी समय धनंजय कहीं से आ पहुंचा। स्थानीय पक्ष फौरन शांत हो गया। भोगराम के पक्ष वालों की जबान चलती रही। धनंजय ने देखा, भोगराम की धोती-कमीज फट कर, चिंदी हो गयी है। दांतों से खून निकल रहा है। उसने पाभचिला के नौजवानों को फटकारा। वह सब निमिष में शांत हो गये। केवल एक ने दूसरे से कहा, "यह लोग, दो दिन तक, सोनाई पार न जा सकें, ऐसी व्यवस्था की जा चुकी है। नाव वालों से कह आया हूं, कि इन लोगों को कोई भी पार न उतारे। इन सबको यहीं सड़ने दो।"

धनंजय उसकी बात अनसुनी कर, गुस्से से चुप रहा। वह चिंतित हो गया। यह गड़बड़ करने वाले नौजवानों से तो आपद ही बढ़ रही है। इन लोगों के इस तरह मारपीट करने से संजीव बरुआ का अपकार ही होगा। वह थोड़ी देर पहले, चित्त पड़ी हुई साईकलों के नजदीक आया। यह सब साईकलें भोगराम के दल की थीं। एक-एक करके साईकल उठाते समय उसे पता चला कि पाभचिला के लड़कों ने टायरों से हवा निकाल दी है। एक का सैडल भी नहीं है। उसने धीरे-धीरे भोगराम के पास आकर कहा, "भैया, मुझे क्षमा करना, मेरे रहने-वाले स्थान में ही यह सब होने लगा, उसके वास्ते मैं···"

भोगराम के बदन में आग लग गयी। वह सहने वाला इंसान नहीं है। कहने लगा, "साला, निर्लज्ज की औलाद, अब झूठा आदर दिखाने आये हो, तुम इन लोगों को भड़का कर, अब धर्म युधिष्ठिर बन रहे हो। तुमको भी देख लेंगे। मैं यदि भोगराम हूं, तो इसका बदला जरूर लूंगा।"

धनंजय ने गुस्सा नहीं दिखाया। दूसरे आदमी से बात करने की तरह कहा, "वह अभी दलंग घाट में सुधना नौकावार को जाकर कहेगा कि इन लोगों को पार कर दे।" इसके बाद भी, भोगराम ने धनंजय के प्रति कृतज्ञता का भाव नहीं दिखाया। कारण उसे पूर्ण विश्वास है कि वह, घाटवाई को ज्यादा रुपया देकर, नौका चलाने को बाध्य कर सकता है। शाम को दलंग घाट पर, फिर से धनंजय और भोगराम का आमना-सामना हुआ। उसी ने पहले आवाज लगायी। भोग-राम का दिल शायद थोड़ा-सा नर्म हुआ। उसने पूछा, "संजीव बरुआ के लिए काम करके तुम्हें क्या लाभ होगा ?"

धनंजय ने विनीत भाव से कहा, "इंसान सब काम लाभ-नुक्सान के लिए तो नहीं करता। मैं एक विशेष नीति पर चलने वाले लोगों पर श्रद्धा रखता हूं। इसीलिए मेरा ख्याल है कि, संजीव बरुआ जैसे लोग, प्रतिनिधि बनने से ही, गण-तंत्र सबल हो सकता है।

गणतंत्र शब्द भोगराम के कानों में अनजाने सुर-सा बज उठा। उसने धनंजय के साथ और बात नहीं की। उसी दिन शाम को वह, कई गांवों में शराब पीने के लिए, काफी रुपया दे आया। दो एक मुखिया को, पैसा खिला कर, अपनी तरफ कर लिया। दो गांव में, सुबोध साईकिया के निर्देश अनुसार, हर घर में, बीस रुपये बांटे गये। देवड़ा और कूंजी में, संजीव बरुआ ने जो ऐजंट जुगाड़ किये थे, वह भी तीन-तीन सौ रुपये लेकर पलट गये। रात ही के अंदर चुनाव का वाता-वरण बदल गया।

निर्वाचन हो गया। सुबोध साईकिया ग्यारह सौ उनचास वोटों से जीत गया। सोनाई पार की चहल-पहल खत्म हो गयी। पहले जैसी अवस्था लौट आने से भी, लोग पहले से जटिल हो गये हैं। वह स्वार्थी हो गये हैं। काम करने के बजाय, उन्हें भाषण देने में और बातें करने में ज्यादा मजा आने लगा है। जनता की अज्ञानता का फायदा उठाकर, भोगराम जैसी एक श्रेणी का उदय हुआ। केवल एक पख-वाड़े में ही, टूटी साईकल खींच कर चलाने वाला, निर्धन भोगराम बड़ा आदमी

बन गया। सुबोध साईकिया ने, चुनाव के लिए दिये आठ सौ रुपये उसकी अपनी जेब में आ गये। दो स्थानों में थिएटर हाल बनवाने के लिए, उसने साईकिया से एक हजार रुपया लिया था। वह रकम भी उसी ने रख ली।

फाल्गुन पहुंचने से पहले ही, भोगराम को बारह हजार रुपये का एक ठेका मिला। काम आरंभ होने के पहले ही, उसे छह हजार रुपये का 'रनिंग-बिल' मंजूर हो गया।

पलक मारते ही, भोगराम जम गया। सोनाईपरिया होते हुए भी, उसके मन में यह बात नहीं आयी कि उसने नीति विसर्जन कर दी है और अपने को खो बैठा है।

साधारण निर्वाचनके फलाफल ने, अभागी बासंती को भी अछूता नहीं छोड़ा। उसकी समझ में आ गया कि, वोट के इन्हीं दिनों के भीतर ही, धनंजय और भोगराम का 'अहि-नकुल' संबंध हो गया है।

बोहाग में सोनाई के पार प्रकृति की महिमा चढ़ आयी। सोनाई ने फिर यौवन पाया। पठार, गांव, कर्म छंद में महमान हुआ। सुरीली सोनाई के पार कोयल, केतकी के मधुर स्वरों में, प्यार गूंज उठा। टेसू ने स्वर्ण का गजरा पहना। 'अजार' (अजार—लाल फूलों का बड़ा पेड़) के पत्ते ज्यादा हरे हो गये। अजार के फूलों ने सोनाई के पार के अमरावती के कानन जैसा कर डाला। धरणी उतावली हुई। प्रकृति सृष्टि के रहस्य से उर्वरा हुई। कई नयी बहुओं की उर्वर देह में मातृ होने के चिह्न दिखाई दिये। इस बोहाग में, जाने कितनी युवतियों के, देह मन का मेल हुआ! केतकी के मधुर स्वर ने, शायद कितनी ही जवान लड़कियों का मन सूना कर दिया!

कृषक ने वर्षा ऋतु का स्वागत किया। हल के फाल में, सीता का संभेद मिला। उपजाऊ जमीन में फसल उग आयी। बार कोई चिला की तेज हवा के साथ-साथ, धान और पटसन के पौधों से, हरी-भरी उपत्यका नाच, गा उठी है। सोनाईपरिया ने भविष्य के रंगीन सपने देखे।

'बिहू' के दिन बासंती ने घाट से सुना, "आइना का मन कैसा साथी, आइना का गण कैसा साथी। रख सकता हूं मैं हाथ में चुल्लु भर पानी, रख नहीं सकता मन ··"

उसका मन भटक गया। धनंजय अब उसके घर कभी नहीं आयेगा। कहते हैं,

उसने भोगराम का अपमान किया था। रात में वह और चिंता से घिर गयी। सोरा घर में, बड़े भाई को, किसी आदमी को कहते हुए सुना, "सुबोध सर को कह कर, पाभचिला में अगर एक सरकारी अस्पताल खुलवाया जाये तो, यह धनंजय किसके बल पर बड़प्पन दिखायेगा ? अस्पताल में डाक्टरों के आ जाने से ही, उसकी होमियोपैथी का व्यवसाय एक फूंक में उड़ जाएगा। जैसे खाली हाथ कहीं से आया था, वैसे ही खाली हाथ जाना पड़ेगा।

ग्यारह

बोहाग के बीच में ही भोगराम का ठेके का काम समाप्त हो गया। उसने काफी रुपया जमा कर लिया। उसकी व्यस्तता कम हो गयी। रहने वाले मकान को ठीक करवाने के लिए, यह मेघ वर्षा के दिन अच्छे नहीं हैं। सिर्फ धर्म-तुल से दो गाड़ी 'शाल' पेड़ का खंबा लाया गया। 'बर घर' (रहने वाला कमरा) और सोरा घर दोनों को तुड़वा कर, एक सुंदर बंगला घर बनवाने की योजना बनायी। जाड़ा आते ही, वह इस काम में लग जायेगा। उसके लिए और कोई विशेष समस्या नहीं है। बहन को किसी एक अच्छे लड़के को सौंप सके तो उसका काम संपन्न हो जायेगा।

बासंती जिस आशंका में इतने दिनों से चिंता में पड़ी थी, आखिर में वही हुआ। एक दिन बहुत गुस्से में भोगराम घर आया। बीबी के इस बारे में पूछने से उसने और गुस्सा दिखाया।

"तब, अब मुझे तुम लोगों पर भी विश्वास खो देना पड़ेगा क्या ? इधर तो कहते रहते हो—जवान लड़की दूध पिलाए सांप के बराबर।"

"क्या बक रहे हो, खुलकर क्यों नहीं कहते ?"

"मैं यह सब क्या सुन रहा हूं।"

"क्या सुन रहे हो ?"

"बायन के घर की लड़की को, फुसलाने के लिए, आखिर एक परदेसी को मौका मिल ही गया। और तुम लोग आंख बंद करके देखते रहे। समझा, यह सब तुम औरतों की चाल है।"

"मेरी तो कुछ समझ में नहीं आ रहा है ?"

"हां, समझकर भी नासमझी का बहाना बनाओगी ही। औरतों का स्वभाव ही ऐसा होता है। वह कुत्ता धनंजय, मेरी बहन से घाट पर बातें करता रहा। चंपक मेधी ने उस पार से देखा है। हरिसिंध मंडल ने, जमीन नापने के लिए, आते हुए उनकी बातें भी सुनी हैं। अब तक तू ही आंखें बंद किये, कान में रूई डाले रही आह ! कैसी मासूम लड़की हो। जैसे कोई बात जानती ही नहीं हो !"

"दूसरों की कही हुई बातों पर, क्यों विश्वास करते हो ?"

"बात का सच झूठ विचार न करने के लिए, मेरे दिमाग में गोबर है क्या ? अच्छा, तो इसीलिए तुम उसके ब्याह की पैरवी कर रही थी क्या ? लड़की प्यार करेगी और तू बूढ़ी के दिल में जैसे झशर चुभ रहा है। 'काल हो काल, विपरीत काल—हिरण चाहता है, बाघ का गाल !'

तरुलता को जवाब देने की हिम्मत नहीं हुई। रात भी वह रुक्मवीर का रूप धारण किये रहा। बच्चे भी भय से सहम गये। बासंती रात भर सो नहीं सकी।

सुबह उसने मां को सारी बात बतायी। किंतु मां ने उसका समर्थन नहीं किया। उसको याद आया, करीब दो कुड़ी (40 साल) पहले की बात। एक दिन, अकस्मात भोगराम के बाप के प्रति, उसको अद्‌भुत मोह पैदा हुआ था। बन की मासूम हिरणी को, जैसे प्रातः की पहली रंगीन सूरज की किरण दिखायी पड़ी थी। कुछ ही दिनों के भीतर, अपने को रेखामय बंधन में फंसा लिया था। उसकी छाती पर सिर रख कर, आनंद अश्रु बहा कर, प्राण की चिंगारी बुझाई थी। एक दिन, वह भी पहले ही पुरुष के साथ चुपचाप सोनाई से हो कर चली आयी थी। और सुखी संसार बसाया था। उस समय सोनाई भी प्यार का मोल समझती थी। लोग भी तब उसका अकृत्रिम ग्न्य देना जानते थे। किंतु अब कैसे दिन आ गये हैं। आज बेटा भी, मां के सामने बहिन की 'बदनामी' की बात कह सकता है। अब प्रेम ने पहले जैसी गंभीरता खो दी है। आज के इंसान, प्रेम को चालबाजी ही समझते हैं।

उसने सोच-समझ कर बेटे से कहा, "किंतु धनंजय में क्या खराबी है। उसके जैसा लायक लड़का, मेरी नजर में नहीं है। इन दोनों की जोड़ी अच्छी रहेगी। इसमें लड़की का क्या दोष ? इस उम्र में, मन ऐसे भटक ही जाता है।"

"मां, तू भी यदि इस तरह की बात कहेगी, तो देश की क्या हालत होगी ?

मैं धनंजय की नस-नस पहचानता हूं। वह सात घाट का सयाना है। वह लड़की का सत्यानाश करने पर तुला हुआ है। तदुपरांत बायन के घर की लड़की, उस जैसे आदमी को कैसे दे दूं। वह तो बहता हुआ आदमी है। घर कहां, जात क्या, कुछ भी तो पता नहीं। अपने को ब्राह्मण कहने से क्या होता है। पाभचिला में जमने से तो ऐसा लगता है, वह शायद लालुंग है। देख-दिखाकर लड़की को जलती आग में नहीं फेंक सकता।"

मां चुप रही। वह मां है, फिर भी उसकी बात नहीं चलती। 'तीनों काल, नोहे नारी स्वतंत्र।' छोटी उम्र में, मां-बाप के नीचे, बाद में पति के तत्वावधान में और बुढ़ापे में उसको बेटे के शासन में चलना पड़ता है। भोगराम की इच्छा के विरुद्ध, खड़े होने की, उसमें शक्ति नहीं है। फिर भी, यदि वह कोई अच्छा लड़का ढूंढ़ लाये तो बात को और गहराई से सोचना पड़ेगा। धनंजय ने यदि उसको फुसलाया था तो इन लोगों के बीच प्रकृति प्रेम नहीं था।

दूसरे दिन भोगराम ने, घर में बताया कि, उसे एक अच्छा वर मिल गया है। वह मंडल (पटवारी) का काम करता है। मां, बाप, भाई सब के साथ उनका संपूर्ण घर है। खानदान भी अच्छा है। शुद्ध कलिता घर की हालत भी अच्छी है। कुटे धान के दो भंडार। जमीन-जायदाद भी काफी है। बाप ने कानूनगो होकर पेंशन ली थी।

बगैर बताये कि वह कौन हो सकता है। इसका पता सुजला और तरु को चल गया था। कानूनगो के लड़के मंडल का नाम लेने से ही, सब लोग, मथुरा को ही समझते हैं। मथुरा का घर भी मोरापुर से प्रायः चार मील दूर है। सोनाई के इस पार में ही। दरांगयाल गांव में। पक्का रास्ता इस गांव के ठीक बीच में से गया है। सोनाई भी साथ ही बहती है। वहां मोरापुर के रास्ते से भी जाया जा सकता है और नौका से भी।

पुराना जमाना होता तो भगीरथ कानूनगो का लड़का मथुरा, भोगराम जैसे आदमी की बहन से कभी शादी नहीं करता। भगीरथ बड़ी इज्जत वाला आदमी है। पर भोगराम भी अब धनी-मानी बन गया है। इसलिए उनके घर के साथ संबंध होना, भोगराम परिवार के लिए विवेकता की एक सीढ़ी ऊपर चढ़ने की तरह होगा। आजकल भोगराम अहंकारी हो गया है। आजकल वह सम्मान-असम्मान की बातों पर छानबीन करने लगा है। कानूनगो के घर, संबंध होने की

संभावना देख कर उसने अपने को धन्य समझा। भागीरथ कानूनगो पहले से ही खानदानी प्रभावशाली आदमी थे। कहते हैं, उनके बाप के जमाने में, उनके घर में दो हाथी थे। उनका घर अब भी हाथी-धनी के नाम से जाना जाता है। भोग-राम के व्यापारी जीवन-काल में, वह उनके घर में घुसने के लिए भी डरता था। अब किस्मत का बल कुछ ऐसा हुआ कि भागीरथ ने, खुद ही, बेटे मथुरा की शादी का प्रस्ताव रखा। इससे बड़ा सम्मान और क्या हो सकता है ?

जेठ के पहले दिन, वर पक्ष के लोग अंगूठी पहनाने आये। मां, बाप और बहन खुद आये थे। वर नहीं आया। भोगराम ने उसको किसी तरीके से बासंती को दिखा दिया था। बासंती को पता ही नहीं चला था।

उन लोगों के पहुंचने के साथ-ही-साथ, बासंती की दिल की धड़कनें भी तेज हो गयीं। वह किसी भी हालत में कपड़े नहीं पहनना चाह रही थी। उसने स्पष्ट जवाब दे दिया कि वह उन लोगों के सामने नहीं निकलेगी। मां ने समझाया, "शर्म की क्या बात है बेटी। हमें क्यों बेकार इस तरह कष्ट दे रही हो ?"

उसने जवाब दिया, "क्या लड़की का अपना मन कुछ नहीं होता ?"

मां अनसुनी करके अनजान हो गयी। भाभी तरु ने भी कह के देखा, "बासंती, लड़की होने से घर का हुक्म मानकर चलना ही पड़ेगा। यदि मां की ही बात नहीं मानोगी, तो तुझे लालन-पालन करके, बड़े करने का क्या लाभ हुआ? जवान लड़की का, किसी की बहू बन कर, जाने से पहले, आपत्ति करना स्वाभाविक तो है पर इसका यह मतलब नहीं कि लड़की, घर में ही बूढ़ी हो जाये। हम भी तो, एक दिन, अपने मां-बाप का घर छोड़कर, दूसरे के घर नहीं चले आये क्या ?" इस बार बासंती बहुत निराश हो गयी। बोली, "भाभी क्या तू भी मेरे मन की बात नहीं समझती है ?"

तरु ने जवाब दिया, "यह सब उम्र का दोष है बासंती। समय-समय पर कुंवारी लड़की को, कभी एक-आध आदमी पसंद आ ही जाता है। तुम्हारा मन भी कुछ दिन के लिए, जैसे दलदल में फंस गया था। इतना ही समझो बस।"

बासंती भारी समस्याओं में उलझ गयी। वह मां, भाभी और भाई का आदर त्याग दे, या सोनाईपरिया लोगों के लिए अपरिचित, कोई कुछ न रहने वाले धनंजय के लिए, अनिर्दिष्ट काल के लिए प्रतीक्षा करे ? और प्रतीक्षा करने से कहीं अपना अनिष्ट तो नहीं होगा ? क्या वह सचमुच उससे छलना करके

देह का स्वाद लेना चाह रहा था ?

थोड़ी देर बाद, जब भाई ने उसके पास आकर कहा, "बासंती, आखिर में, तू भी मेरा सम्मान डुबाना चाहती है। देख बेटी, एक बार मेरे मुंह की ओर देख।" तभी बासंती की समझ में आया कि घर के सब लोगों को उसके प्रति प्यार है, उनके आदर में वह पिघल गयी। सोचा, भोगराम के न रहने से, इतने दिन घर की क्या हालत हुई होगी। खर्च पूरा न होने के समय में भी वह कितना कष्ट करके परिवार को पाल रहा था। दूसरा कोई आदमी होता तो, उसको किसी के घर, धान काटने के लिए भेज देता।

वह आंसू पीकर वर पक्ष के लोगों के सामने निकलने को राजी हुई। तरु ने उसे सुंदर ढंग से सजा दिया। एक हाथ में पानदान लेकर, वह मां और तरु के साथ 'सोरा-घर' की ओर चली।

लड़की को देखकर सबने पसंद किया। दो-एक बात पूछकर, मथुरा के मां-बाप को भी संतोष मिला। किंतु जैसे ही अंगूठी उंगली में पहनायी गयी, बासंती अन-जाने सुबक पड़ी। वर की मां ने इसको गलत नहीं समझा। उन्होंने कहा, "बेटी, शोक क्यों कर रही हो। कुंवारी लड़की और रुकी हुई मधुमक्खी एक ही समान। एक दिन तो दूसरे के घर जाना ही पड़ता है। और दो दिनों बाद, हम लोग क्या तुम्हारे अपने नहीं हो जायेंगे ?"

बासंती अंदर चली गयी। अंदर से उसने वर के बाप को कहते हुए सुना, "···मुझे दो महीने पहले ही, पता चला कि तुम्हारी एक बहन भी है। सच ही कहते हैं, जिसकी कन्या, उसी का विवाह। हमने मथुरा के लिए कितनी जगह लड़कियां देखीं···।"

बारह

धनंजय को पहले कुछ खबर नहीं मिली। पिछले हफ्ते, गांव में, बीमारों को देखने में व्यस्त रहा। वर्षा के शुरू में ही काफी पानी बरस चुका था। सोनाई का पानी ऊपर तक भरकर न गिरने से भी, नाले, तालाब, पठार, मैदान, सब पानी से भर गये। सोनाईपरिया को मछली पकड़ने का अवसर मिला। 'टेक-दलंगा'

(मछली पकड़ने का एक तरह का जाल) बैठाकर मछली पकड़ी। 'लांगी' (यह भी एक किस्म का जाल होता है) जाल में, कावे, मागुर, मछलियां पकड़ीं। पर जब पानी सूखने लगा तो सोनाईपरिया को बड़ा कष्ट उठाना पड़ा। केंचूए, कीड़े मरने से चारों तरफ दुर्गंधमय हो गया। सड़ी-सूखी मछलियों की बदबू और कचरे के सड़ने की दुर्गंध ने, सोनाईपरिया वायु को विषमय कर डाला। मक्खी-मच्छरों और 'केट-कूड़ी' का राज्य हुआ। घर की गीली जमीन पर बीमारी के बीज पलने लगे। लोगों में बीमारी बढ़ गयी। सन्निपात आया 'पालज्वर' (एक दिन छोड़ ज्वर आना) हुआ। हैजे से एक-एक गांव, थर-थर कांप गया। उत्तर पार कीजनता के जीवन का कुछ भी मूल्य नहीं रह गया था।

धनंजय ने अपने साध्य अनुसार दुर्योग में जनता की सेवा की। बासंती के बारे में पता लगाने का उसके पास समय ही नहीं था। वह ईश्वर पर विश्वास रखता है। उत्तर लक्ष्मीपुर के बड़े भूचाल के समय, भेंट होने वाले स्वामीजी की तरह, वह भी सोचता है कि, दरिद्र नारायण की सेवा के जरिये ही, प्रकृत नारायण का संधान मिल सकता है।

किंतु किसी के मुंह से बासंती के बारे में सारी बातें मालूम हो जाने से, वह शीत से प्रपीड़ित एक पेड़ जैसे निश्चल हो गया। उसका ध्यान, धारणा और सेवा का अदम्य उत्साह उलट-पलट गया। चाबुकधरा और देवरा में, हैजा अपना काम करके अब शांत है। कूंजी में केवल चार बीमार हैं। और नये लोग बीमारी का शिकार नहीं हुए हैं। बासंती की बात सुनकर वह हताश होकर, उसके बारे में ज्यादा सोच नहीं पाया। उसके टूटे हुए दिल को ऐसा लगा कि वह भी दूसरे बहुतों की तरह एक अक्षम मानुष है। उसका होमियोपैथी का ज्ञान और आयुर्वेद की सामान्य शिक्षा, महामारी के प्रतिकार के लिए संपूर्ण व्यर्थ। वह केवल चेष्टा करके, उपकार करके, आत्म-संतुष्टि लाभ कर सकता है। काल सर्प-रूपी महामारी के विष के दांत, नहीं उखाड़ सकता। वह और भी बहुत से काम नहीं कर सकता। पक्के रास्ते से जाने वाले दक्षिण पार के लोगों पर, मोरापूर, दरंगियाल गांव के लोगों पर इस नयी परिस्थिति के, निष्ठुर होकर किये गये नैतिक स्खलन और मानसिक जटिलता को, उस जैसे इंसान खत्म नहीं कर सके। समय और आकस्मिक सुविधा से, अहंकारी स्वार्थी और सुविधावादी बन जाने वाले आज के धनी-मानी भोगराम को वह फिर पहले जैसा भोगराम नहीं बना सकेगा।

बासंती के प्रति उसको क्रोध, अथवा द्वेष नहीं हुआ। बार-बार एक ही बात उसके मन में आ रही थी। अवशेष में, उसे भी पाभचिला छोड़कर जाना पड़ेगा क्या ? कभी सूखे काल में शायद दलंग घाट के ऊपर लकड़ी का पुल बनेगा ? गढ़-कप्तानी विभाग के रास्ते लोग, सोनाई के उत्तर पार के गांव तक, पहुंचेंगे। वहां के लोग, तब शायद और जटिल हो जायेंगे। शायद कभी भी संतुष्ट न होने वाली, व्यापारी मनोवृत्ति, यहां के लोगों के, निष्कुल प्यार मोहब्बत को बनवास दे देगी।

जिस लड़की को उसने अपना समझा था, जिसको साथ लेकर एक छोटे से संसार की नींव रखने की सोच रहा था, जिसकी मधुर भावनायें चिरवसंत की कोयल केतकी हुई। वही बासंती, परायी हो जायेगी, इस चिंता ने, उसे सिर्फ दिन की रोशनी में ही अधैर्य नहीं किया। किंतु रात के निबिड़ अंधकार ने भी रात के अंधकार की नीरवता प्रकट कर देने वाली 'जिली' (झिंगूर) और 'हूडू' (रात को बोलने वाली उल्लू जैसी एक चिड़िया जिसकी आवाज बड़ी खौफनाक होती है) की भयंकर आवाजों ने, जीवन की विश्रृंखलता को ज्यादा ही भयानक समझकर, मन को अस्थिर करने वाले मेंढक की आवाज ने भी उसे ज्यादा असहाय कर दिया। उसने बहुत सोचा। बिस्तर में जैसे उसे कांटे चुभने लगे, वह सारी रात करवटें बदलता रहा। बासंती ने उसके साथ विश्वासघात किया है, यह बात वह सोच नहीं पाया। उसकी नजर के सामने उभरी उसकी छवि ने, उसका मन प्रसन्न कर दिया। सारी रात सोचने के बाद, तय की गयी बातें काफी उप-युक्त हैं, धीरे-धीरे उसे स्वतः यही विश्वास हुआ। रात के अंधेरे में नितांत गोपन आवेग, ही, अस्पष्ट चिंता को आकृति देता है। चिंताएं रक्त-मांस का रूप लेती हैं, पर सुबह होते ही वह सब चिंताएं ओस की बूंदों की तरह विश्राम लेती हैं। धूप उसे भाप बनाकर उड़ा देती है। पर उषा की प्रथम, धुंधली-धुंधली किरण ने धनंजय के मन को सजीव कर डाला। उसके सिद्धांत रात के विचारों की तरह स्पष्ट और अवयव विशिष्ट। दिन की वास्तविकता, रात की धारणा को वाष्प कर नहीं सकी। वह दृढ़ प्रतिज्ञ हुआ। वह आज ही रुपुक बूढ़ी को सब बातें बता-येगा। उसके हाथ बासंती को एक चिट्ठी भेजेगा। एक दिन मौका देखकर, रात को वह उसे ठनुआ घाट से ले आयेगा। आज उसने दाढ़ी बनाकर अच्छे कपड़े पहन लिये। एक-एक कदम बढ़ाकर, वह रुपुक बूढ़ी के घर की ओर चला। आखिरी बार, उसने अपने से प्रश्न किया उसको भगाकर लाने से अपना अपयश होगा क्या ?

युक्ति से उसने अपने को जवाब दिया। इस अंचल में लड़की भगाकर ले जाना बड़ी स्वाभाविक बात है। उसमें पौरुष है, प्रेम की तीव्रता है, अनजान मादकता है। इस अंचल में पल्लवग्राही के ही जो एकाधिक स्त्रियों से संबंध रखता है, अपयश है।

यहां किसी विधवा मां की एकमात्र लड़की भाग जाने से, केवल लड़की के घर में न होने के सूनेपन का ही अफसोस करते हैं। उसके मां को छोड़, दूसरे किसी के पासजाने से समझतेहैं कि लड़की, यौवन की धर्मरक्षा कर रही है। इसीलिए 'बिहू' (असम का बसंत उत्सव) में और 'भाऊना' (ग्रामीण नाटक) में, ऐसी घटनायें घटती रहती हैं। इन सब घटनाओं के लिए हद से ज्यादा चांचल्य नहीं, चर्चा नहीं। यह सोनाईपरिया, 'उजान' (मछली के अंडे देने का मौसम) की तरह ही, समय सापेक्ष और स्वाभाविक। धनंजय की दृढ़ धारणा है कि, इस तरह बासंती को ले जाने के बाद, लोगों की उनके प्रति श्रद्धा में कमी नहीं होगी। उनके ऊपर, उसका प्रभाव भी नहीं घटेगा। बल्कि ऐसा करने से, नया धनी, भोगराम के अहं-कार और मर्यादा बोध में खर्च करने की वजह से, बहुतों को अच्छा ही लगेगा। और अगर हर समय लोग क्या सोचेंगे। उसी की चिंता करते रहने से अपने मन की स्वतंत्रता कहां? लोग क्या सोचेंगे, जो इस तरह अपने को और अपने मन को सचेतन करके रखते हैं, ऐसे लोग, कभी सुखी नहीं हो सकते। परिस्थितियों ने उसे आत्म केंद्रित कर डाला है। वह अपना दर्शन खोज पाया है। उसने सोच लिया है कि मुझे कोई भी अच्छा न समझे, कोई भी मुझे श्रद्धा न दे, कोई भी मुझे गुरुत्व न दे, मैं भी किसीको गुरुत्व नहीं दूंगा। बस इतना ही। किंतु मुझे बासंती चाहिए। बासंती को केंद्र करके जो भविष्य बनेगा, उस भविष्य में बाधा देने का किसी को अधिकार नहीं। मान सम्मान का, मानदंड का, अपयश चेतना का या और किसी इंसान का···।

रुपुक बूढ़ी को उसने सब बात बतायी। बूढ़ी हैरान हो गयी। उसने पूछा, "धन बेटा, आखिर तुम भी···?"

वह बोला, "सच है बहन, मैं ऐसा करने को मजबूर हो गया हूं। नहीं तो बासंती जीवन भर खुश नहीं रह सकेगी। और मैं भी नहीं रह सकूंगा।"

धनजय की सजल आंखों में बूढ़ी को बड़े दुख का संदेश मिला। बोली, "किंतु तुम जैसे लड़के को भी, इसी तरह लड़की लाना पड़ेगा क्या? सारी जनता देख

सुनकर, हरि-हरि बोलेगी।"

"हां, कुछ दिनों के लिए तो लोग हैरान रहेंगे। पर बहन, लोगों के मन में बात रखने की शक्ति बहुत कम होती है। मैं जल्दी ही पहले जैसा धनंजय बन जाऊंगा। पर अब, यदि मैं, श्रद्धा और सम्मान को पकड़कर बैठा रहूं, तो यह भूल, मेरा सारा जीवन बर्बाद कर देगी। मैं भी एक साधारण इंसान हूं। यहां रहकर, मैं हूबहू यहां के लोगों की ही तरह हो गया हूं। लोगों ने मुझे बहुत ऊंचा स्थान देकर गलती की है। मेरे प्रति, दूसरों की उच्च धारणा मेरे लिए कष्ट का कारण बन गयी है! केवल ईश्वर ही सकल गुण से पूर्ण कला हो सकता है। मनुष्य ऐसा नहीं बन सकता।"

बूढ़ी को कुछ ज्यादा समझ नहीं आया। उसने कहा, "तब भी, धन बेटा, एक बार और सोच लो। तुम्हारी उम्र कम है, इसीलिए सोचती हूं, शायद तुमसे भूल हुई है।"

धनंजय बोल उठा, "मैं कभी नहीं सोच सकता, कि मैं गलती कर रहा हूं। तुम भी सोचकर देखो बहन, 'अगर अपनी इच्छा में बाधा बिघ्न हो तो, वह, बाधा विघ्न दूर करने का, हर आदमी का अधिकार है। उसके लिए इंसान को, लड़ने का भी अधिकार है। बासंती को पाने में अनेक बाधायें हैं। मैं उसको घर से डांट फटकार कर तो नहीं ला सकता। इसलिए उसको इसी तरह लाने का, मेरा अधिकार है। जिस लड़की का मन मैंने पाया है, जिस लड़की को मैंने ही पहला प्यार सिखाया, उस लड़की को मुझे इस तरह घर लाने का कोई अधिकार नहीं है क्या? और बासंती को इसी तरह लाने से ही, उसका उद्धार करना होगा। यदि न लाऊं, तो मेरे लिए उसकी प्रवंचना करना होगा। औरत दुर्बल होती है। समय पड़ने से उसका मन ज्यादा ही दुर्बल हो जाता है। औरतें अकेली बाधा विघ्न का सामना नहीं कर सकतीं, विपद के स्रोत में वह जाती हैं।"

मन के आवेग में धनंजय एक वक्ता की तरह बहुत कुछ कहता गया। रुपुक बूढ़ी के मन में, अभी बात लगी। दांतविहीन मुंह से, किंचित मुस्कराने से, उसका मुंह उज्वल हो गया। धनंजय को ऐसा भाव हुआ, जैसे बिना दांत निकलने वाला शिशु मुस्करा रहा है। यह देखकर उसको गहरी सांत्वना मिली। बूढ़ी ने उससे मजाक में कहा, "सच है, औरत माया करने लगे तो, जटाधारी शिव भी जाग उठते हैं। तुमने सच ही कहा है। यह भोगराम प्रख्यात रुक्मवीर है। 'भाउना' में

रुक्मवीर को देखा है ना ? नहीं तो क्यों भगवान कृष्ण को निरुपाय होकर रुक्मणी देवी को भगा कर ले जाना पड़ा।"

यह सुनकर धनंजय के मन में किन्हीं दो पुरुष और दो नारियों की बात फौरन याद आयी। यह सब पुस्तक के पन्नों में, रक्त, मांस, आशा-आकांक्षा और कामना वासना से जीवित पुरुष नारी ही। शाश्वत वसुधा ने, युग-युग से उन लोगों को मिट्टी का स्पर्श और फूलों का सौरभ प्रदान किया है। वह है उषा, अनिरूद्ध, सुभद्रा, अर्जुन और शायद कई और। रुपुक बूढ़ी धनंजय के कहे अनुसार काम करने को सहमत हो गयी। धनंजय ने बूढ़ी से विदा लेते समय कहा, "बाई अभी भी यदि समझती हो कि मुझसे भूल हुई है तो मुझे और कुछ नहीं कहना है। हम इंसानों में भूल-चूक दोनों हैं। सोचिये, जो राम पितृ सत्य पालन करके बनवासी हो सकते हैं, उन्हीं राम ने, छिपकर, बाली का वध किया। अकारण ही में सीता को विसार सकते हैं।" बूढ़ी ने हंसकर कहा, "समझाने की जरूरत नहीं है। यह अगर भूल है तो ढेड़कुड़ी, दो कुड़ी, बरस पहले, मैंने भी भूल नहीं की थी क्या ?"

धनंजय ने पूछा, "इसी कारण से क्या ?"

रुपुक बूढ़ी अचानक धनंजय की आखों में युवती हो गयी। बूढ़ी की सलज्ज हंसी में, उम्र के आसार जैसे खत्म हो गये। घर के सामने से निकलते समय बूढ़ी ने पीछे से कहा, "इतु कथा परम गुप्त। आनक हित नहीं जुगुत। अच्छा धन बेटा, कल ही जाना पड़ेगा क्या ?"

धनंजय ने पदुलि से ही कहा, "नहीं परसों। मैं कल फिर आऊंगा, चिट्ठी देने से ही उसे विश्वास होगा !"

धनंजय आनंद मन से घर वापस आया।

तेरह

बरसात के दिनों में दक्षिण पार के लोग उत्तर पार जाते ही नहीं। यही कहा जा सकता है कि उत्तर पार के लोग जरूर दक्षिण पार जाते हैं, पर बहुत जरूरी होने से ही। सोनाई पार करना विपद की ही बात है। निपुण नौकावार, छोटी नौका लेकर, सोनाई की लहरों से खेलते रहने से भी, दक्षिण पार के लोग, उत्तर पार

कम ही दिखायी देते हैं। औरतें तो कभी नहीं जातीं। पर रुपुक बुढ़िया की बात अलग है। वह घर-घर मुगा और पाट के कपड़े बेचती फिरती है। उसका यह कारोबार अच्छा चलता है। यही धंधा करके वह दो जवान लड़कियों का पालन-पोषण कर रही है। खुद भी अच्छी तरह से रहती है। बगैर मर्द के, इस घर को चलाने में तनिक भी असुविधा नहीं होती। बूढ़ी छोटी-मोटी विपद-आपद की परवाह नहीं करती। भरी बारिश में सोनाई कितनी भी भयानक हो, कितनी भी नौका डूबने की खबर आये, बूढ़ी परवाह नहीं करती। जरूरत पड़ने से छोटी नौका से ही दक्षिण पार आती है। घाटिया, नौकावार 'मार नौका, (बड़ी नौका जिसका डांड जोर से चलाना पड़ता है) के मालिक सब उससे परिचित हैं। नौकावार जितने साहसी हैं, वह भी उतनी ही साहसी। उसके अनुरोध करने से कोई भी नौकावार उसे पार ले जाने में आपत्ति नहीं करता। वह लोग जानते हैं कि रुपुक नदी की मछली जैसी ही है। वह बीमार-अजार होकर मरेगी, पर नदी के पानी में कभी नहीं मर सकती। वह चार तरह का तैरना जानती है। सोनाई के दोनों पार के जितने लोग धनंजय को जानते हैं, उतने ही लोग रुपुक को भी पहचानते हैं। क्योंकि रुपुक का औरतों के साथ उठना-बैठना ज्यादा है और धनंजय का मर्दों के साथ।

भरी दोपहरी रुपुक भोगराम के घर आयी है। उसे आजकल इन लोगों के घर आना पसंद नहीं है। धनी होने के बाद, इन लोगों की मति-गति बदल गयी है। भोगराम भी आजकल अपने बारे में डींग मारने लगा है। मुगा या पाट का कपड़ा दिखाने से यह लोग, "जार्जेट', 'वायल' की बात करते हैं। आज काम के मारे आने से भी उसने पहले जैसा अपनापन दिखाकर बात नहीं की। उसने सिर्फ आवाज दी, "घर में कोई है ?"

गोद में छोटा बच्चा लिये, तरुलता निकल आयी। कहा, "ओह बाई आयी है। आज हमारे घर आने के लिए रास्ते का कांटा किसने निकाल हटाया है ?"

अंदर से बासंती की आवाज सुनायी दी, "कहीं रास्ता तो नहीं भूल गयी।"

छोटे से पीढ़े पर बैठते हुए रुपुक बूढ़ी ने जवाब दिया, "तू कुछ भी कह ले, मुझे तुम्हारे घर आने के लिए 'दिगदारी' लगती है। धनी होने के बाद तुम लोग अजनबी से हो गये हो।"

"बाई, ऐसे क्यों कहती हो, क्या हम लोगों को बांध कर पीटते हैं ?"

"अच्छा, तो तुम लोग दूसरों के सामने नम्र होना सीख गये हो।"

तरुलता ने एक दुख की सांस लेकर कहा, "बाई मैं तुमको एक नयी बात बताती हूं। परिवार धनी होने से, मर्दों का ही प्रताप बढ़ता है। औरतें तो पहले जैसी ही बेकार रहती हैं!"

"क्या कहा। तुम्हारे मन में अभी भी दुख है?"

"हां, पहले खाने-पीने, पहनने-ओढ़ने का दुख रहने से भी मन का सुख था। अब अच्छी तरह खाने-पहनने से क्या होता है। मन तो मरकर सूखी लकड़ी हो गया है।"

बासंती अब तक रुपुक बूढ़ी के मुंह की ओर एकटक देख रही थी। वह जानती है बूढ़ी का घर पाभचिला में है। शायद बूढ़ी के मुंह से धनंजय की कोई बात निकले। यदि वह खुद नहीं कहेगी तो भाभी के जाने के बाद वही लाज, शर्म छोड़ कर उससे पूछेगी। सगायी होने के बाद से वह पिंजरे के पक्षी की तरह दिन बिता रही है। रात को सपने सता रहे हैं। कई रातें वह उल्लू की आवाज सुनकर चौंक उठी है। बदन में सिहरन और छाती में धड़कन। जीवन की दारुण अनिश्चितता आगे रखकर, बंदिनी की तरह दिन बिता रही है। किंतु आज रुपुक बूढ़ी को देखकर उसे एक अनजान आशा की किरण दिखायी दी। तरुलता की रुपुक के साथ बातचीत में ज्यादा गोपनीयता और अपनापन देखकर बासंती खुद ही अलग हो गयी। रसोई में चाय के लिए पानी गर्म करने को रख दिया। मौका पाकर बूढ़ी ने पूछा, "मेरे ख्याल से तो तुम्हारा मन दुखी नहीं होना चाहिए। क्या वह मारपीट करते हैं। सुना है, हठात धनी हो जाने से मर्द शराब पीता है?"

तरुलता की आंखें डबडबा आयीं। कान के पास मुंह लाकर बोली, "वह धनी हो गये और प्यार-मोहब्बत भी छोड़ दी। धन क्या हुआ मन में शनि बस गया। इतने सालों बाद मैं अब फूहड़ लगने लगी हूं। मैं अब देखने में बदसूरत भी लगने लगी हूं। घर की औरत पर मन नहीं टिकता। दूसरी पर नजर पड़ गयी है।"

बूढ़ी ने पूछा, "मैं क्या कर सकती हूं?"

तरुलता ने बताया, "सुना है, गोसांई बरि के मुकुट 'कैवर्त्त' (मछली पकड़ने वाली जात) कमर में बांधने के लिए एक ताबीज देते हैं?"

"हां सुना तो है।"

"मैं तुम्हारे पैर पकड़कर विनती करती हूं बाई, इतवार के पहले ही वह

ताबीज ला देना। जो भी दाम चाहिए मैं अभी दे देती हूं। शायद उसके बांधने से मुझ पर मन टिक जाये। जानती तो हो, सब पुरुष भ्रमर होते हैं।"

रुपुक बूढ़ी ने तरुलता का दुख समझते हुए वचन दिया। उसी समय बासंती ने एक वाटी चाय बूढ़ी के सामने रख दी और उसके पास बैठकर सुपारी काटने लगी। तरुलता ने बात बदलने के लिए पूछा, "बाई आजकल कपड़ा नहीं ला रही हो?" बूढ़ी ने जवाब दिया, "इसी महीने ही नहीं लायी हूं। लोगों की अवस्था हीन हो गयी है। खरीद नहीं सकते।"

बच्चे शोर कर रहे थे, इसलिए तरुलता बूढ़ी को बैठने को कहकर, रसोई में पहुंच गयी। बासंती को बूढ़ी के साथ अकेले होने का अवसर मिला। काफी देर दोनों चुप रहीं। जैसे आंखों से ही बहुत-सी बातों का आदान-प्रदान किया। अंत में बूढ़ी ने आवाज दी, "बेटी नौजवान लड़की हो और सूखती जा रही हो। तुझे देखकर मुझे बड़ी माया लग रही है। तूने तो बाल भी ठीक से नहीं बनाये हैं।"

बासंती कुछ नहीं बोली। मिट्टी पर चलते हुए कीड़ों की कतार देखती रही। रुपुक ने फिर पूछा, "क्या तू अक्षर पढ़ सकती है?"

बासंती ने समाधान किया, "चार श्रेणी तक पढ़ी हूं।"

"बासंती मैं सब कुछ सुन चुकी हूं। यह न समझना कि धनंजय सुख से है। मैं आज तुझसे वचन लेने आयी हूं। ले यह चिट्ठी। पढ़कर, किसी को न दिखाकर फाड़ देना।"

बासंती की दोनों आंखों में जैसे वर्षा की बाढ़ ही आ गयी। चादर का आंचल मुंह में लिए बैठी रही। दूसरे हाथ से आंसू पोंछकर फिर पहले-सी दृढ़ हो गयी। दो घूंट में चाय खत्म करक, रुपुक ने असंलग्न तौर से असली बात शुरू की, "बासंती, जीवन में अवसर एक बड़ी चीज है। वह तुम्हें भगाकर ले जाना चाहता है। यह मौका यदि हाथ से निकल गया, तो सारी जिंदगी भुगतना पड़ेगा। समझी, जीवन में मौका एक ही बार मिलता है।"

बासंती ने यह कभी नहीं समझा था कि धनंजय इतनी दूर तक पहुंच जायेगा। वह आनंद से आत्महरा हो गयी। कहा, "किंतु उनका तो इतना सम्मान है। लोग उनको इतना अच्छा समझते हैं।"

बूढ़ी ने जवाब दिया, "लोगों के सोचने की परवाह करके, क्या तू सारी जिंदगी रोती रहेगी। धनंजय क्या कहता है, जानती है? वह कहता है, भद्रता और

अनुशासन तो इंसान को थोड़े से पानी में जिंदा मछली की तरह बना देता है। अच्छी तरह से सोच-समझ ले बासंती, प्रीत नियम नहीं मानती, और प्रीत से दिल को ठंडक पहुंचाने के लिए, बगैर नियम का काम करना ही पड़ता है। यह वट वृक्ष जैसी बहुत बड़ी चीज है। छोटी-मोटी बदनामी इसे हिला नहीं सकती। छोटी-मोटी आंधी, वटवृक्ष के पत्ते ही हिला पाती है। पत्ते हिलने से वह वृक्ष जैसे 'पेपा मगना' बजाता है।

रुपुक बूढ़ी की मनहरण रसीली बातें सुनकर, बासंती की प्रेम भरी आंखें 'उजान' मछली की तरह छलांगें भरने लगीं। वह भरी वर्षा में सोनाई स्रोत की तरह, अकस्मात छंदमई और गति चंचला हो उठी। बूढ़ी के सामने अवश्य लज्जा-भाव दिखाकर, दोनों हथेलियों से मुंह ढक लिया। 'जाऊंगी' इस शब्द को धीमे से कहकर, एक बड़े काम के लिए प्रस्तुत होने की सम्मति बतायी। बूढ़ी को उस पर बहुत ममता हुई। नजदीक आकर बिखरे बालों को ठीक करते हुए कहा, "इतवार को भाभी के लिए जब ताबीज देने को आऊंगी, तब बताऊंगी। उसी दिन रात, पहले मुर्गे की पहली बांग देने के समय, तुझे ठनुआ घाट पहुंचना होगा। वह और घोघुना घाट वाला नौका लेकर तुम्हारा इंतजार करेंगे। शेष रात्रि चांदनी होगी। इतना थोड़ा-सा रास्ता चलने में तुझे तकलीफ नहीं होगी। चिट्ठी में यह सब कुछ लिखा है।"

बासंती ने कहा, "तू फिर ताबीज देने को शनिचर को ही आना। इतवार को आने से, इन लोगों को संदेह हो सकता है।"

"अच्छा तू कहती है, तो ताबीज शनिचर को ही, ले आऊंगी। पर जिसने सगाई की अंगूठी पहन रखी हो, ऐसी लड़की पर अक्सर घर वाले शंका नहीं करते। किंतु एक बात। तुझे अच्छी तरह मन पक्का करना होगा। समझी बासंती, जंगल साफ कर खेती के लिए जमीन तैयार करना और लड़की का घर छोड़कर किसी के साथ भाग जाना, दोनों के लिए मन कड़ा करना पड़ता है। यह सब कच्चे मन का काम नहीं है।"

मेरा मन किसी एक के लिए ही नर्म है, यह बात कहने का बासंती का मन था। पर शर्म की वजह से कह नहीं पायी। उद्देश्य सफल हो गया समझकर रुपुक बूढ़ी तरुलता को आवाज लगाकर चली आयी।

तरुलता बाल-बच्चों को लेकर बिस्तर पर लेट गयी। बासंती एक तांबूल

कूटकर मां को देने के बाद घड़ा लेकर घाट पर पहुंच गयी। सोनाई के उस पार 'बाऊ धान' के बीच एक-दो नौका चलने का अनुमान लगाया जा सकता है। इस पार दलंग घाट में भी दो 'मार' नौका (बड़ी नौका) खड़ी हैं। ठनुआ घाट बिल्कुल निर्जन। मध्य रात में चांद जैसे सूरज की तरह रोशनी दे रहा है। उसने धीरे से ब्लाउज के अंदर से चिट्ठी निकालकर उसे ठीक किया। अक्षर देख उसे ख्याल आया जैसे यह अक्षर नहीं हैं। जैसे धनंजय स्वयं बात ही कर रहा हो!

वह धीरे-धीरे पढ़ती गयी :

प्यारी बासंती,

मैं जानता हूं, तुम यह सपने में भी नहीं सोच सकती हो कि घर के शासन में आकर, तुमने अंगूठी पहनने पर अपने को राजी कर लिया, इसीलिए मैं तुमको गलत समझकर तुमसे दूर होता जा रहा हूं। मुझे तुम पर पूरा यकीन है। मैं बहुत आतुर हो गया हूं। बहुत सोच-समझकर देखा। आखिर में सोनाई पार में प्रचलित, पर शायद तुम जैसे बड़े घरवालों के साथ न मेल खानेवाला, यह सहज उपाय ही चुन लिया। दूसरे के मतामत की परवाह करके चलने से, अपनी प्राण इच्छा को झुठलाना पड़ेगा। पर अब तो समय भी नहीं है। इसलिए तुम्हारे घर-परिवार में न घटने वाला काम ही करना पड़ेगा। आखिरी रात, जब चांद निक-लेगा। इतवार की रात घोगोना घटवई के साथ तुम लोगों के घाट पर नौका लेकर इंतजार करूंगा। तुम मुर्गे की पहली बांग सुनते ही निकल आना। अवश्य, आधा घंटा जल्दी या देर होने से कोई बात नहीं। मैं जानता हूं पैदाइशी घर, बूढ़ी मां और दूसरों को छोड़ना तुम्हारे लिए कठिन होगा। पर क्या मैं तुम्हारे लिए पराया हूं। अच्छा, और नहीं लिखूंगा। रुपुक बूढ़ी ने शायद बताया होगा। बूढ़ी के सामने तुम वचन दे दोगी यह मैं जानता हूं।

आखिर में बहुत-सा प्यार से, और प्यारा···। तुम सोच-समझकर खाली स्थान भरकर पढ़ लेना।

इति···

तुम्हारा ही
धनंजय।'

चिट्ठी पढ़कर बासंती का मन बेचैन हो गया। आसपास में, 'बाली-गाहि' सखीमती और गंगा 'चिलिनि' (जैसे चिड़िया) की आवाजों में नया सुर सुना।

स्वर-स्रोता सोनाई की कलकल आवाज, उसके मन में भी प्रतिबिंबित हुई। दूर के बाऊ धान और दलदल के हरेपन में उसके अपने मन का हरियाला भाव मिल गया। सोनाई की हरियाली पट भूमि में, सोनाई की गोद में वह अपने को ही देख पायी। सोनाई से जैसे गलता हुआ सोना और रूपा ही बहता जा रहा है। उसकी सांस तेज चलने लगी। पढ़ने के बाद चिट्ठी फाड़ने के लिए रुपुक ने बार-बार कहा था। पर वह धनंजय की चिट्ठी फाड़ नहीं सकी। धनंजय का यही पहला पत्र। शायद यही आखिरी। उसके साथ रहने से चिट्ठी की जरूरत कहां। उसके साथ जाने के बाद भी, वह यह पत्र बहुत प्यार और गोपन में रखेगी। जब गृहणी बनकर दो-तीन बच्चों की मां बनने के बाद भी—उसका यौवन विदा लेने के आखिरी समय भी—हिफाजत से रखी यह चिट्ठी, उसे दिखाकर कहेगी, "देखो, तुमने कैसी सोने-सी प्यारी चिट्ठी लिखी थी। मैंने तुम्हारा मन कैसे लूट लिया था।" शायद तब उनके दिल में ज्यादा प्यार उमड़ आयेगा। तब वह पिता का गांभीर्य और स्वामी के दायित्व से कहेंगे, "पगली कहीं की ! मालूम पड़ता है तुम दिन-पर-दिन लड़की होती जा रही हो।" ऐसा कहकर, वह शायद दिल खोलकर हंसेंगे।

वह घड़े में पानी भरकर वापस आयी। तकिये की सिलाई खोलकर रुई के बीच में चिट्ठी रख दी और पहले की तरह सिलाई कर दी। किसी को पता नहीं चला। कुछ ही घंटों में अपना घर दूसरे के घर जैसा लगने लगा।

बासंती इतवार की दोपहर में, मां के साथ बड़े प्यार के साथ बातचीत करती रही। भाभी को कुछ पता न चले इसलिए उससे अलग-अलग ही रही। यह दिन किसी तरह बीत जाये, इसी इंतजार में रही। भाई भोगराम आज सारा दिन गायब, रात को ही लौट सकते हैं। यह आदमी खराब हो गये हैं। पैसा मिल जाने के बाद से जिस घर में जवान लड़की हो, उसी घर में वह चाय तांबूल चखने लगे हैं। ढलपुरिया के किसी की छोड़ी हुई औरत के साथ उनका बुरा संबंध हुआ है। शौक मिटाने के लिए वह उसको काफी पैसे भी देते हैं। यह बात बहुतों को मालूम है। तरुलता भी जानती है। आजकल तरुलता का मन दुखी है। बाल-बच्चों का मुंह देखकर ही सांत्वना मिल रही है। बासंती को लगा, उसके चले जाने से तरुलता बड़ी अकेली हो जायेगी। मन की बात कहकर दुख लाघव करने के लिए कोई दूसरा प्राणी नहीं मिलेगा। बासंती शाम को खाना नहीं खा सकी। उसको बहुत-सी चिंताएं हैं। यदि पकड़ी जाये। दिन में ही उसने एक पोटली घर

के कोने में सबकी नजर से छिपाकर रख दी थी। उसी में धनंजय की चिट्ठी भी है। अवश्य उसने तकिये के अंदर सोने के जेवर भी रखे हैं। क्योंकि घर में रहते हुए, गहने पहने नहीं जा सकते, सब की नजर पड़ेगी। इसके अलावा गहने की जोड़ी साथ न ले जाने से, धनंजय जल्दी बनवाकर दे सकेगा क्या ? उसके पास जाने कितने रुपये हैं, बासंती को मालूम नहीं। शायद उसके पास पैसा होगा। कल रुपुक बूढ़ी ने बताया था कि वह अपने घर में दो कमरे बढ़वा रहा है। ओफ, कैसी उसकी ख्वाइश। उसे राजरानी बनाकर ही रखेगा !

खाने के समय भोगराम प्रायः ही घर में नहीं रहता। घर के सब लोग जब सोने के लिए जाते हैं, तब वह दरवाजा खटखटाता है। आज भी वह करीब रात के दस बजे लौटा। उसकी आवाज सुनते ही बासंती को आज गुस्सा आ गया। उसने सोचा यही सब कष्टों की जड़ हैं। जो आदमी धनंजय को साधारण आदमी समझकर, उससे घृणा करता है, उस आदमी को उसे भी बुरा समझना चाहिए। उससे नफरत करनी चाहिए। उसे भाई के प्रति प्रतिशोध का भाव हुआ। धनंजय के साथ भाग जाने की इच्छा और प्रबल हो गयी। पैदाइशी घर की माया छोड़ने के लिए मन दृढ़ हो गया। इस तरह से उसको एक सबक मिलेगा और समझेंगे कि जवान लड़की का भी अपना मन होता है। उसकी भी एक अपनी निजी इच्छा होती है और वह भी परिवार की चलित नीति को त्यागकर खुद सुखी हो सकती है।

रात शुरू होते ही बादल देखकर उसका मन भी गीला हो गया। धनंजय नाव लेकर नहीं आयेगा क्या ? जरूर आयेगा। शेष रात इसी तरह का मौसम रहने से अंधेरा गहरा नहीं होगा, रास्ता पहचाना जायेगा और ज्यादा चांदनी होने से भी बुरा ही होगा।

भाई भोगराम गहरी नींद में। तरुलता भी सो गयी होगी, क्योंकि कमरे में बत्ती बुझ गयी है। बासंती मां के पास सोयी है, पर मां को जल्दी नींद नहीं आती। बहुत देर तक एक पद गुनगुनाती रहती है—"मोपे कृपा करा हरि ए, दांते धरो तृण; माथे धरो तृण, तुम्हीं कृपामयक ना जानू एतो दिन।" मां को नींद आने तक, आधी रात बीत गयी। बासंती ने दरवाजे में कुंडी नहीं लगायी। किंतु थोड़ी देर बाद बाहर जाने की जरूरत दिखाकर, कमरे में आते समय दरवाजा भीड़ दिया। आवाज हुई पर कुंडी नहीं लगायी।

आज मुर्गा पहली बांग नहीं लगायेगा क्या ? क्यों नहीं ? वह नासमझ है इसलिए ऐसा सोच रही है। प्रकृति के नियम में लंघन नहीं होता। 'मुर्गी', 'डाउक' 'सखियति', 'बाली-माही' आदि चिड़ियां और गिलहरी भी प्रकृति के साथी हैं। यह भी चांद-सूरज और नारी की तरह ही सब अपने-अपने समय से काम करते हैं। आज भी उधर तोलन कछारी के घर की मुर्गी बांग देगी—'लक्का कु-ऊ, ऊ, कु, ऊ, ऊ···।'

गोहाली में एक बछड़ा 'हम्रे-हम्रे' कर रहा है। यह भी रात्रि शेष होने के ही लक्षण हैं क्या ? कजली गाय का चार महीने का बछड़ा कितना प्यारा है। वह आंगन में खड़ी रहे, तो बछड़ा दौड़कर आता है और उसके कपड़ों में मुंह डालकर सूंघता है। हथेली चाटता है। पाभचिला जाकर घरवालों की याद तो आयेगी ही, इस मासूम बछड़े की भी याद आयेगी। पर कोई उपाय नहीं, माया और प्रीत दोनों अलग-अलग चीज हैं क्या ? इस बड़े प्रश्न ने बासंती को ज्यादा अस्थिर कर दिया।

यह सब सोचने से काम नहीं बनेगा। अपना मन स्थिर करने का समय आ गया है। यह सुनो आवाज। तो प्राणी-जगत जाग उठा है। मुर्गे ने अभी बांग नहीं दी है तो भी रात खत्म होने को आ गयी है। बासंती रास्ते पर गाड़ी के चक्के पत्थर पर लगने की आवाज सुन रही है। तो 'सोंदर पाम' के लोग गाड़ी लेकर शहर की ओर चल पड़े हैं। निश्चय ही आधी रात हो गयी है, क्योंकि यह लोग तारे देखकर, रात कितनी बीती है स्थिर करते हैं। उसने ऐसी दो चिड़ियों की आवाज सुनी जिनके नाम वह नहीं जानती है। नीलू के घर के कुत्ते भी भौंक रहे हैं। दोना-मुखी जंगल की ओर से 'फेउ' की आवाज उसके कानों में पड़ी। वह चौंक उठी। एक अनजान आशंका ने उसे विवृत्त कर डाला। सच है किसी के साथ भागने के लिए साहस चाहिए, मनोबल चाहिए, कुछ निठुर भी होना चाहिए।

मां, बड़े भाई, भाभी और छोटे-छोटे भतीजों के लिए, इस समय उसे बहुत प्यार आ रहा है। यहां हरेक के लिए अपनापन लग रहा है। उनका उसके साथ खून का रिश्ता है। उनके प्रति लगाव भी अलग तरह का है। यह लोग इस उम्र में भी इस प्रीत का मोल नहीं समझ सकते। उसकी भलाई हो जाये, तो इन लोगों को आनंद नहीं होगा क्या ? भाई भोगराम को वह अच्छी नहीं लगती क्या ? भाभी उसे दूसरे ही कारण से बुरा समझती है। भाई की गर्मागर्म बातें सुनकर,

मां भी कहती है, "रुपये ने उसका दिमाग खराब कर दिया है, वह सिर्फ उल्टा नाच नाच रहा है।" तो भी वह अपने भाई को कैसे बुरा कह सकती है ? उसके बगैर बाप मरने के बाद सारा घर उजड़ जाता। अब की तरह जरी का काम किया हुआ मेखला, वायल की चादर ओढ़ना छोड़कर दूसरे के घर में काम भी करना पड़ता धन किसे नहीं चाहिए। सोनाईपरिया लोग यूं ही नहीं कहते, 'मछली देखने से बगुला काणा, धन देखने से पुरुष काणा'। जो धन कमा नहीं सकते, वही 'धन-दौलत' सब असार कहकर, अपना पांडित्य दिखाते हैं। कल सुबह तरुलता भाभी उसे न देखकर एकदम टूट पड़ेगी, चीख-चीखकर रोयेगी। रोने-धोने के बाद दिल में प्यार रखते हुए भी वह बासंती को गाली देगी। शायद कहेगी, "जवान लड़की और 'घटिया-सिघरा' मछली एक ही बराबर।" पर तरुलता इतनी अच्छी है। यौवन-काल में तरुलता ही उसके दुख की साथी थी। तरुलता बासंती के गुण गाकर दूसरों के सामने कितना गर्व करती है।

और यह मां! लकड़ी की तरह पड़ी है। यह मां कितनी महत्। दस महीने दस दिन उसे गर्भ में रखकर और बचपन में उसका लालन-पालन करने के लिए कितने कष्ट भोगे होंगे। जाने उसे केंद्र करके कितने स्वप्न देख रही है! जवान लड़की को देख-देखकर जाने उसने कितनी ही बार अपनी जवानी की तस्वीर देखी होगी और शायद कितने ही मधुर स्मरण उसके मन में फूल जैसे गुंथ रहे हों!

हिश! वक्त पर उसका मन बड़ा कोमल हो रहा है। घर-पवित्र 'सत्र' (असम के वैष्णवों के धर्म क्षेत्र) जैसा लग रहा है। घर के सब बहुत प्यारे लग रहे हैं। उन लोगों के लिए प्यार-मुहब्बत उमड़ी आ रही है। जन्म लिया घर रात की निस्तब्धता में मुखर हो गया है। वह सात चक्र में बंध गयी है।

हठात वह सिर से पैर तक कांपने लगी। तोलन कछारी के घर से मुर्गे की बांग आने लगी। पहले मुर्गे की बांग 'लंक कु-उ-उ, कु-उ-उ, कु-उ-उ। लकीं कु-ऊ, कू-ऊ'। समस आ ही गया। मुझे इसी मुहूर्त में मन स्थिर करना पड़ेगा। रुपुक बूढ़ी की बातें मानो कानों में गूंजने लगीं, "मन कठोरता से बांधना चाहिए। यह सब कमजोर मन के काम नहीं हैं।" ख्याल आया, धनंजय ने भी चिट्ठी में ऐसा एक इंगित किया है, "मैं जानता हूं, अपना घर छोड़ना, मां और दूसरों को छोड़ना, तुम्हारे लिए कठिन होगा। किंतु क्या मैं पराया हूं?"

पत्र की इन कई बातों ने निमिष में उसे मनोबल दिया। बायें बगल में पोटली दबाकर, दूसरे हाथ से सोती हुई मां के पैर छूकर प्रणाम किया। होंठ हिलाकर बगैर शब्द किये बोली, "बोउ" (असम में मां को बोउ कहते हैं) तू मुझे क्षमा करना। सिर्फ एक ही साल तो दुख सहना पड़ेगा। बाद में जब गोद में बच्चा लेकर आऊंगी तो लड़की-दामाद को देखकर, तेरे मन में हर्ष नहीं होगा क्या ?"

चुपचाप पैरों के बल कमरे से निकल आयी। दरवाजे के दोनों पाट धीरे-से भेड़ दिये। पेड़ के पत्ते हिलने जैसी आवाज भी नहीं होने दी। पोटली फर्श पर रखकर, घुटने टेककर जन्म ली हुई मिट्टी को प्रणाम किया। थोड़ी-सी मिट्टी लेकर सिर में लगायी और फिर मन में कहा, "हे घर की लक्ष्मी, तू मुझे आशीर्वाद देना। अपराध क्षमा करना।"

तुलसी का पत्ता तोड़कर सूंघा और दो पत्ते पहने हुए ब्लाउज में रख लिये। एक नजर ऊपर की ओर देखा। आकाश में जहां चांद निकला है वहां जरा भी बादल नहीं है। जैसे चांद उसको नंगा करके देख रहा है।

घर के पीछे के बागान की तरफ ठनुआ घाट, वह उसी तरफ कदम आगे बढ़ाती चलती गयी। उत्तर और दक्षिण की दो अलग-अलग शक्तियां उसे परस्पर दो विपरीत दिशा में खींचने लगीं। फिर भी उसका शरीर धीरे-धीरे घाट की ओर चलता गया। चांदनी में दिखायी दे रहा है 'काकिनी' (पतला लंबा एक तरह का सुपारी का पेड़) तांबूल पेड़ के गुच्छे में गिलहरी ठोंगे मार रही है। टिड्डी अपने बारीक पंख से अनानास के पत्ते पर सुरीले शब्द निकाल रही है। काठफोड़ा चिड़िया ने काठ पर अपनी चौंच की आवाज बंद कर दी। शायद उसी को देख रही है। दलंग घाट से 'बरगीत' (असम का अन्यतम भक्ति संगीत) का स्वर बहता आ रहा है। शायद भक्ति में गद्गद् हो कोई नाव वाला गा रहा है—"बहुरि गौरी गोपाल प्राण नेहारि फुकाय इबा नयने जुरे नीर, वयने पुरित बारि।" घाट तक पहुंचने के लिए कुल दो ही 'नल' (दूरी का नाप) बाकी। 'मोकाल' बांस के पेड़ घाट को ढांक रहे हैं। काले जामुन के दोनों पेड़ों के बीच से चांदनी आकर उसके बदन पर पड़ रही है। उसके पैर जैसे घाट की ओर बढ़ ही नहीं रहे। दोनों गालों पर आंसू बह रहे हैं। सांस तेजी से चल रही है। चांदनी जैसे उसका बदन चाट रही है। वह कई कदम आगे बढ़ी। 'मोकाल' का बांस वाला मोड़ पार किया। सोनाई दिखायी देने लगी। दूसरा अंश अजार पेड़ की छाया से ढक गया।

एक नौका के ऊपर सफेद कपड़े पहने एक मूर्ति पर नजर पड़ी। निश्चय यही धनंजय है। दूसरे आदमी पर नजर न पड़ने से भी उसकी पी हुई बीड़ी की आग दिखायी पड़ी। बीड़ी पीने वाला, यह आदमी होगा घोगना घटवाई।

हठात उसमें एक नयी चेतना जागृत हुई। हाथ की अंगूठी पर नजर पड़ी। वह अंगूठी को देखती रही। यही अंगूठी मथुरा की मां ने उसे पहनायी थी। इसी अंगूठी को पहनाकर मथुरा की मां ने उसे अपनी लड़की समझकर कहा था, "और दो दिन बाद, क्या हम तुम्हारे अपने नहीं हो जायेंगे ?" उसको अपनी बहू बनाने की उनकी कैसी आशा-अभिलाषा। अंगूठी का नग चांदनी में जगमगा रहा है, जैसे उससे अपरिचित मथुरा नाम के नौजवान की आशा-आकांक्षा झिलमिला रही है। आखिर कल उस अचिह्न आदमी का अपमान नहीं होगा ? भाई भोगराम तो कल से चार-पांच गांव में मुंह दिखाने लायक भी नहीं रहेंगे। और उसके भाग जाने के संताप से यदि मां मर जाये ? और कल यदि, "तुम्हारी ही चाल से ऐसा हो पाया," कहकर भाई भोगराम तरुलता पर प्रहार करने लगे।

वह लोग उसे नौका में देख न लें यह सोचकर वह कठहल के पेड़ की आड़ में पीठ टिकाकर खड़ी हो गयी। अंगूठी उतारकर फेंक देने के लिए सोचा, पर ऐसा कर नहीं पायी। ऐसा करने से पाप लगेगा। वह हिंदू घर की लड़की है। ईश्वर को साक्षी रखकर उसे अंगूठी पहनायी गयी है। उस दिन उसने तांबूल पान से सजाई बड़ी 'शराई' (पानदान) के सामने घुटने टेककर प्रणाम किया, सब तरह की चीजों को प्रणाम करने का अर्थ 'भगवान वस्तु' को प्रणाम करना। वह तो उसी दिन से धर्म के नियम अनुसार दूसरे घर की और किसी दूसरे की हो गयी। वह उस पुरुष को धोखा नहीं दे सकती है और अब तक धनंजय ने उसके शरीर को छुआ तक नहीं है। अभी भी वह पवित्र कुंवारी है।

थोड़ी ही देर में यह नैतिक चेतना प्रबल हो उठी। और वह किसी ओर देखे बगैर, दौड़कर घर की दीवार के पास पहुंच गयी। धीरे से दरवाजा खोलकर पोटली कोने में छिपा दो। दीवार के पास आकर जोर से किवाड़ बंद किया। मां शायद जाग गयी थी। लड़की 'बाहर' गयी थी समझकर एक बार भी आवाज नहीं दी। वह बिस्तर पर लेट गयी। सारा शरीर बुखार की तरह घामने लगा। कुछ ही देर बाद मुर्गे ने दूसरी बांग दी। उसको ख्याल आया वह लोग अब तक शायद नौका लेकर पाभचिला वापस पहुंच गये होंगे। धनंजय ने इतने अपमान के

बाद रास्ते में घोगना घटगई को उसके विरुद्ध कुछ नहीं कहा होगा। यह चिंता मन में आते ही, उसके दोनों होंठ हवा से पेड़ के पत्तों की तरह हिलने लगे। वह छोटे बच्चों की तरह फूट-फूटकर रो पड़ी। मां ने नींद खुलने से पूछा, "बासंती, तुझे क्या हुआ?"

उसने रोते हुए कहा, "बोउ, तुम्हारे ही बारे में सोचकर दुखी हो रही हूं। मैं तुझे छोड़कर दूसरे के घर चले जाने से तुझे सब तरफ शून्य दिखायी देगा और मुझे भी मौत जैसा दुख होगा।"

मां ने दिलासा देकर कहा, "पगली लड़की, इस कारण इतना रोना चाहिए क्या? मैंने सोचा, शायद तेरी तबीयत खराब है। कुंवारी लड़की का केवल मां का मन बहलाने से चलेगा क्या? क्या तू इतनी-सी सामान्य बात भी समझ नहीं पायी?"

चौदह

उसी दिन से बासंती को शादी करने में मन लगाना सहज हो गया। दिन सब नीरव बीत गये। शादी का दिन भी आ पहुंचा। तभी बासंती ने मथुरा के बारे में कौतूहल दिखाया। उसके बारे में पता लगाया। दूसरे के घर में किस तरह चलना होता है उस पर बीच-बीच में मां और भाभी उपदेश देती रहीं।

'जोड़न' (ब्याह के एक दिन पहले वर पक्ष के लोग कन्या को जेवर, कपड़ा पहनाते हैं) के दिन वर पक्ष के दिये हुए अलंकार और कपड़े पहनते हुए वह एक दूसरे संसार की सुख-चिंता करने लगी। अपना मन मथुरा-मुखी बनाने की कोशिश करने लगी। बहुत दिन पहले मां की कही हुई बातों को जीवन-सारथी मानने लगी। मां ने उसको एक दिन कहा था, "जो औरत असलीयत में अच्छी है, उसके साथ कोई भी आदमी सुखी संसार बसा सकता है। ···औरत किसी भी अवस्था में अपने को मिलाना जानने से ही सुखी हो सकती है।"

अक्सर होम अग्नि के पास आने के समय, कन्या को थोड़ा रोना आ ही जाता है। आसपास की औरतों की आंखें भी छलछला आती हैं। बासंती भी उस समय रोयी थी। तरुलता और मां सुजला की आंखों से आंसू की धारा बहने लगी थी।

पर बासंती वर के पास बैठते ही एक अलग लड़की जैसी हो गयी। उसकी चादर का आंचल मथुरा की चादर के साथ बांध दिया गया। मथुरा के साथ उसने अभिन्नता अनुभव की। पूत मंत्रों ने, मन को नये जीवन का संधान दिया। पवित्र कुशवन से उसकी एक उंगली मथुरा की एक उंगली से बांध दी गयी। वह अग्नि को साक्षी करके दांपत्य जीवन में बंध गयी। होम समाप्त हुआ। बासंती का कुंवारा काल अतीत में विलीन हो गया। उसकी मांग में सिंदूर और सिर पर आंचल हमेशा के लिए आ गया। वर के घर प्रवेश के समय, मां का दामाद को बहुत कुछ उपदेश देते हुए सुनकर बासंती कुछ चौंक-सी गयी। मां पहली बार मिले हुए आदमी से अपने लड़के की तरह ही बात कर रही है। वह भी अकपट भक्ति से सुजला के पैर छूकर प्रणाम कर रहे हैं। सुजला ने सिर पर हाथ रखकर अंतर से आशीर्वाद दिया। एक ही दिन के भीतर, दो घर के लोग प्यार की जंजीर से बंध गये।

होम अग्नि के पास बैठने के समय बासंती ने मथुरा की उपस्थिति महसूस की थी। छाती तक लटकता हुआ घूंघट न होने से भी वह औरों के सामने मथुरा की ओर देख नहीं सकती थी। मथुरा को देखने के लिए उसे बड़ी हवस हो रही थी। ख्याल आया, क्या मथुरा का मन भी उसको देखने के लिए उसी तरह बेचैन नहीं हो रहा है? घूंघट के बीच से उसको उसके हाथ-पैर ही नजर आ रहे थे। एक बार मुंह की थोड़ी-सी झलक दिखाई देने से भी उसके चेहरे का अनुमान नहीं कर पायी थी। पर अब घर के अंदर घूंघट छोटा होने के कारण उसे अच्छी तरह देखने का मौका मिला। जैसे पहले सुना था, मथुरा वैसा ही खूबसूरत, सभा की शोभा बढ़ाने वाला सुंदर व्यक्ति। मुख-मंडल पर पवित्रता और कौमार्य की प्रतिछवि है। प्रथम दर्शन में ही वह उसे अपना लगने लगा। लंबाई में करीब छह फीट। चुस्त बदन कार्यक्षम होगा यह बात सहज ही अनुमान की जा सकती है। 'शोवाल-कुचिआ' (कामरूप जिले का एक गांव जहां बढ़िया रेशम बनता है) पाट के पंजाबी कुर्ते के ऊपर के बटन खुले हैं, इसलिए थोड़ा-सा सुगठित सीना दिखायी दे रहा है। पंजाबी कुर्ते में से सीने के दो-एक बाल दिखायी देना और अच्छा लग रहा है। अकस्मात बासंती के मन में एक बात आयी। उसने सोचा, मथुरा जरूर कोमल मन का, दूसरों को प्यार करनेवाला इंसान होगा। उसने कहीं सुना था, छाती पर बाल होने वाले पुरुष ऐसे ही होते हैं। छाती शायद खाल

होगी। यह अच्छे लक्षण हैं। 'ऊंचा कपाल छाती खाल, उस पुरुष के लक्षण 'भाल' (अच्छे)'।

वर के साथ विदा होने के पहले बासंती के इज्जत के साथ बड़े भाई को प्रणाम करते समय जमीन पर आंसू टपाटप गिरने लगे। यह आंसू दुख के नहीं। भाई के प्रति अशेष कृतज्ञता से, घर छोड़ने के समय उसका मन उदास हो गया। वह बहुत देर के बाद ही सोच सकी कि मिट्टी का मानुस सर्वदा अच्छे-बुरे का समष्टि, भला-बुरा लेकर ही हमारी पृथ्वी बनी है। तथापि पृथ्वी रूपवती, मोहमय और चिर-नूतन।

बहुतों को रुला कर और खुद रो-धोकर, वह पालकी में वर के बायें तरफ बैठी। बासंती नये जीवन में दरगियाल गांव की तरफ आगे बढ़ती गयी। तेज घोड़ों से खींची हुई पालकीसे उसने अपने गांव की ओर देखा। गांव उसकी आंखों से दूर होता गया। पर तरुलता, मां, बड़े भाई और भतीजों के लिए दिल दुखता रहा। मां और तरुलता सजल नयनों से शायद अभी भी उसी की बात सोच रही होंगी ? बच्चे भी अभी सिसक रहे होंगे। बड़े भाई शायद किसी को कह रहे हों, आज से घर सूना हो गया। वह घर की शोभा बढ़ाने वाली लड़की थी।

पालकी के पीछे से आते हुए वर यात्रियों का आनंद कोलाहल उसके कान में पड़ने के बाद भी 'काली' (शहनाई जैसा वाद्य) के फैलते हुए स्वर ने उसके घर छोड़ने का दुख तीव्रतर कर दिया।

अचानक उसकी सिसकी मथुरा के कान में पड़ी। उसने उसकी पीठ पर हाथ रखा। उसे एक सिहरन का अनुभव हुआ। कभी न देखे हुए अनजान पुरुष ने उसके शरीर को हाथ लगाया, यह उसका वैद्य अधिकार। उसनेकहा, "रो नहीं। मुझे बुरा लगता है ना !" उसकी आवाज मीठी। बासंती का दिल शांत हो गया। हां, यह पुरुष प्यार दे सकेगा। अच्छा आदमी है। उसके इस तरह दिलासा न देनेसे उसका दिल सूना-सूना रहता। पुरुषके एक प्रबोध वचन से ही, हजारकाम किये जा सकते हैं। 'भाउना' का एक वचन याद आया; राजकुमारी रुक्मणी को भी स्वयं भगवान कृष्ण ने प्रबोध दिया था। पीत वस्त्र से आंख-मुंह पोंछ कर कहना पड़ा था, 'कि करबों सिंध को शूक्र सब आया। हमाकु शपथ ताप तेजो हूं जाया'।

मोरापुर के दो मील पूर्व में अवस्थित दरगियाल गांव में, बासंती पहले दो बार आयी थी। यह गांव भी मोरापुर जैसा ही है। केवल सोनाई यहां मुड़ गयी

है। मथुरा के घर के सामने ही सोनाई। कारण उनका घर उत्तर-मुखी है।

शादी के दूसरे ही दिन से बासंती को सास, ससुर और ननदों के साथ अपनापन लगने लगा। दोनों ननदें, पारुल और पुतली, काफी रंगीली लड़कियां हैं। 'खोबा-खुबुनी' के मैदान में तीन बकरे काट कर लोगों को खाना खिलाया गया। वर-वधू को केंद्र करके बहुत से लड़के-लड़कियों ने हंसी-मजाक किया। रात बहुत देर तक यह सब चलता रहा। बासंती को बहुत अच्छा लगा। गांव वालों ने उसे पसंद किया कोई कह रहा है, "लड़की के 'लक्षण' अच्छे हैं। देखने में भी देवी जैसी। भागीरथ चाचा, आपके लड़के का बड़ा कपाल।" कोई औरत सास से कह रही है, "लड़के-लड़की की जोड़ी अच्छी है। भनिता वाई, तेरी बहू अच्छी है। लंबे मुंह की हिरण जैसी लड़की जिस घर में आती है, उस घर के लोग चारों ओर से, जय-जय मय-मय हो जाते हैं। बासंती ने छिपकर यह अभिमत सुने और गर्व से फूली नहीं समायी। उसमें आत्म-विश्वास जाग उठा। सोचा, एक पुरुष को अपने रूप और प्यार से वश में करना सहज होगा।

आज की रात ही जीवन की सब रातों से विशेष महत्वपूर्ण। ऐसी ही एक रात सब को चिर दिन के लिए याद रहती है। बहुत तो ऐसी एक रात के लिए आशा और कल्पना से अपेक्षा करते हैं। ऐसी ही रात में जवान लड़के-लड़कियों की आशा, आकांक्षा और प्यार, वासना सामाजिक स्वीकृति प्राप्त करके नाच उठते हैं।

तीन कमरों वाले लंबे-चौड़े कमरे में इतनी खूबसूरती से बिस्तर किसने सजाया, बासंती को पता नहीं चला। कमरे में अगर चंदन की सुगंध ने उसके मन में संकोच भय और अनुराग का ज्वार उठाया। पुतली, पारुल और पड़ोस की एक बहू के आकर उसे कमरे में धकेल देने से, उसे मर जाने जैसी शर्म आयी थी। मथुरा को भी इसी तरह अप्रस्तुत होकर आ जाने से उसे कैसे लगेगा? चुपके से भी वह उसके मुंह की ओर नहीं देख सकेगी। उसको तरुलता की बात याद आयी। उसके जीवन में, और बहुतों के जीवन में भी ऐसा एक दिन आया होगा। ऐसे एक दिन की प्रतीक्षा में ही और ऐसे एक दिन की कल्पना में ही, कितनी लड़कियों की आंखों में, शायद लड़के देवता बन जाते हैं। उसने खिड़की से झांककर देखा। बाहर चांदनी। चांद की ज्योत्स्ना ने बाहर के जंगली पेड़-पौधों को भी रजनीगंधा का रूप दिया है। तीन-चार 'नल' दूरी में बहती हुई सोनाई, जैसे सोनाई नहीं है,

की चंद्रावली रात में यमुना ही —विकसित वृंदावन में प्राण यमुना । सच, अपना कुंवारापन खोने से पहले इस मुहूर्त में ऐसा सोचना ही भाता है। इसी तरह अपने को मना लेना बुद्धिमत्ता का काम होगा। धनंजय की बात उसके मन में आने से भी, वह स्मृति धुंधली-धुंधली अस्पष्ट, स्थितिहीन। वह समय के स्रोत में बहकर अनजान सीमांत में मिल जायेगी।

अचानक उसकी चिंता के स्रोत में बाधा पड़ी। शर्माता हुआ मथुरा कमरे में आया। दरवाजा भीड़ दिया। चिराग की बत्ती बढ़ा दी। थोड़ी देर ऐसे ही खड़ा रहा। एक बार बासंती की ओर देखा। पाट वाले पंजाबी कुर्ते की जेब से दो कागज और फाउंटेनपैन निकाल कर स्टूल पर रख दिया। एक बार अपने बालों में हाथ फिराया। फिर खिड़की के पर्दे से कमरे में आती हुई चांदनी को देखा।

तरुलता के कहने के अनुसार बासंती ने पानदान मथुरा के पैरों पर रखकर प्रणाम किया। उसने मुंह से कुछ न कह कर उसके सिर पर हाथ फिराया और बिस्तर पर बिठाया। उसने कहा, "आओ, बैठो।"

वह भय, संकोच छोड़कर उसके पास बैठ गयी। उसकी उंगली पकड़कर उसने पूछा, "क्या तुम्हें घर याद आ रहा है ?"

"नहीं, याद नहीं आ रहा।"

"तुमको मुझ से डर लग रहा है क्या ?"

"नहीं।"

किंतु बासंती सारे शरीर से थरथर कांप रही है। आवाज जैसे गले में अटक रही है। उसने उसको जैसे इंद्रजाल में फंसा दिया है। उसका घूंघट हटा कर वह उसके मुंह की ओर मंत्र-मुग्ध होकर देख रहा है। उस दृष्टि में लालसा से प्यार का प्राचुर्य ज्यादा है।

"तुम्हें घर में भी इसी नाम से बुलाते हैं क्या ?" मथुरा बुद्धिमान आदमी है। उसने एक प्रश्न खोज ही लिया।

"हां, मुझे घर में बुलाने का अलग नाम नहीं है।"

"यह नाम किसने रखा था ?"

"मौसी ने।"

"पर मेरे तो दो नाम हैं।"

"क्या-क्या ?"

"गांव में मथुरा। बाहर में मनधन मंडल। सरकार के घर में भी मनधन नाम ही है। मुझे भी यही नाम अच्छा लगता है। मथुरा तो एक जगह का ही नाम है, पर देने वालों ने यही नाम इंसानों को भी लगा दिया।" अपने ही मजाक से वह हो, हो, कर हंस दिये।

"मैं यदि धन बुलाऊं ?"

"बुरा नहीं लगेगा। यही नहीं, बड़ा अच्छा लगेगा।"

वह बड़े प्यार से उसके मुंह पर हाथ फेरने लगा। उसने संकोच से मुंह हटाया नहीं।

"तुम बहुत सुंदर हो, नहीं-नहीं, बहुत ही ज्यादा सुंदर हो !"

"सच !"

"हमारी शादी जैसी सही घटना, ठीक वैसा ही सच। नहीं, गलती हो गयी। सुंदर होना इस घटना में नहीं आता। हां, मैं जो कह रहा हूं, यानी तुम सुंदर— यह चांद-सूरज जैसा सच।"

"यह सब वकीलों जैसी बातें तो काटी नहीं जा सकतीं।"

"इसी के बूते तो कुछ कमा खा रहा हूं। मंडल को क्या काम, उलझने सुलझानीं पड़ती हैं ? मुंह भारी होने से हमारा लोटा उलट जायेगा।"

"यह कैसी बात है।"

"मैं लंबा-चौड़ा आदमी 'डफला' (नेफा के आदिवासी) की तरह नहीं हूं क्या ?"

"बाबुओं जैसा चेहरा। सभा की शोभा बढ़ाने वाला।"

"नहीं-नहीं, मैं तो छत के कुम्हडा जैसा, ऊपर नीचे समान हूं।"

"यह किसने बताया ?"

"मैं खुद ही कह रहा हूं।"

"तुम्हारे कहने से ही होगा क्या ?"

"इस तरह न कहने से, तुम्हें हंसाने के लिए मुझे और कोई बात नहीं सूझ रही।"

"तो भी क्या, अपने को बुरा कहना चाहिए ?"

"मजा आता है।"

उन लोगों का हंसी-मजाक खत्म होने को आया। मथुरा के दोनों हाथ उसके

मुंह से नीचेकी ओर फिसलने लगे। रात कीनीरवता ने बासंती को मथुरा के पास खींच लिया। उसको पहले बड़ा अजीब लगा। शरीर में रक्त का स्रोत उच्छल वेग से बहने से भी आत्म-समर्पण करना बड़ा कठिन-सा लगा। जैसे एक बहुत बड़ा व्यक्तिक्रम। किंतु उसका तो अधिकार है। और अपना भी।

उसने अपना मुंह ढक लिया। उंगलियों के पोर में से देखा कि पास ही तख्त पर दो गिलास दूध रखा है। सास के निर्देश अनुसार पारुल ने रख दिया था। तो क्या इस रात दोनों को एक-एक गिलास दूध पीना पड़ेगा? शायद इस रात की नयी तरह की थकान और मधुर अवसाद दूर करने के लिए ही इस तरह से सबको ही दूध पीना पड़ता होगा? दिल की गोपन लालसा और इस लजीली रात में आकांक्षा को नैतिक सम्मति मिलती है। यह भी चांद-सूरज जैसा ही सच है।

वह हांफते-हांफते बोली, "धन लैंप को···।"

मुंह के पास मुंह लाकर, उसने पूछा, "लैंप को क्या?"

शर्म छोड़कर उसने कहा, "शर्म आती है। लैंप यदि ···।"

उसने लैंप बुझा दिया। सिर्फ खिड़की से आती हुई चांदनी की धीमी-धीमी रोशनी ही कमरे का अंधेरा कुछ कम कर रही है। इस अंधकार ने पहली भेंट का लाज-संकोच सब दूर कर दिया। नयी अनुभूति का स्वाद लेनेवाले दो प्राणियों के शुद्ध मन के थोड़ी देर पहले के आचरण को वासना की प्रचंडता ने वशीभूत कर दिया। एक देह दूसरी देह के समीप तेज गति से बढ़ती गयी। तृप्ति रूपा दो देह के एक रूपांतर ने रात्रि की नीरवता और अंधकार को ज्यादा गोपन और मोहक कर डाला। चांदनी रंगीली हो गयी। दो बदन एक होने की, पुरुष प्रकृति के सृष्टि के इंद्रजाल तरंग का, एक छंद, एक राग, देह में देह विलीन होने की सनातन उग्र कामना···।

पंद्रह

बासंती ने सारा घर आनंद-मुखर कर दिया। पुतली और पारुल तो भाभी का साथ छोड़ती ही नहीं। बहू से आदर-सत्कार पा कर भनिता और भागीरथ प्रशंसा से पंचमुख। शादी के पहले मथुरा रात काफी देर गांव में ताश खेलता

फिरता था। आजकल वह सांझ पड़े ही घर लौट आता है। 'आठ-मंगला' (वर भात) के बाद एक दिन मथुरा बासंती को ननदों के साथ शहर में सिनेमा दिखाकर लाया। वह दोनों ब्याह के पहले माह खूब घूमे। वेबेजिया वाली मौसी के घर नयी बहू का पदार्पण कराया। उसके बाद मागुरा गांव, रुपहि, भालुक-मारी, कपोहरा और रहा भी गये। रहा में एक सर्कस पार्टी आयी थी। बासंती का कपाल अच्छा। उसको सर्कस भी दिखायी गयी। मथुरा को बड़ा घमंड। अपनी औरत के रूप की प्रशंसा कितनों के मुंह से सुनी है। उसके साथ के हसन मंडल की मां ने भी कहा था, "देख कर दिल खुश हो गया रे, मनधन। तुम दोनों को देख कर ऐसा लगता है, जैसे सोनाई पार में चकवा-चकवी पक्षी की एक जोड़ी ही चर रही है।"

बासंती की मां शादी के बाद आयी थी। घर देख कर बूढ़ी को संतोष हुआ। तरुलता भी साथ आयी थी। उसने इशारे में बासंती के साथ छेड़-छाड़ की। भोगराम शहर जाते हुए एक चक्कर रोज लगाता है। बासंती का मन बड़ा खुश है। सुख चारों ओर से उमड़ रहा है। पर सिर्फ एक बात के लिए उसका मन बैठ जाता है। एक दिन भाभी से सुना कि भोगराम पहले का अवैध संपर्क त्याग नहीं पाया है। आजकल सुजला भी यह बात जान गयी है। इसी दुख में बूढ़ी की बीमारी बढ़ती जा रही है। खांसी छोड़ती ही नहीं। भोगराम शहर से डाक्टरी दवा ला देता है। बूढ़ी उस के प्रति क्रोध होने की वजह से दवा को छूती भी नहीं। कहती है, "तुम लोग मेरी इतनी चिंता क्यों करते हो? मरने के दिन आ जाने से दवा क्या काम करेगी। भोगराम की लायी हुई दवा खाऊंगी ही नहीं। घर में पाप घुसा है तरु! प्रभु मुझे इतने में ही पार कर दे तो अच्छा है।

ईश्वर पर विश्वास रखने वाले बूढ़ा-बूढ़ी यदि मरने की सोचते हैं और इच्छा भी करते हैं, तो उसी तरह चले भी जाते हैं। ऐसे कई दृष्टांत बासंती ने देखे भी हैं। उसने सोचा, उसके दरगियाल में रहते समय मां को पानी का एक घूंट दिये बगैर, अगर मां मर जाये, तो उसे बहुत दिनों तक शांति नहीं मिलेगी। एक दिन रोते-रोते जब उसने मथुरा को यह बात कही तो उसने जवाब दिया, "यह सब सोच कर मन क्यों दुखी करती हो। भाग्य में रहने से अपने मन के मुताबिक ही काम होगा। मां के लिए जब भक्ति है तो असली समय मां को पाओगी ही। उसको सांत्वना मिली।

अनुशासन तो इंसान को थोड़े से पानी में जिंदा मछली की तरह बना देता है। अच्छी तरह से सोच-समझ ले बासंती, प्रीत नियम नहीं मानती, और प्रीत से दिल को ठंडक पहुंचाने के लिए, बगैर नियम का काम करना ही पड़ता है। यह वट वृक्ष जैसी बहुत बड़ी चीज है। छोटी-मोटी बदनामी इसे हिला नहीं सकती। छोटी-मोटी आंधी, वटवृक्ष के पत्ते ही हिला पाती है। पत्ते हिलने से वह वृक्ष जैसे 'पेपा मगना' बजाता है।

रुपुक बूढ़ी की मनहरण रसीली बातें सुनकर, बासंती की प्रेम भरी आंखें 'उजान' मछली की तरह छलांगें भरने लगीं। वह भरी वर्षा में सोनाई स्रोत की तरह, अकस्मात छंदमई और गति चंचला हो उठी। बूढ़ी के सामने अवश्य लज्जा-भाव दिखाकर, दोनों हथेलियों से मुंह ढक लिया। 'जाऊंगी' इस शब्द को धीमे से कहकर, एक बड़े काम के लिए प्रस्तुत होने की सम्मति बतायी। बूढ़ी को उस पर बहुत ममता हुई। नजदीक आकर बिखरे बालों को ठीक करते हुए कहा, "इतवार को भाभी के लिए जब ताबीज देने को आऊंगी, तब बताऊंगी। उसी दिन रात, पहले मुर्गे की पहली बांग देने के समय, तुझे ठनुआ घाट पहुंचना होगा। वह और घोघुना घाट वाला नौका लेकर तुम्हारा इंतजार करेंगे। शेष रात्रि चांदनी होगी। इतना थोड़ा-सा रास्ता चलने में तुझे तकलीफ नहीं होगी। चिट्ठी में यह सब कुछ लिखा है।"

बासंती ने कहा, "तू फिर ताबीज देने को शनिचर को ही आना। इतवार को आने से, इन लोगों को संदेह हो सकता है।"

"अच्छा तू कहती है, तो ताबीज शनिचर को ही, ले आऊंगी। पर जिसने सगाई की अंगूठी पहन रखी हो, ऐसी लड़की पर अक्सर घर वाले शंका नहीं करते। किंतु एक बात। तुझे अच्छी तरह मन पक्का करना होगा। समझी बासंती, जंगल साफ कर खेती के लिए जमीन तैयार करना और लड़की का घर छोड़कर किसी के साथ भाग जाना, दोनों के लिए मन कड़ा करना पड़ता है। यह सब कच्चे मन का काम नहीं है।"

मेरा मन किसी एक के लिए ही नर्म है, यह बात कहने का बासंती का मन था। पर शर्म की वजह से कह नहीं पायी। उद्देश्य सफल हो गया समझकर रुपुक बूढ़ी तरुलता को आवाज लगाकर चली आयी।

तरुलता बाल-बच्चों को लेकर बिस्तर पर लेट गयी। बासंती एक तांबूल

कूटकर मां को देने के बाद घड़ा लेकर घाट पर पहुंच गयी। सोनाई के उस पार 'बाऊ धान' के बीच एक-दो नौका चलने का अनुमान लगाया जा सकता है। इस पार दलंग घाट में भी दो 'मार' नौका (बड़ी नौका) खड़ी हैं। ठनुआ घाट बिल्कुल निर्जन। मध्य रात में चांद जैसे सूरज की तरह रोशनी दे रहा है। उसने धीरे से ब्लाउज के अंदर से चिट्ठी निकालकर उसे ठीक किया। अक्षर देख उसे ख्याल आया जैसे यह अक्षर नहीं हैं। जैसे धनंजय स्वयं बात ही कर रहा हो !

वह धीरे-धीरे पढ़ती गयी :

प्यारी बासंती,

मैं जानता हूं, तुम यह सपने में भी नहीं सोच सकती हो कि घर के शासन में आकर, तुमने अंगूठी पहनने पर अपने को राजी कर लिया, इसीलिए मैं तुमको गलत समझकर तुमसे दूर होता जा रहा हूं। मुझे तुम पर पूरा यकीन है। मैं बहुत आतुर हो गया हूं। बहुत सोच-समझकर देखा। आखिर में सोनाई पार में प्रचलित, पर शायद तुम जैसे बड़े घरवालों के साथ न मेल खानेवाला, यह सहज उपाय ही चुन लिया। दूसरे के मतामत की परवाह करके चलने से, अपनी प्राण इच्छा को झुठलाना पड़ेगा। पर अब तो समय भी नहीं है। इसलिए तुम्हारे घर-परिवार में न घटने वाला काम ही करना पड़ेगा। आखिरी रात, जब चांद निक-लेगा। इतवार की रात घोगोना घटवई के साथ तुम लोगों के घाट पर नौका लेकर इंतजार करूंगा। तुम मुर्गे की पहली बांग सुनते ही निकल आना। अवश्य, आधा घंटा जल्दी या देर होने से कोई बात नहीं। मैं जानता हूं पैदाइशी घर, बूढ़ी मां और दूसरों को छोड़ना तुम्हारे लिए कठिन होगा। पर क्या मैं तुम्हारे लिए पराया हूं। अच्छा, और नहीं लिखूंगा। रुपुक बूढ़ी ने शायद बताया होगा। बूढ़ी के सामने तुम वचन दे दोगी यह मैं जानता हूं।

आखिर में बहुत-सा प्यार से, और प्यारा···। तुम सोच-समझकर खाली स्थान भरकर पढ़ लेना।

इति···

तुम्हारा ही
धनंजय।'

चिट्ठी पढ़कर बासंती का मन बेचैन हो गया। आसपास में, 'बाली-माहि' सखीमती और गंगा 'चिलिनि' (जैसे चिड़िया) की आवाजों में नया सुर सुना।

स्वर-स्रोता सोनाई की कलकल आवाज, उसके मन में भी प्रतिबिंबित हुई। दूर के बाऊ धान और दलदल के हरेपन में उसके अपने मन का हरियाला भाव मिल गया। सोनाई की हरियाली पट भूमि में, सोनाई की गोद में वह अपने को ही देख पायी। सोनाई से जैसे गलता हुआ सोना और रूपा ही बहता जा रहा है। उसकी सांस तेज चलने लगी। पढ़ने के बाद चिट्ठी फाड़ने के लिए रुपुक ने बार-बार कहा था। पर वह धनंजय की चिट्ठी फाड़ नहीं सकी। धनंजय का यही पहला पत्र। शायद यही आखिरी। उसके साथ रहने से चिट्ठी की जरूरत कहां। उसके साथ जाने के बाद भी, वह यह पत्र बहुत प्यार और गोपन में रखेगी। जब गृहणी बनकर दो-तीन बच्चों की मां बनने के बाद भी—उसका यौवन विदा लेने के आखिरी समय भी—हिफाजत से रखी यह चिट्ठी, उसे दिखाकर कहेगी, "देखो, तुमने कैसी सोने-सी प्यारी चिट्ठी लिखी थी। मैंने तुम्हारा मन कैसे लूट लिया था।" शायद तब उनके दिल में ज्यादा प्यार उमड़ आयेगा। तब वह पिता का गांभीर्य और स्वामी के दायित्व से कहेंगे, "पगली कहीं की ! मालूम पड़ता है तुम दिन-पर-दिन लड़की होती जा रही हो।" ऐसा कहकर, वह शायद दिल खोलकर हंसेंगे।

वह घड़े में पानी भरकर वापस आयी। तकिये की सिलाई खोलकर रुई के बीच में चिट्ठी रख दी और पहले की तरह सिलाई कर दी। किसी को पता नहीं चला। कुछ ही घंटों में अपना घर दूसरे के घर जैसा लगने लगा।

बासंती इतवार की दोपहर में, मां के साथ बड़े प्यार के साथ बातचीत करती रही। भाभी को कुछ पता न चले इसलिए उससे अलग-अलग ही रही। यह दिन किसी तरह बीत जाये, इसी इंतजार में रही। भाई भोगराम आज सारा दिन गायब, रात को ही लौट सकते हैं। यह आदमी खराब हो गये हैं। पैसा मिल जाने के बाद से जिस घर में जवान लड़की हो, उसी घर में वह चाय तांबूल चखने लगे हैं। ढलपुरिया के किसी की छोड़ी हुई औरत के साथ उनका बुरा संबंध हुआ है। शौक मिटाने के लिए वह उसको काफी पैसे भी देते हैं। यह बात बहुतों को मालूम है। तरुलता भी जानती है। आजकल तरूलता का मन दुखी है। बाल-बच्चों का मुंह देखकर ही सांत्वना मिल रही है। बासंती को लगा, उसके चले जाने से तरुलता बड़ी अकेली हो जायेगी। मन की बात कहकर दुख लाघव करने के लिए कोई दूसरा प्राणी नहीं मिलेगा। बासंती शाम को खाना नहीं खा सकी। उसको बहुत-सी चिंताएं हैं। यदि पकड़ी जाये। दिन में ही उसने एक पोटली घर

के कोने में सबकी नजर से छिपाकर रख दी थी। उसी में धनंजय की चिट्ठी भी है। अवश्य उसने तकिये के अंदर सोने के जेवर भी रखे हैं। क्योंकि घर में रहते हुए, गहने पहने नहीं जा सकते, सब की नजर पड़ेगी। इसके अलावा गहने की जोड़ी साथ न ले जाने से, धनंजय जल्दी बनवाकर दे सकेगा क्या? उसके पास जाने कितने रुपये हैं, बासंती को मालूम नहीं। शायद उसके पास पैसा होगा। कल रुपुक बूढ़ी ने बताया था कि वह अपने घर में दो कमरे बढ़वा रहा है। ओफ, कैसी उसकी ख्वाइश। उसे राजरानी बनाकर ही रखेगा!

खाने के समय भोगराम प्रायः ही घर में नहीं रहता। घर के सब लोग जब सोने के लिए जाते हैं, तब वह दरवाजा खटखटाता है। आज भी वह करीब रात के दस बजे लौटा। उसकी आवाज सुनते ही बासंती को आज गुस्सा आ गया। उसने सोचा यही सब कष्टों की जड़ हैं। जो आदमी धनंजय को साधारण आदमी समझकर, उससे घृणा करता है, उस आदमी को उसे भी बुरा समझना चाहिए। उससे नफरत करनी चाहिए। उसे भाई के प्रति प्रतिशोध का भाव हुआ। धनंजय के साथ भाग जाने की इच्छा और प्रबल हो गयी। पैदाइशी घर की माया छोड़ने के लिए मन दृढ़ हो गया। इस तरह से उसको एक सबक मिलेगा और समझेंगे कि जवा। लड़की का भी अपना मन होता है। उसकी भी एक अपनी निजी इच्छा होती है और वह भी परिवार की चलित नीति को त्यागकर खुद सुखी हो सकती है।

रात शुरू होते ही बादल देखकर उसका मन भी गीला हो गया। धनंजय नाव लेकर नहीं आयेगा क्या? जरूर आयेगा। शेष रात इसी तरह का मौसम रहने से अंधेरा गहरा नहीं होगा, रास्ता पहचाना जायेगा और ज्यादा चांदनी होने से भी बुरा ही होगा।

भाई भोगराम गहरी नींद में। तरुलता भी सो गयी होगी, क्योंकि कमरे में बत्ती बुझ गयी है। बासंती मां के पास सोयी है, पर मां को जल्दी नींद नहीं आती। बहुत देर तक एक पद गुनगुनाती रहती है—"मोपे कृपा करा हरि ए, दांते धरो तृण; माथे धरो तृण, तुम्हीं कृपामयक ना जानू एतो दिन।" मां को नींद आने तक, आधी रात बीत गयी। बासंती ने दरवाजे में कुंडी नहीं लगायी। किंतु थोड़ी देर बाद बाहर जाने की जरूरत दिखाकर, कमरे में आते समय दरवाजा भीड़ दिया। आवाज हुई पर कुंडी नहीं लगायी।

आज मुर्गा पहली बांग नहीं लगायेगा क्या ? क्यों नहीं ? वह नासमझ है इसलिए ऐसा सोच रही है। प्रकृति के नियम में लंघन नहीं होता। 'मुर्गी', 'डाउक' 'सखियति', 'बाली-माही' आदि चिड़ियां और गिलहरी भी प्रकृति के साथी हैं। यह भी चांद-सूरज और नारी की तरह ही सब अपने-अपने समय से काम करते हैं। आज भी उधर तोलन कछारी के घर की मुर्गी बांग देगी—'लक्का कु-ऊ, ऊ, कु, ऊ, ऊ···।'

गोहाली में एक बछड़ा 'हम्रे-हम्रे' कर रहा है। यह भी रात्रि शेष होने के ही लक्षण हैं क्या ? कजलो गाय का चार महीने का बछड़ा कितना प्यारा है। वह आंगन में खड़ी रहे, तो बछड़ा दौड़कर आता है और उसके कपड़ों में मुंह डालकर सूंघता है। हथेली चाटता है। पाभचिला जाकर घरवालों की याद तो आयेगी ही, इस मासूम बछड़े की भी याद आयेगी। पर कोई उपाय नहीं, माया और प्रीत दोनों अलग-अलग चीज हैं क्या ? इस बड़े प्रश्न ने बासंती को ज्यादा अस्थिर कर दिया।

यह सब सोचने से काम नहीं बनेगा। अपना मन स्थिर करने का समय आ गया है। यह सुनो आवाज। तो प्राणी-जगत जाग उठा है। मुर्गे ने अभी बांग नहीं दी है तो भी रात खत्म होने को आ गयी है। बासंती रास्ते पर गाड़ी के चक्के पत्थर पर लगने की आवाज सुन रही है। तो 'सोंदर पाम' के लोग गाड़ी लेकर शहर की ओर चल पड़े हैं। निश्चय ही आधी रात हो गयी है, क्योंकि यह लोग तारे देखकर, रात कितनी बीती है स्थिर करते हैं। उसने ऐसी दो चिड़ियों की आवाज सुनी जिनके नाम वह नहीं जानती है। नीलू के घर के कुत्ते भी भौंक रहे हैं। दोना-मुखी जंगल की ओर से 'फेउ' की आवाज उसके कानों में पड़ी। वह चौंक उठी। एक अनजान आशंका ने उसे विवृत्त कर डाला। सच है किसी के साथ भागने के लिए साहस चाहिए, मनोबल चाहिए, कुछ निठुर भी होना चाहिए।

मां, बड़े भाई, भाभी और छोटे-छोटे भतीजों के लिए, इस समय उसे बहुत प्यार आ रहा है। यहां हरेक के लिए अपनापन लग रहा है। उनका उसके साथ खून का रिश्ता है। उनके प्रति लगाव भी अलग तरह का है। यह लोग इस उम्र में भी इस प्रीत का मोल नहीं समझ सकते। उसकी भलाई हो जाये, तो इन लोगों को आनंद नहीं होगा क्या ? भाई भोगराम को वह अच्छी नहीं लगती क्या ? भाभी उसे दूसरे ही कारण से बुरा समझती है। भाई की गर्मागर्म बातें सुनकर,

मां भी कहती है, "रुपये ने उसका दिमाग खराब कर दिया है, वह सिर्फ उल्टा नाच नाच रहा है।" तो भी वह अपने भाई को कैसे बुरा कह सकती है ? उसके बगैर बाप मरने के बाद सारा घर उजड़ जाता। अब की तरह जरी का काम किया हुआ मेखला, वायल की चादर ओढ़ना छोड़कर दूसरे के घर में काम भी करना पड़ता धन किसे नहीं चाहिए। सोनाईपरिया लोग यूं ही नहीं कहते, 'मछली देखने से बगुला काणा, धन देखने से पुरुष काणा'। जो धन कमा नहीं सकते, वही 'धन-दौलत' सब असार कहकर, अपना पांडित्य दिखाते हैं। कल सुबह तरुलता भाभी उसे न देखकर एकदम टूट पड़ेगी, चीख-चीखकर रोयेगी। रोने-धोने के बाद दिल में प्यार रखते हुए भी वह बासंती को गाली देगी। शायद कहेगी, "जवान लड़की और 'घटिया-सिघरा' मछली एक ही बराबर।" पर तरु-लता इतनी अच्छी है। यौवन-काल में तरुलता ही उसके दुख की साथी थी। तरुलता बासंती के गुण गाकर दूसरों के सामने कितना गर्व करती है।

और यह मां ! लकड़ी की तरह पड़ी है। यह मां कितनी महत्। दस महीने दस दिन उसे गर्भ में रखकर और बचपन में उसका लालन-पालन करने के लिए कितने कष्ट भोगे होंगे। जाने उसे केंद्र करके कितने स्वप्न देख रही है ! जवान लड़की को देख-देखकर जाने उसने कितनी ही बार अपनी जवानी की तस्वीर देखी होगी और शायद कितने ही मधुर स्मरण उसके मन में फूल जैसे गुंथ रहे हों !

हिश ! वक्त पर उसका मन बड़ा कोमल हो रहा है। घर-पवित्र 'सत्र' (असम के वैष्णवों के धर्म क्षेत्र) जैसा लग रहा है। घर के सब बहुत प्यारे लग रहे हैं। उन लोगों के लिए प्यार-मुहब्बत उमड़ी आ रही है। जन्म लिया घर रात की निस्तब्धता में मुखर हो गया है। वह सात चक्र में बंध गयी है।

हठात वह सिर से पैर तक कांपने लगी। तोलन कछारी के घर से मुर्गे की बांग आने लगी। पहले मुर्गे की बांग 'लंक कु-उ-उ, कु-उ-उ, कु-उ-उ। लकीं कु-ऊ, कू-ऊ'। समस आ ही गया। मुझे इसी मुहूर्त में मन स्थिर करना पड़ेगा। रुपुक बूढ़ी की बातें मानो कानों में गूंजने लगीं, "मन कठोरता से बांधना चाहिए। यह सब कमजोर मन के काम नहीं हैं।" ख्याल आया, धनंजय ने भी चिट्ठी में ऐसा एक इंगित किया है, "मैं जानता हूं, अपना घर छोड़ना, मां और दूसरों को छोड़ना, तुम्हारे लिए कठिन होगा। किंतु क्या मैं पराया हूं ?"

पत्र की इन कई बातों ने निमिष में उसे मनोबल दिया। बायें बगल में पोटली दबाकर, दूसरे हाथ से सोती हुई मां के पैर छूकर प्रणाम किया। होंठ हिलाकर बगैर शब्द किये बोली, "बोउ" (असम में मां को बोउ कहते हैं) तू मुझे क्षमा करना। सिर्फ एक ही साल तो दुख सहना पड़ेगा। बाद में जब गोद में बच्चा लेकर आऊंगी तो लड़की-दामाद को देखकर, तेरे मन में हर्ष नहीं होगा क्या ?"

चुपचाप पैरों के बल कमरे से निकल आयी। दरवाजे के दोनों पाट धीरे-से भेड़ दिये। पेड़ के पत्ते हिलने जैसी आवाज भी नहीं होने दी। पोटली फर्श पर रखकर, घुटने टेककर जन्म ली हुई मिट्टी को प्रणाम किया। थोड़ी-सी मिट्टी लेकर सिर में लगायी और फिर मन में कहा, "हे घर की लक्ष्मी, तू मुझे आशीर्वाद देना। अपराध क्षमा करना।"

तुलसी का पत्ता तोड़कर सूंघा और दो पत्ते पहने हुए ब्लाउज में रख लिये। एक नजर ऊपर की ओर देखा। आकाश में जहां चांद निकला है वहां जरा भी बादल नहीं है। जैसे चांद उसको नंगा करके देख रहा है।

घर के पीछे के बागान की तरफ ठनुआ घाट, वह उसी तरफ कदम आगे बढ़ाती चलती गयी। उत्तर और दक्षिण की दो अलग-अलग शक्तियां उसे परस्पर दो विपरीत दिशा में खींचने लगीं। फिर भी उसका शरीर धीरे-धीरे घाट की ओर चलता गया। चांदनी में दिखायी दे रहा है 'काकिनी' (पतला लंबा एक तरह का सुपारी का पेड़) तांबूल पेड़ के गुच्छे में गिलहरी ठोंगे मार रही है। टिड्डी अपने बारीक पंख से अनानास के पत्ते पर सुरीले शब्द निकाल रही है। काठफोड़ा चिड़िया ने काठ पर अपनी चोंच की आवाज बंद कर दी। शायद उसी को देख रही है। दलंग घाट से 'बरगीत' (असम का अन्यतम भक्ति संगीत) का स्वर बहता आ रहा है। शायद भक्ति में गद्गद् हो कोई नाव वाला गा रहा है—"बहुरि गौरी गोपाल प्राण नेहारि फुकाय इबा नयने जुरे नीर, वयने पुरित बारि।" घाट तक पहुंचने के लिए कुल दो ही 'नल' (दूरी का नाप) बाकी। 'मोकाल' बांस के पेड़ घाट को ढांक रहे हैं। काले जामुन के दोनों पेड़ों के बीच से चांदनी आकर उसके बदन पर पड़ रही है। उसके पैर जैसे घाट की ओर बढ़ ही नहीं रहे। दोनों गालों पर आंसू बह रहे हैं। सांस तेजी से चल रही है। चांदनी जैसे उसका बदन चाट रही है। वह कई कदम आगे बढ़ी। 'मोकाल' का बांस वाला मोड़ पार किया। सोनाई दिखायी देने लगी। दूसरा अंश अजार पेड़ की छाया से ढक गया।

एक नौका के ऊपर सफेद कपड़े पहने एक मूर्ति पर नजर पड़ी। निश्चय यही धनंजय है। दूसरे आदमी पर नजर न पड़ने से भी उसकी पी हुई बीड़ी की आग दिखायी पड़ी। बीड़ी पीने वाला, यह आदमी होगा घोगना घटवाई।

हठात उसमें एक नयी चेतना जागृत हुई। हाथ की अंगूठी पर नजर पड़ी। वह अंगूठी को देखती रही। यही अंगूठी मथुरा की मां ने उसे पहनायी थी। इसी अंगूठी को पहनाकर मथुरा की मां ने उसे अपनी लड़की समझकर कहा था, "और दो दिन बाद, क्या हम तुम्हारे अपने नहीं हो जायेंगे ?" उसको अपनी बहू बनाने की उनकी कैसी आशा-अभिलाषा। अंगूठी का नग चांदनी में जगमगा रहा है, जैसे उससे अपरिचित मथुरा नाम के नौजवान की आशा-आकांक्षा झिलमिला रही है। आखिर कल उस अचिह्न आदमी का अपमान नहीं होगा ? भाई भोगराम तो कल से चार-पांच गांव में मुंह दिखाने लायक भी नहीं रहेंगे। और उसके भाग जाने के संताप से यदि मां मर जाये ? और कल यदि, "तुम्हारी ही चाल से ऐसा हो पाया," कहकर भाई भोगराम तरुलता पर प्रहार करने लगे।

वह लोग उसे नौका में देख न लें यह सोचकर वह कठहल के पेड़ की आड़ में पीठ टिकाकर खड़ी हो गयी। अंगूठी उतारकर फेंक देने के लिए सोचा, पर ऐसा कर नहीं पायी। ऐसा करने से पाप लगेगा। वह हिंदू घर की लड़की है। ईश्वर को साक्षी रखकर उसे अंगूठी पहनायी गयी है। उस दिन उसने तांबूल पान से सजाई बड़ी 'शराई' (पानदान) के सामने घुटने टेककर प्रणाम किया, सब तरह की चीजों को प्रणाम करने का अर्थ 'भगवान वस्तु' को प्रणाम करना। वह तो उसी दिन से धर्म के नियम अनुसार दूसरे घर की और किसी दूसरे की हो गयी। वह उस पुरुष को धोखा नहीं दे सकती है और अब तक धनंजय ने उसके शरीर को छुआ तक नहीं है। अभी भी वह पवित्र कुंवारी है।

थोड़ी ही देर में यह नैतिक चेतना प्रबल हो उठी। और वह किसी ओर देखे बगैर, दौड़कर घर की दीवार के पास पहुंच गयी। धीरे से दरवाजा खोलकर पोटली कोने में छिपा दी। दीवार के पास आकर जोर से किवाड़ बंद किया। मां शायद जाग गयी थी। लड़की 'बाहर' गयी थी समझकर एक बार भी आवाज नहीं दी। वह बिस्तर पर लेट गयी। सारा शरीर बुखार की तरह घामने लगा। कुछ ही देर बाद मुर्गे ने दूसरी बांग दी। उसको ख्याल आया वह लोग अब तक शायद नौका लेकर पाभचिला वापस पहुंच गये होंगे। धनंजय ने इतने अपमान के

बाद रास्ते में घोगना घटगई को उसके विरुद्ध कुछ नहीं कहा होगा। यह चिंता मन में आते ही, उसके दोनों होंठ हवा से पेड़ के पत्तों की तरह हिलने लगे। वह छोटे बच्चों की तरह फूट-फूटकर रो पड़ी। मां ने नींद खुलने से पूछा, "बासंती, तुझे क्या हुआ ?"

उसने रोते हुए कहा, "बोउ, तुम्हारे ही बारे में सोचकर दुखी हो रही हूं। मैं तुझे छोड़कर दूसरे के घर चले जाने से तुझे सब तरफ शून्य दिखायी देगा और मुझे भी मौत जैसा दुख होगा।"

मां ने दिलासा देकर कहा, "पगली लड़की, इस कारण इतना रोना चाहिए क्या ? मैंने सोचा, शायद तेरी तबीयत खराब है। कुंवारी लड़की का केवल मां का मन बहलाने से चलेगा क्या ? क्या तू इतनी-सी सामान्य बात भी समझ नहीं पायी ?"

चौदह

उसी दिन से बासंती को शादी करने में मन लगाना सहज हो गया। दिन सब नीरव बीत गये। शादी का दिन भी आ पहुंचा। तभी बासंती ने मथुरा के बारे में कौतूहल दिखाया। उसके बारे में पता लगाया। दूसरे के घर में किस तरह चलना होता है उस पर बीच-बीच में मां और भाभी उपदेश देती रहीं।

'जोड़न' (ब्याह के एक दिन पहले वर पक्ष के लोग कन्या को जेवर, कपड़ा पहनाते हैं) के दिन वर पक्ष के दिये हुए अलंकार और कपड़े पहनते हुए वह एक दूसरे संसार की सुख-चिंता करने लगी। अपना मन मथुरा-मुखी बनाने की कोशिश करने लगी। बहुत दिन पहले मां की कही हुई बातों को जीवन-सारथी मानने लगी। मां ने उसको एक दिन कहा था, "जो औरत असलीयत में अच्छी है, उसके साथ कोई भी आदमी सुखी संसार बसा सकता है। ···औरत किसी भी अवस्था में अपने को मिलाना जानने से ही सुखी हो सकती है।"

अक्सर होम अग्नि के पास आने के समय, कन्या को थोड़ा रोना आ ही जाता है। आसपास की औरतों की आंखें भी छलछला आती हैं। बासंती भी उस समय रोयी थी। तरुलता और मां सुजला की आंखों से आंसू की धारा बहने लगी थी।

पर बासंती वर के पास बैठते ही एक अलग लड़की जैसी हो गयी। उसकी चादर का आंचल मथुरा की चादर के साथ बांध दिया गया। मथुरा के साथ उसने अभिन्नता अनुभव की। पूत मंत्रों ने, मन को नये जीवन का संधान दिया। पवित्र कुशवन से उसकी एक उंगली मथुरा की एक उंगली से बांध दी गयी। वह अग्नि को साक्षी करके दांपत्य जीवन में बंध गयी। होम समाप्त हुआ। बासंती का कुंवारा काल अतीत में विलीन हो गया। उसकी मांग में सिंदूर और सिर पर आंचल हमेशा के लिए आ गया। वर के घर प्रवेश के समय, मां का दामाद को बहुत कुछ उपदेश देते हुए सुनकर बासंती कुछ चौंक-सी गयी। मां पहली बार मिले हुए आदमी से अपने लड़के की तरह ही बात कर रही है। वह भी अकपट भक्ति से सुजला के पैर छूकर प्रणाम कर रहे हैं। सुजला ने सिर पर हाथ रखकर अंतर से आशीर्वाद दिया। एक ही दिन के भीतर, दो घर के लोग प्यार की जंजीर से बंध गये।

होम अग्नि के पास बैठने के समय बासंती ने मथुरा की उपस्थिति महसूस की थी। छाती तक लटकता हुआ घूंघट न होने से भी वह औरों के सामने मथुरा की ओर देख नहीं सकती थी। मथुरा को देखने के लिए उसे बड़ी हवस हो रही थी। ख्याल आया, क्या मथुरा का मन भी उसको देखने के लिए उसी तरह बेचैन नहीं हो रहा है? घूंघट के बीच से उसको उसके हाथ-पैर ही नजर आ रहे थे। एक बार मुंह की थोड़ी-सी झलक दिखाई देने से भी उसके चेहरे का अनुमान नहीं कर पायी थी। पर अब घर के अंदर घूंघट छोटा होने के कारण उसे अच्छी तरह देखने का मौका मिला। जैसे पहले सुना था, मथुरा वैसा ही खूबसूरत, सभा की शोभा बढ़ाने वाला सुंदर व्यक्ति। मुख-मंडल पर पवित्रता और कौमार्य की प्रतिछवि है। प्रथम दर्शन में ही वह उसे अपना लगने लगा। लंबाई में करीब छह फीट। चुस्त बदन कार्यक्षम होगा यह बात सहज ही अनुमान की जा सकती है। 'शोवाल-कुचिआ' (कामरूप जिले का एक गांव जहां बढ़िया रेशम बनता है) पाट के पंजाबी कुर्ते के ऊपर के बटन खुले हैं, इसलिए थोड़ा-सा सुगठित सीना दिखायी दे रहा है। पंजाबी कुर्ते में से सीने के दो-एक बाल दिखायी देना और अच्छा लग रहा है। अकस्मात बासंती के मन में एक बात आयी। उसने सोचा, मथुरा जरूर कोमल मन का, दूसरोंकोप्यार करनेवाला इंसान होगा। उसने कहीं सुना था, छाती पर बाल होने वाले पुरुष ऐसे ही होते हैं। छाती शायद खाल

होगी। यह अच्छे लक्षण हैं। 'ऊंचा कपाल छाती खाल, उस पुरुष के लक्षण 'भाल' (अच्छे)'।

वर के साथ विदा होने के पहले बासंती के इज्जत के साथ बड़े भाई को प्रणाम करते समय जमीन पर आंसू टपाटप गिरने लगे। यह आंसू दुख के नहीं। भाई के प्रति अशेष कृतज्ञता से, घर छोड़ने के समय उसका मन उदास हो गया। वह बहुत देर के बाद ही सोच सकी कि मिट्टी का मानुस सर्वदा अच्छे-बुरे का समष्टि, भला-बुरा लेकर ही हमारी पृथ्वी बनी है। तथापि पृथ्वी रूपवती, मोहमय और चिर-नूतन।

बहुतों को रुला कर और खुद रो-धोकर, वह पालकी में वर के बायें तरफ बैठी। बासंती नये जीवन में दरगियाल गांव की तरफ आगे बढ़ती गयी। तेज घोड़ों से खींची हुई पालकीसे उसने अपने गांव की ओर देखा। गांव उसकी आंखों से दूर होता गया। पर तरुलता, मां, बड़े भाई और भतीजों के लिए दिल दुखता रहा। मां और तरुलता सजल नयनों से शायद अभी भी उसी की बात सोच रही होंगी ? बच्चे भी अभी सिसक रहे होंगे। बड़े भाई शायद किसी को कह रहे हों, आज से घर सूना हो गया। वह घर की शोभा बढ़ाने वाली लड़की थी।

पालकी के पीछे से आते हुए वर यात्रियों का आनंद कोलाहल उसके कान में पड़ने के बाद भी 'काली' (शहनाई जैसा वाद्य) के फैलते हुए स्वर ने उसके घर छोड़ने का दुख तीव्रतर कर दिया।

अचानक उसकी सिसकी मथुरा के कान में पड़ी। उसने उसकी पीठ पर हाथ रखा। उसे एक सिहरन का अनुभव हुआ। कभी न देखे हुए अनजान पुरुष ने उसके शरीर को हाथ लगाया, यह उसका वैद्य अधिकार। उसनेकहा, "रो नहीं। मुझे बुरा लगता है ना !" उसकी आवाज मीठी। बासंती का दिल शांत हो गया। हां, यह पुरुष प्यार दे सकेगा। अच्छा आदमी है। उसके इस तरह दिलासा न देनेसे उसका दिल सूना-सूना रहता। पुरुषके एक प्रबोध वचन से ही, हजार काम किये जा सकते हैं। 'भाउना' का एक वचन याद आया; राजकुमारी रुक्मणी को भी स्वयं भगवान कृष्ण ने प्रबोध दिया था। पीत वस्त्र से आंख-मुंह पोंछ कर कहना पड़ा था, 'कि करबों सिंघ को शूक्र सब आया। हमाकु शपथ ताप तेजो हूं जाया'।

मोरापुर के दो मील पूर्व में अवस्थित दरगियाल गांव में, बासंती पहले दो बार आयी थी। यह गांव भी मोरापुर जैसा ही है। केवल सोनाई यहां मुड़ गयी

है। मथुरा के घर के सामने ही सोनाई। कारण उनका घर उत्तर-मुखी है।

शादी के दूसरे ही दिन से बासंती को सास, ससुर और ननदों के साथ अपनापन लगने लगा। दोनों ननदें, पारुल और पुतली, काफी रंगीली लड़कियां हैं। 'खोबा-खुबुनी' के मैदान में तीन बकरे काट कर लोगों को खाना खिलाया गया। वर-वधू को केंद्र करके बहुत से लड़के-लड़कियों ने हंसी-मजाक किया। रात बहुत देर तक यह सब चलता रहा। बासंती को बहुत अच्छा लगा। गांव वालों ने उसे पसंद किया कोई कह रहा है, "लड़की के 'लक्षण' अच्छे हैं। देखने में भी देवी जैसी। भागीरथ चाचा, आपके लड़के का बड़ा कपाल।" कोई औरत सास से कह रही है, "लड़के-लड़की की जोड़ी अच्छी है। भनिता बाई, तेरी बहू अच्छी है। लंबे मुंह की हिरण जैसी लड़की जिस घर में आती है, उस घर के लोग चारों ओर से, जय-जय मय-मय हो जाते हैं। बासंती ने छिपकर यह अभिमत सुने और गर्व से फूली नहीं समायी। उसमें आत्म-विश्वास जाग उठा। सोचा, एक पुरुष को अपने रूप और प्यार से वश में करना सहज होगा।

आज की रात ही जीवन की सब रातों से विशेष महत्वपूर्ण। ऐसी ही एक रात सब को चिर दिन के लिए याद रहती है। बहुत तो ऐसी एक रात के लिए आशा और कल्पना से अपेक्षा करते हैं। ऐसी ही रात में जवान लड़के-लड़कियों की आशा, आकांक्षा और प्यार, वासना सामाजिक स्वीकृति प्राप्त करके नाच उठते हैं।

तीन कमरों वाले लंबे-चौड़े कमरे में इतनी खूबसूरती से बिस्तर किसने सजाया, बासंती को पता नहीं चला। कमरे में अगर चंदन की सुगंध ने उसके मन में संकोच भय और अनुराग का ज्वार उठाया। पुतली, पारुल और पड़ोस की एक बहू के आकर उसे कमरे में धकेल देने से, उसे मर जाने जैसी शर्म आयी थी। मथुरा को भी इसी तरह अप्रस्तुत होकर आ जाने से उसे कैसे लगेगा? चुपके से भी वह उसके मुंह की ओर नहीं देख सकेगी। उसको तरुलता की बात याद आयी। उसके जीवन में, और बहुतों के जीवन में भी ऐसा एक दिन आया होगा। ऐसे एक दिन की प्रतीक्षा में ही और ऐसे एक दिन की कल्पना में ही, कितनी लड़कियों की आंखों में, शायद लड़के देवता बन जाते हैं। उसने खिड़की से झांककर देखा। बाहर चांदनी। चांद की ज्योत्स्ना ने बाहर के जंगली पेड़-पौधों को भी रजनीगंधा का रूप दिया है। तीन-चार 'नल' दूरी में बहती हुई सोनाई, जैसे सोनाई नहीं है,

की चंद्रावली रात में यमुना ही—विकसित वृंदावन में प्राण यमुना। सच, अपना कुंवारापन खोने से पहले इस मुहूर्त में ऐसा सोचना ही भाता है। इसी तरह अपने को मना लेना बुद्धिमत्ता का काम होगा। धनंजय की बात उसके मन में आने से भी, वह स्मृति धुंधली-धुंधली अस्पष्ट, स्थितिहीन। वह समय के स्रोत में बहकर अनजान सीमांत में मिल जायेगी।

अचानक उसकी चिंता के स्रोत में बाधा पड़ी। शर्माता हुआ मथुरा कमरे में आया। दरवाजा भीड़ दिया। चिराग की बत्ती बढ़ा दी। थोड़ी देर ऐसे ही खड़ा रहा। एक बार बासंती की ओर देखा। पाट वाले पंजाबी कुर्ते की जेब से दो कागज और फाउंटेनपैन निकाल कर स्टूल पर रख दिया। एक बार अपने बालों में हाथ फिराया। फिर खिड़की के पर्दे से कमरे में आती हुई चांदनी को देखा।

तरुलता के कहने के अनुसार बासंती ने पानदान मथुरा के पैरों पर रखकर प्रणाम किया। उसने मुंह से कुछ न कह कर उसके सिर पर हाथ फिराया और बिस्तर पर बिठाया। उसने कहा, "आओ, बैठो।"

वह भय, संकोच छोड़कर उसके पास बैठ गयी। उसकी उंगली पकड़कर उसने पूछा, "क्या तुम्हें घर याद आ रहा है ?"

"नहीं, याद नहीं आ रहा।"

"तुमको मुझ से डर लग रहा है क्या ?"

"नहीं।"

किंतु बासंती सारे शरीर से थरथर कांप रही है। आवाज जैसे गले में अटक रही है। उसने उसको जैसे इंद्रजाल में फंसा दिया है। उसका घूंघट हटा कर वह उसके मुंह की ओर मंत्र-मुग्ध होकर देख रहा है। उस दृष्टि में लालसा से प्यार का प्राचुर्य ज्यादा है।

"तुम्हें घर में भी इसी नाम से बुलाते हैं क्या ?" मथुरा बुद्धिमान आदमी है। उसने एक प्रश्न खोज ही लिया।

"हां, मुझे घर में बुलाने का अलग नाम नहीं है।"

"यह नाम किसने रखा था ?"

"मौसी ने।"

"पर मेरे तो दो नाम हैं।"

"क्या-क्या ?"

"गांव में मथुरा। बाहर में मनधन मंडल। सरकार के घर में भी मनधन नाम ही है। मुझे भी यही नाम अच्छा लगता है। मथुरा तो एक जगह का ही नाम है, पर देने वालों ने यही नाम इंसानों को भी लगा दिया।" अपने ही मजाक से वह हो, हो, कर हंस दिये।

"मैं यदि धन बुलाऊं ?"

"बुरा नहीं लगेगा। यही नहीं, बड़ा अच्छा लगेगा।"

वह बड़े प्यार से उसके मुंह पर हाथ फेरने लगा। उसने संकोच से मुंह हटाया नहीं।

"तुम बहुत सुंदर हो, नहीं-नहीं, बहुत ही ज्यादा सुंदर हो !"

"सच !"

"हमारी शादी जैसी सही घटना, ठीक वैसा ही सच। नहीं, गलती हो गयी। सुंदर होना इस घटना में नहीं आता। हां, मैं जो कह रहा हूं, यानी तुम सुंदर— यह चांद-सूरज जैसा सच।"

"यह सब वकीलों जैसी बातें तो काटी नहीं जा सकतीं।"

"इसी के बूते तो कुछ कमा खा रहा हूं। मंडल को क्या काम, उलझने सुलझानीं पड़ती हैं ? मुंह भारी होने से हमारा लोटा उलट जायेगा।"

"यह कैसी बात है।"

"मैं लंबा-चौड़ा आदमी 'डफला' (नेफा के आदिवासी) की तरह नहीं हूं क्या ?"

"बाबुओं जैसा चेहरा। सभा की शोभा बढ़ाने वाला।"

"नहीं-नहीं, मैं तो छत के कुम्हड़ा जैसा, ऊपर नीचे समान हूं।"

"यह किसने बताया ?"

"मैं खुद ही कह रहा हूं।"

"तुम्हारे कहने से ही होगा क्या ?"

"इस तरह न कहने से, तुम्हें हंसाने के लिए मुझे और कोई बात नहीं सूझ रही।"

"तो भी क्या, अपने को बुरा कहना चाहिए ?"

"मजा आता है।"

उन लोगों का हंसी-मजाक खत्म होने को आया। मथुरा के दोनों हाथ उसके

मुंह से नीचे की ओर फिसलने लगे। रात की नीरवता ने बासंती को मथुरा के पास खींच लिया। उसको पहले बड़ा अजीब लगा। शरीर में रक्त का स्रोत उच्छल वेग से बहने से भी आत्म-समर्पण करना बड़ा कठिन-सा लगा। जैसे एक बहुत बड़ा व्यक्तिक्रम। किंतु उसका तो अधिकार है। और अपना भी।

उसने अपना मुंह ढक लिया। उंगलियों के पोर में से देखा कि पास ही तख्त पर दो गिलास दूध रखा है। सास के निर्देश अनुसार पारुल ने रख दिया था। तो क्या इस रात दोनों को एक-एक गिलास दूध पीना पड़ेगा? शायद इस रात की नयी तरह की थकान और मधुर अवसाद दूर करने के लिए ही इस तरह से सबको ही दूध पीना पड़ता होगा? दिल की गोपन लालसा और इस लजीली रात में आकांक्षा को नैतिक सम्मति मिलती है। यह भी चांद-सूरज जैसा ही सच है।

वह हांफते-हांफते बोली, "धन लैंप को···।"

मुंह के पास मुंह लाकर, उसने पूछा, "लैंप को क्या?"

शर्म छोड़कर उसने कहा, "शर्म आती है। लैंप यदि ···।"

उसने लैंप बुझा दिया। सिर्फ खिड़की से आती हुई चांदनी की धीमी-धीमी रोशनी ही कमरे का अंधेरा कुछ कम कर रही है। इस अंधकार ने पहली भेंट का लाज-संकोच सब दूर कर दिया। नयी अनुभूति का स्वाद लेनेवाले दो प्राणियों के शुद्ध मन के थोड़ी देर पहले के आचरण को वासना की प्रचंडता ने वशीभूत कर दिया। एक देह दूसरी देह के समीप तेज गति से बढ़ती गयी। तृप्ति रूपा दो देह के एक रूपांतर ने रात्रि की नीरवता और अंधकार को ज्यादा गोपन और मोहक कर डाला। चांदनी रंगीली हो गयी। दो बदन एक होने की, पुरुष प्रकृति के सृष्टि के इंद्रजाल तरंग का, एक छंद, एक राग, देह में देह विलीन होने की सनातन उग्र कामना···।

पंद्रह

बासंती ने सारा घर आनंद-मुखर कर दिया। पुतली और पारुल तो भाभी का साथ छोड़ती ही नहीं। बहू से आदर-सत्कार पा कर भनिता और भागीरथ प्रशंसा से पंचमुख। शादी के पहले मथुरा रात काफी देर गांव में ताश खेलता

फिरता था। आजकल वह सांझ पड़े ही घर लौट आता है। 'आठ-मंगला' (वर भात) के बाद एक दिन मथुरा बासंती को ननदों के साथ शहर में सिनेमा दिखाकर लाया। वह दोनों ब्याह के पहले माह खूब घूमे। वेबेजिया वाली मौसी के घर नयी बहू का पदार्पण कराया। उसके बाद मागुरा गांव, रुपहि, भालुकमारी, कपोहरा और रहा भी गये। रहा में एक सर्कस पार्टी आयी थी। बासंती का कपाल अच्छा। उसको सर्कस भी दिखायी गयी। मथुरा को बड़ा घमंड। अपनी औरत के रूप की प्रशंसा कितनों के मुंह से सुनी है। उसके साथ के हसन मंडल की मां ने भी कहा था, "देख कर दिल खुश हो गया रे, मनधन। तुम दोनों को देख कर ऐसा लगता है, जैसे सोनाई पार में चकवा-चकवी पक्षी की एक जोड़ी ही चर रही है।"

बासंती की मां शादी के बाद आयी थी। घर देख कर बूढ़ी को संतोष हुआ। तरुलता भी साथ आयी थी। उसने इशारे में बासंती के साथ छेड़-छाड़ की। भोगराम शहर जाते हुए एक चक्कर रोज लगाता है। बासंती का मन बड़ा खुश है। सुख चारों ओर से उमड़ रहा है। पर सिर्फ एक बात के लिए उसका मन बैठ जाता है। एक दिन भाभी से सुना कि भोगराम पहले का अवैध संपर्क त्याग नहीं पाया है। आजकल सुजला भी यह बात जान गयी है। इसी दुख में बूढ़ी की बीमारी बढ़ती जा रही है। खांसी छोड़ती ही नहीं। भोगराम शहर से डाक्टरी दवा ला देता है। बूढ़ी उस के प्रति क्रोध होने की वजह से दवा को छूती भी नहीं। कहती है, "तुम लोग मेरी इतनी चिंता क्यों करते हो ? मरने के दिन आ जाने से दवा क्या काम करेगी। भोगराम की लायी हुई दवा खाऊंगी ही नहीं। घर में पाप घुसा है तरु ! प्रभु मुझे इतने में ही पार कर दे तो अच्छा है।

ईश्वर पर विश्वास रखने वाले बूढ़ा-बूढ़ी यदि मरने की सोचते हैं और इच्छा भी करते हैं, तो उसी तरह चले भी जाते हैं। ऐसे कई दृष्टांत बासंती ने देखे भी हैं। उसने सोचा, उसके दरगियाल में रहते समय मां को पानी का एक घूंट दिये बगैर, अगर मां मर जाये, तो उसे बहुत दिनों तक शांति नहीं मिलेगी। एक दिन रोते-रोते जब उसने मथुरा को यह बात कही तो उसने जवाब दिया, "यह सब सोच कर मन क्यों दुखी करती हो। भाग्य में रहने से अपने मन के मुताबिक ही काम होगा। मां के लिए जब भक्ति है तो असली समय मां को पाओगी ही। उसको सांत्वना मिली।

पर शादी हुए अभी सिर्फ तीन ही महीने बीते हैं, इतने में ही बासंती के जीवन का चक्कर उल्टा हो गया । एक प्रचंड उल्टी हवा ने उसके जीवन के सारे सुख-स्वप्न मिट्टी में मिला दिये ।

कहते हैं, बात हवा की तरह फैलती है । मथुरा ने एक दिन गांव की अनाज की दुकान के सामने बहुत सारे लोगों को बड़ी व्यग्रता से किसी बात पर चर्चा करते हुए देखा । वह भी भीड़ के बीच जा खड़ा हुआ । उसकी उपस्थिति पर दूसरों ने ध्यान नहीं दिया । चर्चा चलती रही । बात यह है कि पिछले दिन रात में ढलपुरिया के लोगों ने भोगराम को पकड़ कर बांध दिया । पुलिस के डर से ही छोड़ दिया । आखिर में वह एक बड़े जाल में फंस ही गया । ढलपुरिया की किसी छोड़ी हुई पर एक बड़ी सुंदर विजात औरत के साथ भोगराम को वहां के आसपास के लोगों ने रंगे हाथों पकड़ लिया ।

एक धनी आदमी के चरित्र-दोष का समभेद पा कर लोगों को बोलने का अवसर मिला । बातूनी औरतों को जैसे बातों-ही-बातों में ज्यादा तांबूल खा कर, पीक थूक कर बातें करने का मौका मिला हो । जिस झुंड में मथुरा खड़ा था, वहीं उसी झुंड में उसने किसी को बोलते सुना, "हां वही धन नाम का चंडाल । दो पैसे कमा कर ही वह जमीन पर पैर रखना दुश्वार समझ रहा है । जिसके दिमाग में पाप घुसा हो, फिर रक्षा कहां । नये धनी के घर की लड़की का क्या भरोसा ? उसकी बहन, वह हमारा मथुरा जिसे ब्याह लाया है—वह भी क्या कम ? पाभचिला के दवादारु देकर फिरने वाले के साथ उसका भी काफी उल्टा-सीधा हुआ था । कहते हैं, वह रात में भाग जाने को भी तैयार थी।" यह सुन कर किसी ने पूछा, "दधी भाई, तुझे इस बात का अता-पता कहां से मिला ?" आदमी ने कहा, "सोनाई पार के नौकावार और पोहारी औरत जीते रहने से, बात की जानकारी के लिए क्या मर गांव (आहुम राजाओं की पुरानी राजधानी) के गुप्तचर चाहिए ?"

मथुरा को और बात सुनने का धैर्य न हुआ । किसी के देखने के पहले ही वह भीड़ से चला आया । घर आते ही उसने अजीब आचरण दिखाया । उसने बासंती को कठोरता से कहा, "सुन ली अपने बड़े भाई की कीर्ति ?"

"क्या हुआ ?"

"बड़े आदमी का बेटा ढलपुरिया में हाथों-हाथ पकड़ा गया । इतना तो नहीं

करना चाहिए था। औरतों का मेखला उसके सिर पर नहीं पहनाना चाहिए था।"

"साफ-साफ क्यों नहीं बताते।"

"तुम्हारे लंपट भाई को ढलपुरिया में बांध कर रखा था।"

बासंती समझ गयी थी। सोचने लगी, उसकी प्यारी भाभी की क्या हालत हुई होगी ! किंतु उससे भी ज्यादा दुख मथुरा के व्यवहार का। वह तो कभी ऐसे बात नहीं करते। आज तो बहुत-सी युक्ति दिखा कर, उसे दिलासा देना चाहिए ! भाई का अपयश कौन-सी बहन सहन कर सकती है ? अचानक मथुरा क्यों इतने निर्दय हो गये।

उस दिन के बाद से मथुरा अलग ही आदमी बन गया। धनंजय को वह जानता है। इसीलिए उसको इतना चुभ रहा है। दरगियाल के कलिया किरानी के घर के साथ उन लोगों का बहुत दिनों से मनोमालिन्य है। इसीलिए दो दिन बाद कलिया के लड़के धनकांत ने चंपक के घर 'बड़-सभा' में बुरे इंगित से बात करके मथुरा को बहुत अपदष्ट किया। दूसरे लोग भी धनकांत की तरफ से ही बोले।

बात धीरे-धीरे मथुरा के दिमाग में बैठ गयी। उसके बासंती को किसी तरह का इशारा न देते हुए भी, उसकी बातचीत और कार्य से बासंती अनजान विपद की आशंका करने लगी। आजकल वह शादी से पहले की तरह रात को देर से घर आता और बासंती की ओर पीठ करके सोता है। घर में जो थोड़ा-सा समय रहता, हमेशा ही वह कुछ-न-कुछ सोचता रहता। पुतली और पारुल के घर में शोर करने से वह यमदूत का आकार धारण कर लेता है। मंडल के काम में भी ढील। कपड़े पहनने में भी लापरवाह होता जा रहा है। पेंशन-प्राप्त अमला जैसे ढीले-ढाले कपड़े पहनने लगा है। बासंती के अनुरोध और आंतरिक इच्छा की अब वह परवाह नहीं करता। चांदनी जैसा कोमल मन कुछ ही दिनों में जेठ महीने की धूप जैसा उग्र हो गया। बात-बात पर गुस्सा करने लगा। बासंती यदि कहती है, "एक ही कमीज कितने दिन पहनते हो। कैसी ढीली-ढाली हो गयी है। इसे पहनिये।" तो वह पहनने को दी हुई उसकी कमीज फेंक कर कहेगा, "यूंही प्यार दिखाने से क्या फायदा। मैं कुछ भी नहीं पहनूंगा।"

"आजकल खाने पर बैठते ही आप उठ जाते हैं। दो ग्रास ज्यादा खाइये तो

ही बदन में ताकत आयेगी ।" बासंती ने एक दिन कहा।

"डाक्टरों की तरह उपदेश देने की जरूरत नहीं। तुम्हीं खा कर वीरांगना बन जाओ।" मथुरा ने जवाब दिया।

"दोपहर की धूप में आप कहां जाते हैं ? सारा दिन आपको देखना मिलता ही नहीं।" एक दिन बासंती ने कह कर देखा।

"तुम मेरे ऊपर क्या 'अख्तियार' जमाने आयी हो ! अब तुम्हारी अनुमति लेकर ही बाहर जाना पड़ेगा क्या ? हमारे यहां के पुरुष औरतों के कहने से चलने वाले नहीं हैं, समझ लो।" उसने जवाब दिया।

मथुरा की बात ही इतनी कर्कश, उस पर कहने का ढंग उसे और भयानक बना देता है। बासंती उसकी कर्कश बातें सुनते हुए और हजार चेष्टा करते हुए भी मथुरा को पहले जैसा नहीं बना पायी। एक दिन वह चीख कर रो पड़ी थी। कमरे के पास ही में पारुल और पुतली ने सुना था पर कुछ नहीं कहा। भागीरथ और भनिता ने सुन कर भी अनसुना-सा भाव दिखाया। कारण मियां-बीवी के झगड़े का आदि-अंत, हेतु-अहेतु नहीं है। भेद समझना भी कठिन काम। इसलिए ऐसे झगड़ों के बीच में पड़ना भी विपद। यह तो जानी-मानी बात है, कि पति-पत्नी के झगड़े निमिष में सुलझ जाते हैं। पर बासंती का यह दिल-तोड़ क्रंदन मथुरा का दिल नहीं पिघला सका। वह तमतमा उठा। बोला, "जखिनी की तरह रोने के लिए क्या हुआ है ? सोने नहीं देगी क्या ?" उसने सिसकते हुए अंतर की सारी वेदना से कहा था, "मैंने क्या कुसूर किया है। कहिये मेरी कसम कहिये। बताओगे नहीं तो मुझे कैसे पता लगेगा। मैं यदि खराब हूं तो कह दीजिये। जिस से मैं अपने आपको आपके मन-मुताबिक बनाने की चेष्टा कर सकूं। मुझे इतनी-सी सुविधा तो दीजिये। मुझे दुख देकर आपको भला अच्छा लगता है क्या ?"

मथुरा ने कुछ भी नहीं कहा। उसने एक दुख की आह भरी। बाहर जाकर बीड़ी फूंकता रहा। एक घंटे के बाद कमरे में आकर अपने आपको कहते हुए कहा, "मेरे मन में जो है वह बता देने से तुम्हारा मेरे साथ रहना नहीं हो सकेगा। औरतें पुरुष को मूर्ख ही समझती हैं। जानती नहीं कि अति चालाक बनने वाले के गले में भी डोरी है।"

इतनी बात सुनते ही बासंती का सिर चकराने लगा। कान गर्म हो गये। वह

अवश हो गयी । सारा बदन बुखार की तरह घामने लगा। मुंह बंद हो गया । उसने फिर से मथुरा को दुबारा कुछ कहने का प्रयोजन नहीं समझा । शायद दुर्भाग्य ही उसके पथ का संगी । एक का बहु कष्ट से परित्याग करके दूसरे के साथ शांति से ही दिन गुजर रहे थे । पर जिस कारण से विवाहित जीवन में संकट आने की आशंका थी और जो न होने के लिए उसने प्रभु से प्रार्थना की थी, अब वही हुआ उसने सोचा, धनंजय के साथ तो मन की आंशिक समझ-बूझ ही हुई थी और जवानी की वजह से ही उसके लिए आकर्षण पैदा हुआ था, इतनी-सी सच्ची बात कह देने से मथुरा सब संदेह और जटिलता छोड़ देंगे क्या ? वह रो-रोकर सब सच बात बता देगी । वह क्षमा की भिक्षा मांगेगी । वह तो बहुत अच्छा आदमी है । और इन कुछ महीनों के अंदर ही उसे बहुत प्यार कर चुके हैं । वह तो विकल्प नहीं है । उसका प्रणय एक सांप्रतीक सत्य ।

किंतु वह हजार चेष्टा करके भी यह बात कह नहीं पायी । साहस नहीं हुआ । दारुण विपद की आशंका ने उसका कंठ रोध कर दिया । हांफते-हांफते कमरे से बाहर आकर, सिर पर एक चुल्लू ठंडा पानी डाल कर, बिस्तर पर आकर लेट गयी । पति भी लेटा हुआ । चौड़ा और नर्म बिस्तर उसे कांटे की तरह चुभने लगा ।

कुछ ही दिनों बाद मोरापुर से किसी आदमी ने भागीरथ कानूनगो के घर आकर खबर सुनायी कि बासंती की मां सख्त बीमार है । सुई लगायी जा रही है । रातों को जागकर उसके पास पहरा दिया जा रहा है । लड़की-दामाद को देखने को सुजला की भारी इच्छा है ।

यह सुनकर बासंती अस्थिर हो उठी । भनिता और भागीरथ ने पुत्र को कड़ा आदेश दिया—बासंती को मां के पास ले जाने का । किंतु वह अचल अटल । उसने जवाब दिया, "मेरी औरत को ले जाना या न ले जाना मेरे जिम्मे । दूसरों को बोलने का क्या हक ?" शेष में वह मां-बाप की भी परवाह नहीं करने लगा । रिश्ता खराब न हो जाये, सोचकर, भागीरथ कानूनगो खुद ही सुजला को देखने गये और उसी दिन संध्या को आकर घर में बताया, कि बीमार को कई रोग एक साथ लगे हैं । डाक्टर की सुई ने थोड़ा-सा सुधार किया है । भनिता ने पूछा, "यह लोग वहां क्यों नहीं गये, इसके बारे में उनको क्या बताया ?" भागीरथ ने जवाब दिया, "कह दिया था कि मथुरा कई दिन से शहर में ही है । मैं खुद गाड़ी-घोड़े का इंतजाम नहीं कर सका ।"

यह सुनकर बासंती का दिल कुछ शांत हुआ। पर अब मथुरा के लिए आक्रोश पैदा हुआ। पुरुष है, इसलिए वह उस पर क्यों इतना अत्याचार करेगा ? बीमार मां को देखने के लिए जाने नहीं देना, केवल अत्याचार ही नहीं, पाशविक निष्ठुरता भी। पर उस रात वह पहले की तरह रोई नहीं। किंतु सो नहीं पायी। सुबह सोने वाले कमरे में ही उसने दृढ़ कंठ से कहा, "मैंने भले ही कुछ कुसूर किया है। किंतु 'बोउ' ने क्या दोष किया है ? आप मेरे साथ बिन खरीदे हुए गुलाम की तरह व्यवहार कर रहे हैं।" उसने भी उसी दृढ़ता से जवाब दिया, "मैंने तुम्हें पकड़कर बांध रखा है क्या ? चली जाओ। वापस न आओ तो भी कोई बात नहीं।"

"तो फिर शादी क्यों की थी ?"

"हां, मुझसे भूल हो गयी।"

"आपको मुझपर कोई बड़ा भारी संदेह हुआ है ?"

"संदेह करने का प्रयोजन नहीं। दो कान होने से काफी है।"

यह बात मथुरा ने दिल से कही। अकस्मात ही आज उससे साफ बात करने की कोशिश की। उसके मुंह पर विचारक का तीखा कठिन गांभीर्य था।

बासंती ने कहा, "तो दूसरे के मुंह से बढ़ी-चढ़ी बात सुनने के बदले मेरे ही मुंह से सुन लीजिए।"

मथुरा ने फौरन उसके मुंह की ओर देखा और देखता ही रहा। शायद वह सच बात बताए या न बताए, उसके मुंह की ओर देखकर, उसी बात का अंदाजा लगाने लगा। उसके प्रति दया भी आयी। उसने कहने की उसको अनुमति दी।

बासंती ने मथुरा को अपने आतुर जीवन का एकमात्र सहारा जानकर आवेग से सब कुछ बताया कि उसका धनंजय के साथ क्या संपर्क था, उस संपर्क से उसका कोई सतित्व भंग नहीं हुआ था और कैसे वह संपर्क क्रमशः बढ़कर सहसा खत्म हो गया, आदि सच-सच बता दिया। किंतु ठनुआ घाट में उसके करीब होने की बात और भाग जाने का ठीक करके भी न भागने वाली बात नहीं बतायी। कहानी खत्म करने के बाद वह खूब रोई और मथुरा का हाथ पकड़कर हिला-हिलाकर एक साथ कई बार पूछा, "कहिये, आपने मुझे क्षमा कर दिया ना ! आपका संदेह तो दूर हो गया ना ?"

मथुरा पत्थर की मूर्ति की तरह निश्चल रहा। सिर्फ आंखें आंसुओं से भर आयीं, पहनी हुई बनियान पसीने से भीग गयी। वह बगैर कुछ कहे निकल गया। बासंती

समझ गयी कि वह पहले से ज्यादा हताश हो गये हैं। वह अवश होकर कमरे के फर्श पर ही लेट गयी।

आंगन में साईकल खींचने का शब्द सुनकर वह भागी हुई बाहर आयी देखा कंधे पर कमीज डाले, गन्ने के कोल्हू पर रक्खी साईकल में मथुरा हवा भर रहा है।

उसने पूछा, "जलपान किये बगैर सुबह-सुबह किस तरफ जा रहे हैं ?"

दूसरी तरफ देखते हुए उसने उत्तर दिया, "बहुत दूर तक जाना है। मेरे जिम्मे बहुत सारे काम हैं।"

"मेरी शपथ, आज नहीं जाइये। मैंने एक बुरा सपना देखा था।"

"हूं, मेरे कहने से क्या सरकार तुम्हारे सपने की बात मान लेगी।"

उसकी बात पर कान न देते हुए वह साईकल पर चढ़ गया। बासंती को यह समझना बाकी न रहा कि वह बगैर काम के ही निकल पड़ा है।

गल्ले की दुकान के सामने चार आदमी थे। उनके, 'अच्छे हो ना मंडल' किस तरफ जा रहे हो', आदि प्रश्नों के उत्तर दिये बगैर ही उसने साईकल से सीधा रास्ता पकड़ा। लोग आपस में बातें करने लगे।

"दो चार दिन में ही भला आदमी कैसा सूख गया। इसको पता लग गया होगा, इतना सब सुनकर क्या वह शांति से वास कर सकता है ?"

"सच, उसके अंतर में तो भट्टी जैसी आग जल रही है। कैसा आदमी था और क्या हो गया। दाढ़ी नहीं बनाता, बाल नहीं बनाता, बात भी नहीं करता। सुना है, आजकल वह सब डिप्टी आफिस में हाजरी देने भी नहीं जाता।"

मथुरा कंकड़ पड़े हुए बड़े रास्ते पर पहुंच गया था। उसके बदन में आज अच्छी तरह से आग लगी है। कई तरह की चिंताओं ने उसका बाहरी ज्ञान शून्य कर दिया। अब तक दूसरों की कही बातों पर विश्वास नहीं किया था। बासंती के प्रति बुरा व्यवहार करते हुए भी मन की गहराई में उसके लिए प्यार था। अब भी उसके प्रति प्यार है, इसलिए ज्यादा लाचारी अनुभव कर रहा है। उसके जीवन में वह पहली नारी। किंतु आज उसके मुंह से दूसरे के साथ घुलमिल जाने की उसकी बात सुनकर वह टूट गया। उसने सोच लिया, निश्चय ही उसने धनंजय को देह-मन की सारी माधुरी दे डाली है। औरत होने की वजह से वह यह सब कह नहीं सकी। इतना सत् साहस उसमें नहीं हो सकता। वह कैसी चालबाज औरत ?

और उसकी सुंदरता छलने में उसकी सहायता कर रही है। वह जटिल संकट में पड़ गया है। कैसी आत्मघाती समस्या। उसका प्रेम, उसकी आकांक्षा और भविष्य के एकांत रंगीन सपने, बिना दोष सब व्यर्थ हो गये हैं। बार-बार एक ही बात उसके मन में आ रही है, उसके अपने मुंह से कही उसकी प्रीत कहानी, विश्वास करना ही पड़ेगा। अब इससे ज्यादा और क्या घट सकता है। इससे कुछ कम नहीं हो सकता। वह पुरुष होकर, स्वामी होकर, कैसे सहन कर सकता है? ···

आज सरकारी रास्ते पर मोटरें, बसें बहुत हैं। दलंग घाट के बाजार का दिन है। वैन, डीजल ट्रक और जीप गाड़ियों का आना-जाना तेजी पर है। धूल के प्रकोप से आना-जाना मुश्किल हो गया है। मथुरा को कोई विशेष काम नहीं था। वह यूं ही बाजार की ओर निकल आया है। दलंग-घाट के बाजार में धनंजय से भेंट करने की उसकी इच्छा थी। पर धनंजय से उसकी भेंट नहीं हो सकी। पाभचिला में एक सरकारी बांध बनवाने की बात थी। किंतु अब तक कुछ बना नहीं। इसी संपर्क में धनंजय शिलांग गया है।

दोपहर को वह घर की ओर चला। घर की ओर से उसे ज्यादा ही अशांति मिली। क्या सुख लाभ करने वह घर जाये? वह बहुत उदास हो चुका है। पुरानी स्मृतियों ने उसके मन को अंधेरे में डाल दिया। पत्थर वाले रास्ते पर, उसके एक मील पहुंचने के पहले ही बाजार खत्म होने का समय हो गया। बस, मोटर आने जाने के प्रति नजर रखने की सतर्कता उसमें बिलकुल नहीं रही। ऐसे में मोटर से उड़ती हुई धूल ने उसका मुंह बिल्कुल सफेद कर दिया। रूमाल से मुंह पोंछने, या मुंह पर रूमाल रखने के लिए, वह जैसे भूल ही गया। मोटरों के हार्न और आवाजें भी उसके कान में नहीं पड़ रही हैं। वह जैसे ध्यान-योगी, जैसे परम निस्तब्धता ने ही उसकी ध्यान-धारणा तीव्र कर डाली। यातायात के नियम न मानकर उसके साईकल चलाने की वजह से कई मोटर-चालकों को असुविधा हुई है मोटर रोककर, उसे कटु वाक्य भी कहे हैं। पर मथुरा उन बातों से बेखबर रहा। वह कहां जा रहा है, कहां गया था, और वह क्यों गया था वह खुद भी नहीं जानता। उसको तो बस एक ही चिंता है। इस चिंता का कोई समाधान नहीं। जितनी ही यह चिंता बढ़ रही है उतनी ही परिस्थिति की जटिलता बढ़ती जा रही है।

अंत में जिसका अंदेशा था, वही हुआ। कुछ देर पहले डीजल ट्रक से उड़ती हुई धूल ने उसको छिपा दिया। तेजी से आती हुई, जी. एम. सी. ट्रक को, ब्रेक

लगाते हुए भी निरापद दूरी में रोक नहीं पाया । साईकल समेत मथुरा ट्रक के नीचे आ गया । ट्रक थोड़ी दूर जाकर रुका । ड्राईवर ने उतरकर देखा, खून से करीब तीन वर्ग मीटर स्थान भीग गया है । वह इस बुरी तरह से घायल हुआ है कि इंसानों की तरह पहचाना भी नहीं जा रहा। सिर में काफी चोट लगी है कैसा विभत्स दृश्य । गाड़ी से कुचल जाने से फौरन ही उसकी मृत्यु हो गयी । साई-कल टूट कर एकदम चूरा हो गयी ।

अचानक ब्रेक लगाना दुर्घटना का चिह्न । इसकी आवाज भी दैत्य की चीत्कार जैसी । उसी को सुनकर आसपास के लोग दुर्घटना-स्थल पर दौड़े आ रहे हैं । यह देखकर ड्राईवर डर गया । मृतक के प्रति उसे अशेष समवेदना है । पर घटना की विभीत्सा ने उसे चेतनाशून्य कर डाला था । जब लोग उसकी तरफ आने लगे, तभी उसके दिमाग में आया । गांव के लोग सीधे नहीं हैं । उसको मार कर कचूमर बना डालेंगे । इसलिए उसने जरा भी देर न करते हुए ट्रक चला दिया । उसको मन में दुख जरूर हुआ, पर पिसे हुए शव के लिए अफसोस नहीं हुआ । मरने वाला तो मर ही गया । जिंदा रहने वाले को बचना चाहिए ।

दुर्घटना-स्थल पर लोगों ने शोर मचा दिया । आती हुई एक-दो बसों ने रुककर दुर्घटना के कारण की पूछताछ की । शव पहचानना कठिन हो गया । बांया हाथ, ट्रक वाले हिस्से के बाहर था । हाथ से ही, मथुरा है, पहचानना सहज हुआ । हाथ में बंधी फेवर-लुबा घड़ी चल ही रही थी । कमीज वाली बांह और घड़ी पहने हुए हाथ से ही लोगों ने अनुमान लगाया। और उनमें से दो-एक ने अभिमत दिया कि मथुरा ही होगा । बहुत लोग तो यह विकट दृश्य देखकर आंख बंद करके दूर हट गये ।

पुलिस आयी । दुर्घटना के स्थान का अच्छी तरह से निरीक्षण किया गया । टूटे हुए दाहिने हाथ में अंगूठी मिली । इससे मृतक की पहचान आसान दिखायी पड़ी । किंतु दुर्घटना करने वाली उस मोटर को पकड़ना गांव की पुलिस के लिए असाध्य था । खबर हवा की तरह चारों ओर फैल गयी । मोजापुर से भोगराम ने आकर पुलिस की दिखायी हुई अंगूठी पहचानी । शहर में मरणोत्तर परीक्षा के बाद शव घर लाया गया । बासंती पागल होकर खून से लथपथ शव पर गिरकर, रोते-रोते बेहोश हो गयी । घर के सभी लोगों का वही हाल । पड़ोसी भी मथुरा के शोक में म्रियमाण । बेहोशी की हालत में किसी ने बासंती के माथे से सिंदूर पोंछ डाला ।

हाथ की चूड़ियां और कान के 'केरु' उतार दिये।

दाह-संस्कार के समय मथुरा के दोस्त मीनाधर ने भारी स्वर से कहा, "साथी की मृत्यु दुर्घटना से हुई यह मैं नहीं समझता। साथी ने आत्महत्या का एक नया उपाय ढूंढ़ लिया। समझे सरुमणि भाई, मैं दोस्त को अच्छी तरह जानता था। मुझे उसने क्या-क्या बातें बतायीं। लगता है दोस्त बड़ा महत। खुद तो मर गया, पर आत्महत्या की बदनामी से घर को वचा लिया। ठीक ही है, जब स्वयं मरने का तय कर लिया तो कैसे मरा दूसरों को बताने से क्या फायदा? मृतक को जीने वालों पर आसक्ति नहीं रही।"

इतना कहकर मीनाधर ने गमछे में मुंह छिपा लिया। उसकी दोनों आंखें आंसुओं से तर हो गयीं। एक लंबी सांस लेकर वह चिता के पास से हट गया। अकेले में सोचकर शायद, अपने को ज्यादा रुलाने के लिए।

धीमे से कही हुई मीनाधर की यह बातें, करीब के एक-दो ने सुनीं, पर कोई विशेष दिलचस्पी नहीं दिखायी। ऐसा दारुण परिणाम देखकर लोगों को भागीरथ के परिवार के प्रति बड़ी सहानुभूति हुई। ऐसे समय झूठ बोलना कितना पागलपन है। मृतक तो महान हो गया।

सोलह

भागीरथ और भनिता बासंती को बड़े प्यार की दृष्टि से देखने लगे। भरे यौवन में लड़की की ऐसी हालत देखकर, उसे और किसी बात का दुख न हो, अपनी मुसीबत उसे आतुर न कर सके इसके लिए बूढ़ा-बूढ़ी काफी सतर्क रहने लगे। तदुपरांत परिवार बासंती की वजह से जमा रहा। बूढ़ा-बूढ़ी बहू का मुंह देखकर, बेटे का शोक भूलने की कोशिश करने लगे। संस्कार कर्म के बाद बासंती मां के घर चली गयी। जाने से पहले मुहूर्त में भागीरथ ने कहा, "बेटी, यदि तू वहीं रहना चाहे तो हमें कोई आपत्ति नहीं है। हम दुख नहीं करेंगे।"

बासंती ने वचन दिया, "पिताजी शादी होने के बाद लड़की को मां के घर रहने का हक नहीं है और मैं वहां किस मूलधन के बूते पर दिन गुजारूंगी?"

बहू की बात सुनकर भागीरथ कानूनगो को संतोष मिला। भनिता ने उन्हें

बताया था कि बासंती को चार महीने का गर्भ है। भागीरथ कानूनगो पहले नाती का मुंह देखने के लिए आशा से इंतजार करने लगे। एक पोता होने से इस जगत में मथुरा की निशानी रहेगी। बासंती भनिता के साथ मां के घर जाकर चार दिन रही। भोगराम और तरुलता ने उसे मोरापुर में ही रहने के लिए जोर दिया। उसने उनका सहानुभूतिपूर्ण अनुरोध माना नहीं। नम्र भाव से मन का अभिप्राय बताकर वह भनिता के साथ दरगियाल वापस लौट आयी।

मां की हालत वाकई खराब है। बीमारी का सिलसिला पुराना ही चल रहा है इसलिए अचानक मरी नहीं। आते समय मां ने उसको कहा, "बेटी, तू वापस चली जा। तेरा वहां रहने का इरादा देखकर मुझे संतोष है। सास-ससुर को ही मां-बाप समझना। मैं जाने और कितने दिन की मेहमान हूं। उस पुरी में मेरे एक-एक साक्षी चले गये हैं। यह संताप लेकर मैं जीना नहीं चाहती हूं। बेटी, कभी-कभी आती रहना।"

मां की पद-धूलि लेकर, आंसू बहाकर वह लौट आयी थी। शोक में भोगराम के मुंह से भी बात नहीं निकल रही थी। सिर पर हाथ रखे नीरव में बैठे भोगराम ने बासंती को भनिता के साथ जाते देखकर एक लंबी सांस खींची। उसकी सास ने वहां का वातावरण बड़ा भारी कर दिया था। उसको पहली बार भाई के लिए स्नेह पैदा हुआ। शायद भोगराम आजकल सुधर गया है? शायद अब ढलपुरिया औरत के साथ की बदनामी दब गयी है। खेत बोने और खेत काटने के साथ-साथ सोनाई पार की मोहनीय प्रकृति के ऋतु परिवर्तन के साथ ही सोनाईपरिया ग्रामीण समाज अपना दुख भरा, कलंक भरा और मृत्यु का भी सामना करता हुआ भयावह अतीत भूल जाते हैं। सोनाईपरिया उदार होते हैं। कृषि-कार्य के बाद भगवान कृष्ण की पूजा करते हैं। सोनाई का स्रोत, नित्य नूतन; सोनाई का अनजान अभिप्राय भी नित्य-नूतन। मूर्तिमती-सोनाई की जयविक चेतना भी जैसे नित्य-नूतन। सोनाईपरिया का मन और मानुस भी नित्य-नूतन। रसमय नूतनता के अवहमान काल की गति चेतना से, भोगराम का अपयश, बहुतों के मधुर सपने, समाज स्वीकृत कलंक, भोगराम का पूर्व इतिहास और बासंती की ज्वाला यंत्रणा मिटा देती है। किंतु बासंती, रूपवती प्रकृति में और चौंदिश के स्पंदन-गतिमय पृथ्वी पर नित्य-नूतन होने की आशा का सहारा खोज नहीं पाती। अब उसकी आशा सास-ससुर की आशा के साथ मिल गयी है। एक संतान पाने

की उसकी चिरकाल आशा ! किंतु वह जो जन्म दुखी, दुर्भाग्य ही जिसके पथ का सहारा—उस औरत को कैसी आशा तथा भविष्य की चिंता करने का कैसे साहस हो सकता है ?

परिवार के सब लोगों से उसने आशातीत आदर पाया है। पारुल और पुतली उसको हंसी-मजाक में लाने की भरसक कोशिश करती हैं। भागीरथ कानूनगो, उसके खाने की रुचि पर भी नजर रखते हैं। भनिता उसे साथ सुलाकर ही शांति पाती है। रात को बूढ़ी उसके सिर पर हाथ फिराकर गुणमाला (श्री शंकरदेव के कृष्ण महिमा पर वर्णन किये गये श्लोक) का कीर्तन करती है।

पर इस सबसे बासंती को शांति नहीं मिलती। एक बात उसे बार-बार सताती है। हमेशा ख्याल आता है, निश्चय उसी की गलती से मथुरा कीजान चली गयी। सोनाईपरिया के युग-युग से विश्वास करते आ रहे दर्शन से वह अनजान नहीं है। मां ने भी कुंवारी अवस्था में इस दर्शन के बारे में समझाया था। औरत के मन में पाप आने से ही पुरुष पर मुसीबत आती है। सही, बासंती का जीवन भी एक गलत धागे के रास्ते ही चल रहा है। उसके मन में भी पाप आ गया था। एक दिन धनंजय के साथ भाग जाने को उतावली हो गयी थी। पर मृत्यु के बाद भी वह मथुरा को ही दोषी ठहराती है। सत्य उद्देश्य से दोष स्वीकार करने से तो मनुष्य की मौलिक सत्ता का रूपांतर होता है। उसने भी उसी तरह स्वीकार किया था, इसलिए कि वह मथुरा को प्यार करती थी। उसने समझने की कोशिश ही नहीं की। उसका कातर अनुरोध भी वह नहीं माना। क्षमा करके, वह महान नहीं बन सका। उसकी व्याकुल और करुण विनती में एक सुख-शांति का संसार बसाने का जो संकल्प था वह देख नहीं पाया। उसने सामान्य अनुकंपा भी नहीं दिखायी। उसने और किस काम में पौरुष का चिह्न दिखाया ? उसे घर से निकाल कर अपने मन का पथ क्यों नहीं चुन लिया ? उसने पागल होकर, उदास होकर, आत्मक्षयी उपाय चुन लिया। शायद चिंता में ज्यादा अस्थिर हो गये थे, और इन्हीं सब कारणों से ही वह दुर्घटना से मरे। अगर वह उसको घर से निकालकर खुद जीवित रहते तो उसको खुशी होती। कम-से-कम उसकी मांग का सिंदूर तो रह जाता। टूटा हुआ बांस शायद एक दिन जुड़ भी जाता। जिस आदमी को सिफ संदेह इतना अस्थिर कर सकता है, जो मानसिक यंत्रणा संभ्रम से वहन नहीं कर सकता, उस आदमी में पुरुषोचित्त मनोबल कहां ? आत्मविश्वास कहां ? वीरत्व कहां ?…

दुख के दिनों की ओस सुखाकर महीने आगे बढ़ते गये । बासंती को अब कोई चिंता नहीं सताती । उसको अब एक ही चिंता है । कुशलपूर्वक संतान भूमिष्ट हो जाये । उसी के सहारे वह जी जायेगी । उसके नौ महीने पूरे हो गये। खाने-पीने को दिल नहीं करता । सांस लेने में भी दिक्कत होती है । नींद भी कच्ची हो गयी । पेट में दर्द रहता है । भनिता सरसों के तेल से पेट पर मालिश कर देती है । वह पहले की तरह उठ-बैठ नहीं सकती ।

घर में उसकी पूरी देखभाल हो रही है । उसे खाने के लिए 'महीन-जहा' (असम का बढ़िया किस्म का चावल जिसमें बहुत खुशबू होती है) चावल दिया जाता है । दो महीने हुए, तभी से एक पाव दूध सोने से पहले पीती आ रही है । अब भागीरथ बीच-बीच में शहर जाकर तरह-तरह की विलायती दवाएं लाते हैं । कई नामों वाली दवायें—औस्टो कैलशियम, आइरन टेबलेट इत्यादि । दवा भनिता के हाथ में देकर, भागीरथ कहते हैं,"यह दवाएं समय पर खिलानी पड़ेंगी । इनके खाने से प्रसव की बेला कष्ट कम होता है । संतान की हड्डी भी मजबूत बनेगी । एक बात और भनिता, जिस दिन दस महीने खत्म हों, उस दिन पाल-चेटिला यानि दस नंबर की पाल-चेटिला खिलानी पड़ेगी । यह बात याद रखना ।"

उसी समय एक और घटना घटी । मोरापुर से एक आदमी ने आकर समाचार दिया कि प्रातःकाल बासंती की मां की मृत्यु हो गयी। भोगराम ने बासंती को लाने के लिए उसे भेजा है । मां की मृत्यु की खबर सुनकर बासंती रोकर टूटी नहीं । उसने जीवन में इससे भी बड़ा शोक सहन किया है । एक के बाद एक शोक घटना ने जीवन की गति परिवर्तन कर दी है । मां की मृत्यु हो गयी, अच्छा ही हुआ । उम्र हो गयी थी, और बीमारी ने भी उसको कम कष्ट नहीं दिया । इसके अलावा बूढ़ी ने इसी जीवन में कई तरह के शोक सहन किये थे । मरने के समय लड़की का सबसे बड़ा शोक भी सहना पड़ा । जिंदा रहने से और भी कितने बड़े शोक सहन करने पड़ते थे, कौन जाने । जीवन में दुख सहने के लिए ही बहुतों का जन्म हुआ है ।

मां की मृत्यु की खबर सुनकर बासंती के मन में इसी तरह के भाव आये ।

कितना भी हो सुजला उसकी मां थी इस जन्म में अब 'बोउ' कहकर बुलाने के लिए उसको कोई नहीं मिलेगा । वह कुछ देर रोती रही ।

मृतक के घर संवेदना के लिए भागीरथ और भनिता ही गये । भोगराम और

तरुलता को बासंती के न आने का कारण समझा दिया।

बासंती मां की मृत्यु पर भी घर छोड़कर क्यों नहीं जा इसकी सके लिए लोगों को समझाने का ज्यादा प्रयोजन नहीं है। सब ही जानते हैं। गर्भवती औरत को सात महीने और नौ महीने में घर छोड़कर नहीं जाना चाहिए। इस नियम को भंग करने से सिर्फ मां के लिए ही विपद नहीं संतान के लिए भी खतरा रहता है।

मां के श्राद्ध में, लोगों को प्रणाम करके, मां की सद्गति की कामना करके और मृतक की आत्मा से आशीर्वाद लेने का भी भाग्य बेचारी बासंती को न हुआ।

सत्रह

बासंती की गर्भावस्था पूरे दस महीने तक पहुंच नहीं पायी। अकस्मात प्रसव-पीड़ा शुरू हो गयी। घर के सब लोग उसी में व्यस्त हो गये। भनिता ने उसे एक अलग कमरे में रखा। घर में छत की बल्ली से बंधी हुई रस्सी का दूसरा छोर बासंती को हाथ से पकड़ने के लिए दे दिया। रस्सी खींचती-खींचती बासंती पीड़ा सहती रही। भनिता ने कहा, "बेटी, कोई चिंता मत कर, जल्दी ही फारिग होजाओगी।" कहकर दिलासा देते हुए पास ही बैठी रही।

उधर भागीरथ कानूनगो को चैन नहीं। साईकल चलाकर चमूआ गांव गया। ओझा ने एक चुल्लू पानी फूंककर दिया। बासंती ने फूंका हुआ पानी थोड़ा-सा सिर पर चढ़ाकर बाकी पी लिया। कुछ फल नहीं निकला। प्रसूता की यंत्रणा दो घंटे से चल रही है। धीरे-धीरे यंत्रणा बढ़ती गयी। प्रसूती वाले-कमरे से बासंती का दिल तोड़ चीखना-चिल्लाना भागीरथ के बर्दाश्त के बाहर हो गया। गांव की ओर जाकर, वैद्य और दवा ढूंढ़ने के लिए, उसने अलग-अलग लोग भेजे। घर आकर सुना, बासंती दर्द से बेहोश है। भागीरथ हताश हो गया।

एक घंटे बाद भागीरथ का भेजा हुआ एक लड़का वापस आया। वह एक डोर लेकर आया है। दलंग घाट की 'मैमनसिंगया' (पूर्वी बंगाल के मैमनसिंग जिले के आये हुए लोग जो असम में बस गये हैं) औरत की फूंकी हुई डोर भनिता ने बासंती की कमर में बांध दी। थोड़ी देर के लिए उसे चेतना आयी, पर कराहना

बढ़ता ही गया । खबर पाकर दाई कपिली बाई आ गयी । अब भागीरथ को थोड़ा चैन पड़ा । कपिली बाई ने प्रसूता के पास बैठकर थोड़ी देर गति-लक्षण देखे । वह समझ गयी कि बात गंभीर है । पीड़ा नीचे की तरफ आने से भी, बीच-बीच में प्रसूता को मूर्छा आ जाती है । इस तरह ज्यादा देर तक चलने से वह मर जायेगी । कपिली ने किसी और के उपदेश की प्रतीक्षा नहीं की । अपने काम में लग गयी । हाथ लगाकर ही शिशु को भूमिष्ट कराया । भनिता ने बाहर के लोगों को सुनाकर कहा—लड़का । किंतु लड़का भूमिष्ट होकर रोया नहीं । बासंती सब यंत्रणा भूलकर अपनी आशा के धन को देखने लगी । निमिष में सब दुख भूल गयी । तृप्ति से दोनों आंखें बंद कर लीं । पर शिशु तो रोया नहीं । वह 'केहू-केहू' रोना कितना सुरीला । वह रोना बासंती के लिए मधु की तरह मीठा होगा । पोते की आशा में रहते हुए, भनिता और भागीरथ को भी शिशु के प्रथम रोने की आवाज दिल खुश कर देगी ।

काफी समय बीत गया । कपिली को एक बुरा-सा संदेह हुआ । शिशु की छाती पर हाथ रखकर देखा, छाती में दम है । हाथ की नाड़ी चलने से भी गति ठीक नहीं है ।

घर की छत पर चढ़कर दो लड़कों ने टूटा टीन बजा दिया । लोगों को विश्वास है कि चुप रहने वाला बच्चा इस तरह से जाग जाता है । किंतु ऐसा हुआ नहीं । बच्चे की हालत पहले जैसी ही मरी हुई रही । कपिली बाई ने बाहर आकर कान में फुसफुसाकर कहा, "भागीरथ भाई, एक काम करो । शिशु का इस तरह रहना भय का कारण नहीं है । कई शिशु शुरू में ही घमंडी बनकर दुनिया में आते हैं । रोते नहीं । चुप रहते हैं । इस घमंड को तोड़ने के लिए बाप को कुछ उपहार देकर खातिर करके बुलाना चाहिए । पर वह आधी अंगुल जैसा कपाल लेकर पैदा हुआ है । बिन बाप के संसार में आया है, इसलिए तुम दादा होते हुए भी उसको कुछ देकर आवाज दो ।"

कपिली के कहे अनुसार सब नियम, कानून और संकोच छोड़कर भागीरथ प्रसूति-गृह में आया । बासंती को चेतना है । उसने लंबा-सा घूंघट खींच लिया । भागीरथ बूढ़े ने एकांत लकड़ी की तरह पड़े हुए पोते की ओर देखा । दूर से ही दो सोने के सिक्के उसकी छाती पर रख दिये और कहा, "राजा बेटा, घमंड छोड़ दो । आंखें खोलकर देख । मेरी कसम, दादा के सामने गर्व छोड़ दे ।"

यह कहकर बूढ़ा पोते की तरफ देखता रहा। रोने या आंखें खोलने के कोई लक्षण दिखायी नहीं दिये। करीब पांच मिनट के बाद शिशु हठात चौंक उठा। थोड़ी देर बाद मुंह रोने की तरह बनाते हुए भी क्रंदन नहीं आया। रह-रहकर हिचकी लेने लगा। बासंती भय के मारे चीख उठी। भनिता ने शिशु की छाती पर हाथ रखा। उसने अपनी दोनों आंखें दो बार अच्छी तरह से खोलीं और उसके बाद हमेशा के लिए बंद कर लीं। थोड़ी देर के लिए ठहरे प्राण झट से उड़ गये। प्रसूति-घर में जैसे आग लग गयी। पेड़ के पत्ते भी गिर जायें, ऐसा क्रंदन सुन कर आसपास के लोग स्थिर नहीं रह सके; आंगन में भीड़ लग गयी।

घंटे भर बाद, घर थोड़ा शांत हुआ। शिशु को बासंती की गोद से ले जाते समय, फिर से शोर मच गया। भनिता किसी भी तरह से उसकी गोद से मरे हुए बच्चे को नहीं ले सकी। भनिता जितना बच्चे को लेने की कोशिश करती, बासंती उतने ही जोर से बच्चे को अपने से चिपकाती जाती। अंत में दाई कपिली बाई ने निर्दय होकर बच्चे को उसकी गोद से छीन लिया। बासंती चीख-चीखकर लोट-पोट होकर रोने लगी। "ओ मेरे सोना मैं भी तेरे ही साथ मरूंगी। मां, पिताजी, मुझे भी इसके साथ ही दबा दीजिए।"

भनिता सहन नहीं कर पायी और प्रसूति-घर से चली आयी। मृत बच्चे को गोद में लेकर भागीरथ श्मशान की ओर चलने लगा। उनके पीछे कुदाल और फावड़ा लेकर दो आदमी साथ चलने लगे। कपिली बाई बासंती को इस हाल में छोड़कर घर नहीं गयी। बच्चा क्यों मर गया, उसका कारण सोचते-सोचते प्रसूती-घर साफ करने में लग गयी। सांझ हो गयी। उसके जाने के समय भनिता ने खुद ही बात निकाली तो इसीलिए कपिली ने भी मन की बात कही।

"कपिली बाई, भगवान भी इससे मजाक कर रहे हैं। चौथे महीने में मथुरा का संताप पाया। उस दिन मां की मृत्यु हुई। आज फिर यह हो गया।"

"ठीक ही कह रही हो, पेट में बच्चा रहते हुए औरतों को संतान की भलाई के लिए ही खुश रहना चाहिए। पर उसे तो भारी दुख ही वहन करना पड़ा। न जाने कितनी रातें सोयी नहीं है और रो-रोकर बितायी होंगी। मां के बूढ़ी होने से भी अपनी मां के दुख ने उसे भेद दिया। ऐसी हालत में गर्भिणी के मरने की आशंका ज्यादा होती है। वह तो किसी तरह से बच गयी। बच्चे का मरना स्वाभाविक था। कोई ओझा या ज्ञानी भी सुधार नहीं सकता। पेट में रहते समय

ही उस पर बुरा असर हुआ। ऐसी अवस्था में औरतों को मरा हुआ बच्चा ही पैदा होता है।"

आखिर में कपिली की आवाज कांपने लगी । भनिता ने आंसू छिपाने की कोशिश नहीं की, रोते हुए कहा, "बाई और चर्चा की जरूरत नहीं है। बस इतना ही काफी है।"

बासंती दो दिन तक बिस्तर से उठी नहीं। तीसरे दिन आंखें खोलकर टिक-टिकी बांधकर ऊपर देखती रही। भनिता ने उसको बैठने के लिए कहा। पर उसने सुना ही नहीं। बार-बार कहने से भी एक दाना मुंह में नहीं डाला। न खाने का भनिता ने बुरा नहीं माना। पहले तीन दिन तक कुछ न खाना अच्छा है। प्रसूती में नाड़ी कमजोर हो जाती है। सब कुछ खाया भी नहीं जा सकता।

एक दिन बीता, दूसरा दिन भी गया। देखते-देखते दस दिन बीत गये। खाने के नाम से, उसने पानी के सिवा कुछ भी नहीं छुआ। बैठने-उठने की भी शक्ति बदन में नहीं रही। घर के सब लोग घोर चिंता में पड़ गये। भोगराम को खबर भेजी गयी। भोगराम और तरुलता ने आकर बहुत समझाया पर वह अचल-अटल रही। सब ने यही सोचा कि खाना न खाकर, उसने मरने की प्रतिज्ञा कर ली है। बड़े लोग भी उसे क्या कहकर सांत्वना दे सकते हैं। उसके चारों तरफ तो अंधेरा है। "औरत जिंदा रहने से औलाद का मुंह नहीं देखेगी क्या? क्या एक बच्चा मर गया इसलिए औरत बगैर खाये मर जायेगी", आदि कहकर भी दिलासा देने का कोई उपाय नहीं रहा। सभी जानते हैं वह क्यों इस तरह मरना चाह रही है। गांव वाले हरि नाम ले रहे हैं। उसके जीवन की पहली और आखिरी संतान को अपने दिल का प्यार न देकर, वंचित होने से, पागल हो जाना तो स्वाभाविक ही है। पर शोक होने से भी दस-बारह दिन भूख न लगे यह कैसी बात है? शायद उसको भूख न लगने की बीमारी हो गयी हो।

डाक्टर को घर में बुलाया गया। डाक्टर ने भी कहा कि मानसिक बीमारी ही है। फिर भी भागीरथ को बहुत-सी बातें बता गया। बारह दिन बीत गये। अब वह अपनी इच्छानुसार घर की दहलीज में बैठने लगी। क्षीण तो पहले से ही हो गयी थी। अब तो उसकी ओर देखा भी नहीं जाता। वह दुनिया से बेखबर रहने लगी। जैसे न सुनने और न बोलने की बीमारी लग गयी हो। दहलीज पर बैठकर, ऊपर की ओर ताकती रहती। ऊपर ऐसे देखती रहती है, जैसे अनदिखे

तारों के साथ दोस्ती कर रही है।

बासंती पहले सास-ससुर की बात मानकर चलती थी। अब उन लोगों का अनुरोध न मानने की वजह से उनकी चिंता तो जरूर बढ़ी है, पर उसके प्रति आक्रोश नहीं है। वह और कितने दुख सहेगी।

भोगराम भी काफी चिंता में पड़ा है। वह अपने को दोषी समझने लगा है। उसी के दोष से ही, बासंती के जीवन ने ऐसी मोड़ ली। इस महीने उसके पास बिल्कुल समय नहीं है। ठेके के सब काम इसी महीने में पूरे करने हैं। बहन के घर एक दिन रहकर लौट आया। तरुलता एक दिन और रुक गयी। घर में बाल-बच्चों के साथ सौ जंजाल होते हैं। इसी कारण उसे बासंती को छोड़कर जाना पड़ा।

दो दिन बाद की एक घटना ने सबको स्तंभित कर दिया। भागीरथ आंगन के एक कोने में रस्सी बुन रहा था। प्रातः दस बजे का समय था। बासंती हमेशा की तरह दहलीज में बैठी थी। 'पदूलिमुख' पर एक के बाद एक लगातार तीन बार साईकल की घंटी बज उठी। बासंती भी उसी ओर ताकती रही। भागीरथ ने भी सिर उठाकर देखा। पहचान नहीं सका। कहीं देखा भी हो तो याद नहीं आया। अपने गुजरे हुए बेटे जैसा ही शोभनीय नौजवान आदमी। सफेद हाफ पैंट और कमीज में एकदम शहर के डाक्टर जैसा ही लगता है। डाक्टर ही होगा। कारण साईकल के हैंडल पर, एक डाक्टरी बैग टंगा हुआ है।

आदमी ने साईकल 'नंगला' (एक प्रकार का बांस का गेट) पर टिका दी। किसी से पूछ-ताछ न करते हुए सीधा अंदर चला आया। उसे देखकर बासंती फौरन अंदर चली गयी।

एक अनजान को बैठते देखकर भागीरथ ने पूछा, "तुम कौन हो बेटे ?"

उसने जवाब दिया, "मैं कोई जानने के काबिल आदमी नहीं हूं। फिर भी पूछ रहे हैं इसलिए बता रहा हूं। मैं पाभचिला का धनंजय।"

"हां, नाम तो सुना है। मैंने तो आज हाथ से ही स्वर्ग छू लिया। तुम खुद ही आये हो तो अच्छा ही किया। भोगराम ने तुम्हें खबर दी है क्या ?"

धनंजय ने मिथ्या कहा, "नहीं। इस तरफ आते हुए यहीं पता चला। सोचा, एक बार देखता जाऊं। पर जब खाना ही नहीं, तो दवा से लाभ ही क्या ?"

धनंजय की आवाज थोड़ी हताश-सी। मन भी कुछ दबा-सा। वह असल में जितना गंभीर है, अब शायद उससे भी ज्यादा गंभीर हो गया है। भागीरथ बूढ़े ने ऐसा ही अनुमान किया। उसके प्रति कृतज्ञ होकर बूढ़े ने उसे अच्छी तरह देखा। कपड़े इतने साफ पहने हैं,तब भी बाल उलझे हुए हैं। दाढ़ी भी नहीं बनायी है। किसी दारुण दुख ने जैसे उसकी दोनों खूबसूरत आंखों की चमक और मुंह की कांति हर ली है।

"पहले उसे देख लोगे क्या बेटे ?"

"बुलवा दीजिये।"

भागीरथ ने अंदर आकर बताया। और फिर धनंजय के पास आ गया। बासंती ने कई दिनों के बाद, आज ही सास से बात की।

"बेटी। तो अब उन्हें जाने को कहता हूं। वह किसी के घर अपने-आप आने से झिझकते नहीं।"

"तू उन्हें पहचानती है ?"

"पहचानती थी।"

"उसने क्या कसूर किया है ? चिकित्सा का ज्ञान रखने वाला लड़का है। और तू निकलना ही नहीं चाहती। औरों को हमारे घर नहीं आना चाहिए क्या ?"

बासंती को अब होश आया। धनंजय ने यहां आकर गलत काम किया है। उसने नहीं भागकर जो गलती की थी, आज उससे भी बड़ी गलती वह कर रहा है। उसे मन से मरा जानकर, विसर्जन देने के बाद अब अगर धनंजय के प्रति विरूप भाव दिखाये तो वह पकड़ी जायेगी। सास जरूर कहेगी, "सब के सामने तो निकलती हो ? इनके सामने क्यों नहीं ?" धनंजय का साहस उसे अच्छा लगा। पर क्या यह साहस सच्चा है ? पुरुष होने के नाते उसमें मनोबल है, क्या इसीलिए वह पकड़े जाने के डर की उपेक्षा करके, उसका दुख का भागी बनने यहां आया है ?"

आखिर वह सास के साथ जिस कमरे में धनंजय बैठा था वहां आयी। छोटे-से पीढ़े पर बैठ गयी। घूंघट कपाल के पास तक खींच लिया। पैर के नाखून से मिट्टी कुरेदने लगी।

धनंजय स्तब्ध होकर रह गया। उसने उसे अच्छी तरह से देखा, वह बहुत ही दुबली हो गयी है। और पहले के चेहरे की छाया भी नहीं रही इस शरीर के

अवशेष सौंदर्य और कमनीयता ने उसको अभी भी मोहनीय बना रखा है। उसकी मुखश्री अब भी दिल खुश करने वाली है। खूबसूरत आंखों की तारों जैसी चमक अवश्य वेदना ने हरण कर ली है। करुण मुख-मंडल पर पुत्रहारा मातृ की महिमामयी मूर्ति विराज रही है।

धनंजय को कुछ न पूछते हुए देखकर भागीरथ बूढ़े ने सोचा, वह उन लोगों के वहां रहने की वजह से इलाज करने में हिचकिचा रहे हैं, इसलिए वह बाहर निकल आया। भनिता को भी इशारा किया।

बासंती ने ही पहले कहा, "मैं सोच नहीं सकी तुम···।"

धनंजय ने बड़ी धीमी आवाज में कहा, "हां, मेरी भूल होने से भी आये बगैर रह नहीं सका। इंसान बड़ा असहाय है, समझी। मानुस अक्षम भी। मनुष्य बंधन तोड़ नहीं सकता। तुमने तो मुझे छोड़ दिया था, शायद मैं इतना योग्य भी नहीं हूं। तब भी तुम्हें दोष नहीं दे रहा हूं। तुम्हारे पास आया हूं।"

बासंती सिसकने लगी। कहा, "मुझे क्षमा करके इस तरह कष्ट देने क्यों आये हो ? अब तो समय बीत चुका है।"

"समझा !"

"क्या समझे ?"

"समझ गया कि तुम संभ्रांत हिंदू घर की बहू।"

"हां, मैं हिंदू घर की एक विधवा। एक दिन होम अग्नि के पास बैठी थी। मांग में सिंदूर भरा था। किसी की पत्नी बनी थी। मेरे शरीर में एक पुरुष की गंध है। तब भी तुमने मुझे क्षमा कर दिया ? कितना आश्चर्यजनक ! मैं एक साधारण लड़की हूं समझे। मेरे बारे में सोचकर अपना जीवन नष्ट मत करो। तुम्हारे आगे भविष्य है। मुझे इसी तरह जीने दो।"

"बासंती।"

"कहो।"

"मैं सिर्फ तुम्हें देखने आया था।"

"अच्छा किया।"

"किंतु तुमने अपने को ध्वंस करने का यह क्या उपाय चुना है। लोगों को दुख देने में तुम्हें मजा आता है क्या ? मुट्ठी भर अनाज ने क्या कसूर किया है ? मैंने तुम्हें पहले भी कहा था : मरने की खोज में, या खुद मर जाने में, कोई गौरव नहीं

है, इस पृथ्वी पर जीवित रहना ही असली बात है। इसमें ही मनुष्य का अपना गौरव है !"

धनंजय की आंखें भीग गयी थीं। बासंती का भी दो बार आंसू बहाकर मन दृढ़ हो गया। उसने कहा, "मैं वचन देती हूं। मैं जिंदा रहूंगी ! सात चक्कर में बंधकर भी मैं जिंदा रहूंगी। तुम मुझे इस तरह जीवित रहने के लिए कुछ और हेतु दे सकोगे ?"

धनंजय हठात उत्तर नहीं दे पाया। वह नीचे ताकता रहा। सोचा धर्म का आश्रय लेकर अथवा परोपकार में अपने को निछावर करके बासंती शांति से बाकी दिन बिता सकेगी ? निश्चय ही बिता सकेगी। हिंदू नारी युग-युग से ऐसे दृष्टांत दिखाती आ रही है। अंतर में मुरलीधर का विस्थापन करके, मीरा ने जीवित रहने का मोह खोज लिया था। संगीत के जादू से रसग्राही के मन-प्राण हरण किये थे। और भी बहुत से दृष्टांत हैं।

बासंती को जवाब देने के लिए सिर उठाकर देखा। इसी बीच बासंती चुपके से उठकर चली गयी। अंदर से उसको कहते सुना, "मां मैं खाना खाऊंगी।" उसके मुंह से यह बात सुनकर सबके चेहरों पर खुशी दिखायी देने लगी। इसका मतलब है वह संभल गयी। धनंजय के प्रति सब कृतज्ञता से भर उठे।

भागीरथ ने उसके हाथ पकड़कर कहा, "बेटे तुमने तो कमाल का काम कर दिया। ईश्वर तुम्हें ख्याति दे।"

धनंजय ने गंभीरता से जवाब दिया, "वह भात खाना चाह रही हैं। पर पहले भात मत दीजियेगा। इतने दिनों बाद खाने से हजम नहीं होगा। पहले शुरू में नींबू का 'झोल' (नींबू को रसेदार पकाना) दीजियेगा। अगर वह पेट में ठहर जाये तो शाम तक भात दीजियेगा।" इतना कह कर धनंजय एक पल भर भी नहीं रुका। आंगन से भनिता और भागीरथ ने उसे प्यार से घर के अंदर आने का अनुरोध किया। पर वह अनसुना-सा कर अनजान बन गया। उसने भगवान से प्रार्थना की कि यहां उसे फिर कभी न आना पड़े।

अठारह

एक सप्ताह बीत गया। देखते-देखते एक पखवाड़ा पार हो गया। दरगियाल की तरफ धनंजय की छाया भी देखने को नहीं मिली। बासंती किस के मुंह से उसके बारे में सुने ? किस से पूछे ? कहीं लोगों को संदेह हो गया तो बात बढ़ा-चढ़ाकर फैला देंगे।

किंतु एक दिन, बिन पूछे ही उसको धनंजय के बारे में सुनने को मिल गया। सोनाईपरिया लोगों के हर एक के मुंह पर धनंजय के साहस की चर्चा हो रही है।

घटना कुछ इस तरह की है :

भोगराम में ठेका लेकर वहुत रुपये का मालिक हो जाने से भी उसकी रुपये की लालसा बढ़ती ही गयी। धन लोभी मन पिशाच हो गया। मां की मृत्यु और बहन के साथ की दुर्घटना ने कुछ दिनों उसके मन को दबा रखा। शायद कुछ दिन रुपया-पैसा कमाना आसान समझा। किंतु आजकल उसके प्रधान साथी कुछ शहर के लोग—कर्पूर चंद तोड़ी, राम मिलाप पचामन, हरबीर भाटिया और सनत फुकन आदि। यह सभी शहर के विख्यात धनी व्यक्ति। वह लोग क्या व्यवसाय करते हैं, किसी को कुछ पता नहीं। उन्हीं लोगों के साथ ने भोगराम को ज्यादा बुरा बना दिया है। आजकल भोगराम शराब भी पीने लगा है। जितने दिन वह शहर में रहता है, वही कुछ दिन उसके आराम-सुख से कटते हैं। अच्छे होटल में रहता है। शराब पीता है। पैसे देने से होटल में, लड़की का भी जुगाड़ हो जाता है। चारों ओर भोग का आयोजन देख कर ही उसने धन का प्रयोजन समझा है। उपार्जित धन उसे संतुष्ट नहीं कर पा रहा है। वह तो सपना देख रहा है, सनत फुकन और राम मिलाप की तरह, एक लड़की के कत्ल की स्थापना करने की। हरबीर भाटिया जैसा एक सिनेमा घर बनवाने की। लालसा, और लालसा की क्षणिक परितृप्ति भी उसका असंतोष बढ़ा रही है। वह मानवीय सूक्ष्म अनुभूति खो बैठा है। सोनाईपरिया एक मन खो गया है। वह 'शाल' (बगैर कांटे वाली मछली) के बीच 'शींगि' (कांटे वाली मछली) जैसा। कृषि-जीवन की विकलांग अवस्था ने, देश की व्याधि-युक्त अग्रसर गति में और ग्राम्य-जीवन के सहिष्णु अवस्था में, नये मूल्य बोध और परिस्थिति ने ही, उसके जैसे नये इंसान की सृष्टि की है। उस जैसे राहू ही सोनाईपरिया लोगों की सरलता

और नीति बोध ग्रास करने की कोशिश में हैं। सोनाई पार में दुरनीति घुसी है जरूर, पर राहू अब तक बड़ा मुंह खोल नहीं पाया है। कारण लोगों में अंतर्हित सत्ता है और सोनाईपरिया जन-जीवन के, सुप्रतिष्ठित ऐतिह्य भी है। सोनाई में स्रोत है, सोनाई में रूप है। सोनाईपरिया क्षेत्र के जीवन की गति छंद में ठीक तालमेल है। दलंग घाट के ऊपर एक मजबूत काठ का पुल बना। वहां से पाभचिला होकर, कंकड़ पत्थर डाला एक रास्ता बनेगा। पहले बने दक्षिण पार वाले रास्ते के साथ मिल जायेगा। नये रास्ते पर काम शुरू हो गया है। ठेका भाटिया, तोड़ी, पचमन और भोगराम को मिला है। यह नया सरकारी रास्ता बहुत से किलोमीटर लंबा होगा। यह रास्ता कूंजी से होकर ढींग बाजार तक निकलेगा। जल्दी ही लोग सर्विस बस में आराम से बरदोवा में तीर्थ कर सकेंगे। पहले की तरह मिट्टी-कीचड़ में सन कर बरदोवा में फगुआ देखने की जरूरत नहीं पड़ेगी।

पाभचिला में एक सरकारी चिकित्सालय की स्थापना होगी। भवन का ठेका भोगराम को मिला है। भोगराम का ख्याल था कि चिकित्सालय की प्रतिष्ठा होने के बाद धनंजय की होमियोपैथी चिकित्सा खत्म होकर, उसकी रोजी चली जायेगी। पर धनंजय ऐसा नहीं समझता। हाथीचूंग और जाजोरी में भी पास-पास ही दो सरकारी अस्पताल हैं। उन सब जगहों में क्या उसने होमियोपैथी चिकित्सा नहीं की है। आज भी ग्रामीण वैद्य का मूल्य कम नहीं हुआ है। किंतु कंकड़ पड़ा हुआ पक्का रास्ता बरदोवा की तरफ से आगे बढ़ जाने के साथ-ही-साथ सोनाई के उत्तर पार के लोगों में अफीम खाने का प्रकोप बढ़ता गया। यह है ठेकेदारों की कीर्ति। धनंजय ने पाभचिला में एक शांति सेना दल का गठन किया है। वह लोग रात में दलंग घाट से जलमई गांव तक सोनाई पार में रात को बारी-बारी से पहरा देने लगे। एक दिन रात में एक छोटी-सी नाव पाभचिला के घाट पर आकर रुकी। सब सामान किनारे पर उतारा गया। थोड़ी देर बाद एक बैलगाड़ी भी वहां आकर रुकी। शांति सेना की नजर उस पर पड़ी। उन लोगों ने देखा, छह-सात भरे हुए बोरों के पास भोगराम खड़ा है। साथ दो ऊंचे पूरे जवान भी हैं। उनके हाथों में एक-एक लाठी। बल दी हुई मूंछें, देखने से ही पता चल जाता है कि वह मारपीट करने वाले लोग हैं। उनके चेहरे भी भयावह। मुंह पर तनिक भी कोमलता नहीं है। दोनों के मुंह जैसे फौलाद के बने हैं।

एक शांति सैनिक ने पूछा, "इन सब बोरों में क्या है ?"

भोगराम ने जवाब दिया, "विलायती मिट्टी ?"

"मिट्टी लाने को रात का ही समय मिला ? दिन में नहीं ला सके ?"

"हां, डिस्पैंसरी बनवाने का काम कुछ दिनों में ही समाप्त करना पड़ेगा। कल फिर रास्ते के काम के लिए जाना पड़ेगा। इसलिए अभी ला रहा हूं। अभी न लाने से कल राज-मिस्त्री खाली बैठे रहेंगे।"

"मीठी-मीठी बातों से काम नहीं चलेगा ठेकेदार बाबू। हमें ऐसा संदेह है कि इन बोरों में जरूर कुछ है। अभी आप इन्हें यहीं रखिए। कल परीक्षा होने के बाद ही आप ले जा सकेंगे।"

"कैसी बातें कर रहे हो ? पाभचिला में मिट्टी नहीं है क्या ? मैं सिमेंट के अंदर मिट्टी तो नहीं मिला लाया हू।"

"मिट्टी नहीं लायेंगे। यह बात हम भी जानते हैं ठेकेदार बाबू। आप इतने सीधे नहीं हैं। इसमें काली तरह की मिट्टी है, हमें यही संदेह है। यह बात कहने के साथ-ही-साथ दोनों दलों में तुमुल तर्क-वितर्क हुआ। यह तर्क-वितर्क हाथापायी में परिणत हो सकता है। इसलिए एक शांति सैनिक धनंजय को बुलाने गया। वह लोग भोगराम के आखिरी बार फुसलाने से भी पिघले नहीं। भोगराम ने एक शांति सैनिक को अलग बुलाकर कहा था, "आज रात सिमेंट 'ब्लाक' हो जाने से मेरा बड़ा 'लौस' होगा। कुछ रुपया ले लो।" इस तरह कहने से शांति सेना का संदेह फलीभूत हो गया।

धनंजय आया। उसने शांति सेना के प्रधान को अलग बुला कर पूछा, "तुम लोगों ने भोगराम का पौकेट चैक किया था ? उसके पास पिस्टल भी हो सकता है ?" नौजवान के नहीं कहने के साथ ही धनंजय ने दौड़ कर भोगराम को धक्का देकर गिरा दिया। साथ-ही-साथ शांति सेना के चार जवान भाड़े के दोनों गुंडों पर झपट पड़े। एक ने भैंस के सींग का 'पैंपा' (बांस का बना हुआ शहनाई जैसा छोटा-सा बाजा) बजा दिया। हाथापायी, मारा-मारी शुरू हो गयी। धनंजय और भोगराम के बीच कुश्तम-कुश्ती चलती रही। गांव के लोग दौड़-भाग कर घटनास्थल पर पहुंचे और देखा, धनंजय भोगराम की छाती पर बैठकर, उसकी जेब से पिस्टल निकाल कर, उसी की छाती का निशाना बना रहा है। उसने हांफते-हांफते कहा, "अब यदि तुझे गोली मार कर लाश सोनाई में बहा दूं तो ?"

भोगराम ने अस्फुट कंठ से कहा, "मुझे क्षमा कर दो धनंजय।"

धनंजय गरज उठा, "कापुरुष शर्म नहीं आती ? डरो नहीं। हमारे जैसे लोग नर-हत्या नहीं करते। कर भी नहीं सकते। पर तुम जैसे लोगों की ही हत्या करने को मन करता है। फिर भी कर नहीं पाते। तुम लोगों में साहस नहीं है। कापुरुष।"

गांव के लोगों ने फौरन भोगराम और दोनों गुंडों को बांध दिया। सुबह पुलिस को खबर दी गयी। आबकारी विभाग के लोग भी आए।

आभकारी विभाग ने पहले धनंजय से ही पूछा, "बस्तों की परीक्षा की थी ?"

धनंजय ने जवाब दिया, "नहीं की है।"

"तो फिर कब्जा क्यों किया ?"

"अफसर की बात का रंग-ढंग कुछ अलग ही था। भोगराम के पक्ष में है, ऐसा लगा। धनंजय समझ गया। उसने विनीत स्वर से कहा, "सरकार की गृह रक्ष-वाहिनी, और हमारी शांति सेना दोनों एक ही चीज हैं। हमारे नियम के अनु-सार, रात को गांव के अंदर से संदेहजनक व्यक्ति नहीं जा सकते। इन लोगों का भरी निशा में सीमेंट लाने का क्या अर्थ ? उसे नौका से लाये हैं। दो आद-मियों के हाथों में लाठी और एक के पास पिस्टल, क्यों ?"

अफसर ने कुछ नहीं कहा। जनता को बड़ा कौतूहल हुआ। सबने मांग की कि विलायती मिट्टी के बोरों की तलाशी सब के सामने ही ली जाये। थैलों की खाना तलाशी खत्म हो गयी। दो बोरों में दो अफीम की पोटलियां मिलीं। अफसर अफीम तोलना नहीं चाह रहा था। कहने लगा साथ में तोलने का कोई साधन नहीं है। किंतु लोग एक छोटी सी तराजू ले ही आये। अफीम तोली गयी। एक किलो अफीम प्राप्त हुई। भोगराम और साथ के दोनों गुंडे गिरफ्तार कर लिये गये। शहर में चालान किया गया। इस घटना ने सोनाईपरिया लोगों में चांचल्य की सृष्टि की। सब घटना की चर्चा करने लगे। धनंजय रूप-कथा का वीर योद्धा बन गया। उसी तरह भोगराम की बदनामी, हवा जैसी फैल गयी। लोगों ने पहले भी सुना था कि भोगराम काला व्यापार करता है। पर मुंह खोल कर कहने का साहस नहीं कर सके थे। कारण सोनाई पार में, भोगराम ही धनी व्यक्ति है। उसका जो प्रताप है उस से वह जिस किसी को भी नुक्सान पहुंचा सकता है। और गांव में बहुतों ने उससे कर्ज भी ले रखा है। पर अब लोग दबी जबान

बात करने लगे थे। उसके सामने तो बहुत से लोग सिर झुका कर ही बात करते थे। अब तो उसने कैसा महल बना लिया है। साधारण लोग तो उसके घर जाते हुए भी डरते हैं।

भोगराम सात दिन हाजत में रहा। मामले ने बुरी तरह मोड़ लिया था। अर्थात आईन के पन्नों में भोगराम के प्रति वृहस्पति की कृपा-दृष्टि हुई थी। पर गांव वालों के साक्षी देने के बाद ही उसकी अवस्था नाजुक हो गयी। उसे दो साल की कैद हो गयी। बाकी दो को छह महीने की। कारण विलायती मिट्टी के मालिक वह नहीं थे। भोगराम ही था। जेल जाने के पहले तरुलता और बच्चे उससे मिलने आये थे। उसकी आंखों में आंसू नहीं थे। मुंह पर दृढ़ता थी। जैसे पिंजरे में घिरा हुआ सिंह प्रतिहिंसा की दृष्टि से बाहर देखता है। तरुलता रो पड़ी थी।/कारण उसकी बातों और चेहरे पर भविष्य में अच्छा बनने की आशा नहीं थी। उसने जेल जाने के मुहूर्त में, बैंक की चैक बुक के कुछ पन्नों पर दस्तखत करके अपने मौसेरे भाई मुकुटा को देकर कहा था, "यह क्रास चैक दे रहा हूं। यह दो साल घर पर नजर रखना। रुपये-पैसे की या और कोई असुविधा होने से तोड़ी या सनत फुकन को बताने से ही सब कुछ हो जायेगा।"

यह सब घटना बासंती पूरी तरह न सुनने से भी, घटना का तात्पर्य उसे पता चल गया। भाभी के लिए उसे बहुत दुख हुआ। किंतु वह क्या नयी बात कह कर, तरुलता का मन शांत कर सकती है। तरुलता भी इतना अपमान, अपयश सहकर किस मुंह से दरगियाल आकर अपना दुखड़ा सुनायेगी। बासंती भी तरुलता को कैसे बुलाने मोरापुर जाये। भोगराम की बहन कहलाने के लिए उसे बुरा लगने लगा है। उसने सोचा इस जीवन में शायद फिर मां-बाप के घर जाने का कपाल में नहीं होगा। इतने दुख में भी धनंजय को याद करके, लोगों के मुख से उसकी प्रशंसा सुन कर उसके मन में बिजली चमक गयी। बासंती को फिर से चिंतित अवस्था में देखकर भागीरथ बूढ़ा भी फिर से चिंता में पड़ गया। एक दिन खुद ही कहा—

"बासंती, भाई के बारे में सोचना बेकार है। उसे अवस्था ने ही खराब कर दिया है। भाई के बुरा होने से क्या लोग बहिन को भी बुरा समझेंगे। यही तुम्हारा घर। हमीं तुम्हारे मां-बाप। हम बुरे होने से ही या हमारे तुम्हें बुरा समझने से ही तुम्हें बुरा लगना चाहिए।

बूढ़े की बात सुन कर बासंती का दिल शांत हो गया। बूढ़ा ही पृथ्वी पर सब से ज्ञानी व्यक्ति जैसे लगा। दुख नहीं करूंगी, बूढ़े को ऐसा वचन देकर, कौतूहल न दबाकर पूछा, "पिताजी मुझे समझ में न आने वाली एक बात समझा देंगे क्या ?"

"बोल बेटी ?"

"भोगराम मेरा बहुत ख्याल रखता था। मेरी शादी करके, मेरी जुदाई वाले दिन भी उसको बहुत दुख हुआ था। घर में उसका मन नहीं लग रहा था। मेरे विधवा होने से और मेरी संतान की मृत्यु पर उसे मेरे जैसा ही कष्ट हुआ था। उसका मन इतना कोमल ! किंतु वही भोगराम उसी समय में ऐसे बुरे काम क्यों करता रहा। इसका मतलब किसी भी आदमी पर विश्वास नहीं किया जा सकता ?"

प्रश्न का रंग-ढंग देखकर चार देश घूमता हुआ, चार बात जानने वाला भागीरथ कानूनगो भी मुश्किल में पड़ गया। सोचा, आजीवन दुख सहने की वजह से ही लड़की की समझ-बूझ की गहरायी बढ़ गयी है। वह मूल सत्य खोज रही है। किंतु इस जग में केवल 'परम पुरुष' के अलावा और क्या मूल सत्य हो सकता है। बूढ़े ने धीरे-धीरे जवाब दिया, "बेटी इस बूढ़ी उम्र में भी मैं तुम्हारे इस प्रश्न का ठीक से उत्तर नहीं दे पाऊंगा। मुझमें विद्या ही कितनी है। प्रभु पर भरोसा है, इसलिए कभी-कभी सोचता हूं कि जीवन में मैंने शायद ज्यादा गलतियां नहीं की हैं। पोथी-पत्रा पढ़ना बेटी। शास्त्र ही मन की समस्त शंका दूर कर सकता है। दुख भी दूर करता है।"

"पढ़ूंगी ! पर अभी मेरा मन बहुत बेचैन है।"

"बेटी, मैं समझता हूं हर आदमी के दो मन होते हैं। इसलिए सदा करीब रहने वाले मनुष्य का भी मन समझना कठिन हो जाता है। जमीन खोदकर कई किलोमीटर जाने से ही भूगर्भ में कोयला और तेल मिलता है, किंतु इंसान के मन की गहराई तक पहुंचना कठिन है। इंसान के एक साथ दो मन होने की वजह से ही एक आदमी का दूसरे के प्रति इतना कौतूहल होता है। मनुष्य दोष-गुण का समस्ती होता है। निर्मूल आदमी पाना मुश्किल है। बहुत बुरे आदमी में भी कुछ अच्छे गुण होते हैं। नर वधी आदमी को भी कभी साधारण बीमारी से एक बैल मरने से रोना आ सकता है। इसलिए मैं सोचता हूं, अच्छे गुणों पर, बुरे गुणों की

मात्रा चढ़ने से ही आदमी देश के लिए कलंक बन जाता है। वह खुद ही ध्वंस का पथ चुन लेता है। भोगराम के साथ भी वही हुआ। इसलिए बेटी, मन स्थिर करने के लिए प्रभु पर विश्वास चाहिए। वासना, लोभ और मोह की कोई सीमा नहीं है। इसी-लिए मनुष्य सुखी नहीं है। इसीलिए शास्त्र का कहना इतना अमूल्य। निष्काम भक्ति से आत्मा को भगवान के साथ विलीन करने से ही मनुष्य को प्रवृत शांति-लाभ हो सकता है। मन एक मुखी होता है। अहं भाव दूर होता है। जीभ को मुक्ति मिलती है। इसलिए ख्याल आता है, शंकर माधव जो देन हमें दे गये हैं, आज पांच सौ वर्ष के बाद भी असम का कोई नेता, या धर्मगुरु नहीं दे पाये हैं। उनकी अमोल सीख का महत्व भी समझे हैं या नहीं इस पर भी संदेह करने का स्थल है।"

यह सब भागीरथ ने अपने-आप को कहते हुए कहा। बासंती की उपस्थिति भूल कर एक पंक्ति दोहा गुनगुना उठे :

कर्मत विश्वास जार
हिया तो थकांत हरि
अतिशय दूर होत तार।
दूरत विदूर होंत
अहंकार थाकंतेपो
साक्षते कृष्ण को, पावे,
श्रवण कीर्तन धर्म जार।

(कर्म में जिस को विश्वास है, उसके अंतर में हरि निवास करते हैं। जिसके हृदय में अहंकार नहीं है। वही साक्षात कृष्ण को पाता है और कीर्तन सुनना ही उसका धर्म है।)

बासंती का मन ठंडा हुआ। अचानक घर तीर्थ जैसा लगने लगा। वह पिता के पास से हट गयी। सामने से बहती हुई सोनाई को एक टक देखती रही। शीत-काल की सोनाई की गति धीर। उसमें पहले जैसी उच्छृंखलता नहीं है। पानी फटिक की धार जैसा। यह भी सोनाई का एक नया रूप, इस रूप में महिमा है, यह तो जैसे सोनाई का निष्प्रिय ज्ञान-वृद्ध रूप। माघ महीने का जमा देने वाला जाड़ा और पार के सूखे पेड़ भी सोनाई के इस रूप को तनिक भी म्लान नहीं कर पाये हैं।

एक दिन भनिता ने कहा, "तू इस तरह सफेद कपड़े पहने रहती है. इसलिए तेरे पिताजी मन में दुखी होते हैं। कह रहे हैं कि ऐसे वेश में रहने से तेरा शौक बढ़ेगा। सुख-दुख का मूल तो मन है। ऐसी पोशाक से तेरा मन पहले से खराब होगा। तू पारुल की तरह कपड़े पहनेगी तभी हमें संतोष मिलेगा। नौजवान लड़की का इस तरह का कपड़े पहनना हम कैसे सहन कर सकते हैं ?"

दूसरे ही दिन से बासंती छोटे फूल का 'रिहा' (असम का ऊपरी शरीर पर लेने वाला वस्त्र) और किनारी लगा हुआ मेखला पहनने लगी। पारुल की तरह बाल बनाने लगी। टीका न लगाना ही विधवा होने का चिह्न रह गया।

मार्च के पहले हफ्ते में भागीरथ कानूनगो पेंशन के रुपये लेने शहर गये। उन रुपयों से 'श्री शंकर 'वाक्यामृत' नाम की प्रकांड छपी हुई पोथी और एक 'रत्नावली' खरीद लाये। एक 'नामघोषा' (असम के संत कवि श्री माधव देव का गीति काव्य) घर में है ही। साथ में एक असमिया अभिधान भी खरीद लाये। दोनों पुस्तकें और अभिधान बासंती को दीं। धीरे-धीरे बासंती के मुख पर प्रसन्नता आने लगी। घर में कोई भी उसको किसी काम के लिए नहीं कहता। दो वेला खाली समय पुस्तक पढ़ने के अलावा विधवा होने से पहले दिनों की तरह उत्साह से घर के कामों में हाथ बंटाने लगी। बासंती की यह अवस्था देखकर घर के सब लोगों को भारी प्रसन्नता होने लगी। टूटने वाला घर जैसे पुनर्जीवित हो गया। बासंती पारुल लोगों के साथ गांव में घूमती भी है। 'भाउना' और 'सुबाह' धार्मिक सभा में भी जाती है।

उसने एक दिन आकर तरुलता की भी खबर ली। पाभचिला वाली मौसी के पास भी जाती है। पर मन की अवस्था एक ही तरह की रहती है।

दिन के बाद रात आती है। बासंती के लिए अर्थविहीन तारीख आगे बढ़ती रहती है। तारीख आगे बढ़कर महीना शेष कर देती है। नूतन माह नूतन महिमा दिखाता है। छह ऋतुओं में सोनाईपरिया लोगों को पौनः पुनिक अभय चिर नूतन अनंत उत्साह देती हैं। कई ऋतु में शादी होती है, फिर कोई दूसरी ऋतु में घर की बहू पहली संतान का मुख देखती है। किसी के हृदय में शायद प्यार के अंकुर पैदा होते हैं। सुख का भविष्य खोजना, अकेली अवस्था में निराशा से विचलित होना और यौवन की स्वाभाविक गति को, सामाजिक नीति ने रुद्ध किया हुआ, बासंती की देह मन को शांत करने के लिए, उसे विकल्प पर ही भरोसा

करना पड़ा। पारुल और पुतली के साथ मिल-जुलकर, भनिता और भागीरथ की भक्ति करके और उन लोगों का प्यार-मोहब्बत पाकर, अपने को गृहस्थी के कामों में व्यस्त रखकर और शास्त्र में संधानि मन लगाकर वह भी सुखी होना चाहती है।

दो साल बीत गये। दो सालों में दो फागुन, दो बारिशें, और कंपकंपा देनेवाला शीतकाल। बहुत से दिन जवान औरतों के लिए बड़े लंबे होते हैं। बासंती के लिए तो सभी दिन ज्यादा लंबे हो जाते हैं। गतानुगति जीवन उसे तंग करता है। प्यार, मोहब्बत, लोगों के मुंह से प्रशंसा और उससे भी बढ़कर पुस्तक पढ़कर उसको समझ न आने वाले तत्व से भी वह बेजार आ चुकी है। ओस की बूंदों से मुक्ता नहीं गिरते, दिन-ब-दिन वेदना वाष्प होती है, पर उषा की किरणों से भविष्य के रंग नहीं। सूर्यास्त के पीले बादल, उसकी मन की वासना में, देह की तृप्ती में, और फिर रात की निस्तब्ध रात की गोपन आकांक्षा में 'हेंगुल हायतल' (ग्रामीण कुटीर शिल्प में तैयार करके अनेक रंग) के रंग नहीं लगते।

बासंती का मन धीरे-धीरे अस्थिर हो जाता है। वह फिर से सफेद थान का कपड़ा पहनने लगी। घर के काम-काज भी छोड़ दिये। मन होनेसे ही पोथी पढ़ती, पर पहले की तरह नहीं। 'नाम घर' में 'भाऊना' देखने भी नहीं जाती। वहां जाने से उसे अपने दुख की उपलब्धि ज्यादा होती है। 'आई नाम' (स्त्रियों का देवी-वंदना में गाया जाने वाला गीत) में कीर्तन का पद ही विभिन्न सुर में गाया जाता है। एक-दो पद की पंक्ति पढ़कर उसी पर चर्चा होती है। पुत्र शोक में यशोदा जननी की विनती में प्यारी मां की आंखें भीग जाती हैं। गोपियों के प्रेम रस से समवेत 'गोपियों' के मन की स्थिरता हिल जाती है। यह सब देख-सुनकर बासंती का शोक और प्रबल हो उठता है।

समय बीतने के साथ-साथ बासंती ने बाहर निकलना बंद कर दिया। दहलीज में बैठकर सोनाई को देखकर ही ध्यान-मग्न रहती है। किसी के साथ बात नहीं करती। भनिता और भागीरथ चिंता में पड़ जाते हैं। सोनाई की गोद में वर्षा ऋतु उतर आती है। प्रकृति मुखर हो जाती है। सोनाईपरिया छोटी-सी 'बाली मांही' चिड़िया भी साथी पाकर मन के उत्साह में उड़ती-फिरती है शीतल पानी में डुबकी लगाकर शरीर ठंडा कर लेती है। मछलियां भी अंडे देती हैं। नर मछली के बदन पर चर्बी चढ़ जाती है। सोनाई यौवन पाती है। बासंती के दो कूल भरे

यौवन को धक्का लगता है। सोनाईपरिया प्रकृति और सोनाईपरिया लोग उसे भूल जाते हैं। वह समझती है कि श्मशान के तुच्छ तृण तरु का भी अपना अस्तित्व है, पर उसका ही नहीं है। वह जीवन के अस्तित्व के दर्प से ही क्यों नहीं जी सकती ? अपने प्रति दूसरे की उदासीन दृष्टि उससे सहन नहीं होती। वह पथ खोजती है। गृह में रहकर भी वह निष्ठुर वैराग्य का ही पथ देख पाती है।

उन्नीस

दो सालों में बहुत परिवर्तन हो गये। सोनाई पार का कंकड़ वाला रास्ता ढींग बाजार तक पहुंच गया। दैनिक दो सर्विस बस चलने लगी हैं। लोगों के मन भी जटिल हो गये हैं। लोग स्वार्थी बन गये हैं। बहू-बेटियों की नयी तरह की बद-नामी होने लगी है। पंचायती राज हुआ। पंचायत के मेंबर सभापति चुनने के लिए, गांवों में गुटबंदी और झगड़े बढ़े। मार-पीट हुई। गांव में हिंसा-द्वेष से गुट-बंदी बढ़ गयी। उत्तर पार में भी दक्षिण पार की तरह फूट पड़ गयी। अच्छे लोगों की कही बातें लोग नहीं मानने लगे।

पाभचिला के सरकारी चिकित्सालय में एम. बी. बी. एस. डाक्टर आ गये। सोनाई का मछली पकड़ने वाला स्थल-समूह सरकार ने हजारों रुपये पर नीलाम कर दिया। दूसरे स्थान से आये हुए नये कौशल से मछली पकड़ने वाले लोगों ने सोनाईपरिया मछुओं का जीवन-निर्वाह का पेशा छीन लिया।

सोनाईपरिया लोगों की बातचीत में भी फर्क आ गया। काम का ढंग भी कुछ अलग हो गया। शहर के समाचार दैनिक आने लगे। गल्ले की दुकान के सामने, लाइब्रेरी के सामने, अथवा स्कूल घर के आंगन में लोग मिल-जुलकर दैनिक अखबार पढ़ने लगे। एम. एल. ए. और मन्त्रियों के नाम सब कोई जानने लगे। सोनाईपरिया में बहुतों को राजनीति के दाव-पेंच समझ आने लगे। प्रचलित भाषा में कहा जाय, सोनाई पार में 'पालिटिक्स' आ गया। भागीरथ बूढ़ा पेंशन-भोगियों की एक संस्था का सभापति बना। इन्हीं दो सालों के अंदर पारुल और पुतली को ब्याह दिया गया। अब घर में केवल बूढ़ा-बूढ़ी और बासंती ही रहते हैं। मथुरा का भाई नंदेश्वर बचपन से ही शहर में पढ़ा। उसने ओवरसियरी पास करके

एक और जिले में नौकरी कर ली। वह भी अलग ही रहा। उसे भविष्य में सोनाईपरिया बनने की जरूरत नहीं पड़ेगी।

जेल से निकलकर भोगराम ने अपने बड़े चमकते घर को हर महीने कई सौ रुपयों में हाल ही में स्थापित समूह उन्नयन केंद्र को भाड़े पर दे दिया। खुद शहर में एक घर बना लिया। अपने पैसों से उसने शहर में एक राइस मिल खरीदा और एक कपड़े की दुकान भी खोल ली। तरुलता को भी वह शहर ले गया। उन लोगों ने सोनाईपरिया जीवन त्याग दिया।

चारों तरफ के इस परिवर्तन के बारे में बासंती ने दूसरों के मुंह से ही सुना। ननदों की शादी के बाद पड़ौस के लोग भी उसको देख नहीं पाते। भागीरथ कानूनगो के घर का बुरा हाल हो गया। बासंती का रंग पीला पड़ गया। उसकी खूबसूरत आंखों की ज्योति व्यथा के धुएं से ढक गयी। पत्थर में खुदी हुई मूर्ति की तरह उसकी अपरूप देह जैसे किसी निष्ठुर 'काले पहाड़' (किवदंती का निष्ठुर लुटेरा) ने कुत्सित कर दी हो। बासंती दो साल इसी तरह रही। ऐसे ही रहने का उसे अभ्यास-सा हो गया। अपना दुख कष्ट दूसरों को न बताकर अपने आप सहन कर दूसरों की हमदर्दी की पात्री न होना ही जीवन की परम साधना समझने लगी। दुर्योग ने उसे सम्मान-ज्ञान प्रदान किया। किंतु एक दिन अचानक सब उलट-फेर हो गया। मनबड़ी नाम की एक औरत की वजह से ही बासंती में एक नयी आकांक्षा जाग उठी। उसका मन सजीव हो उठा। मिट्टी की गोद में फला-फूला रक्त-मांस की औरत का मन···।

बीस

दरगियाल से करीब दो किलोमीटर की दूरी में दोइचकला में मनबड़ी का घर। चार बच्चों की मां। मर्द घर में बीमार पड़ा रहता है। घर के पालन-पोषण का भार मनबड़ी पर ही है। पहले वह उत्तम अधिकार के घर में धान-चावल कूटती थी। बर्तन धोती थी। अपने घर से अधिकार का घर दूर होने की वजह से वहां का काम उसे छोड़ना पड़ा।

पारुल और पुतली की शादी के बाद भागीरथ कानूनगो के घर का काम भनिता

अकेली संभाल नहीं पायी । बासंती तो इच्छा रहने से काम करती वर्ना कुछ भी नहीं छूती । इसलिए कानूनगो ने मनबड़ी का जुगाड़ किया । मनबड़ी को तनख्वाह मिलती है । अधिकार के घर जो काम किया करती थी यहां भी वही सब करती है । पर धान चावल नहीं कूटती । दो गौओं का दूध निकालती है, गोहाली साफ करती है और बर्तन साफ करती है । समय मिलने से साग-सब्जी भी काट देती है । सुबह सूर्य की पहली किरण के साथ ही वह आ जाती है, दोपहर का खाना कानूनगो के घर में ही खाती है और सूरज डूबने के पहले ही दोइचकला वापस चली जाती है । कानूनगो और भनिता उसे बहुत पसंद करते हैं । वह जो चाहती है उसे ही पाती है । उसके घर में आने के बाद से ही बासंती के मुंह पर हंसी की झलक दिखाई पड़ने लगी । मनबड़ी ने उसके मन की बहुत-सी शून्यता पूर्ण कर दी ।

मनबड़ी बासंती को अपने गांव की बातें बताती है । मनबड़ी कम नहीं है । एक साधारण-सी बात भी उसकी जबान पर आकर पाग लेती है और वह कितनी बातें करती है । हर दिन कोई-न-कोई घटना उसके पास बताने को रहती ही है । पर बासंती के प्रश्न होते ही कुछ अजीब किस्म के—"अच्छा मनबड़ी, सोनाई के ऊपर मचान बनाकर, कांटा डालकर लोग अब भी मछली पकड़ते हैं क्या ? वर्षा का आकाश मेघ से काला हो जाने से सोनाई में मछली उछलती है क्या ? उस वक्त दलओपंगा जंगल में चिड़िया चहचहाती है क्या ? बड़े खुले मैदान में ग्वाले भैंसों की पीठ पर बैठकर अभी भी 'बन घोषा' गाते हैं क्या ? 'कातीबिहू' में फसल देखने को आयी हुई लड़कियों को छीना-झपटी करके भगा ले जाते हैं क्या ?"— इत्यादि । पर मनबड़ी इन सब प्रश्नों की गूढ़ता समझ नहीं पाती । यह सब तो उसके गांव के आसपास घटता ही रहता है । पूछने की भला क्या बात है !

बासंती और मनबड़ी में बातचीत होती है गोशाला में और खलिहान घर की खुली जगह में । धूप होने से ही यह व्यवस्था । साधारणतया उन दोनों के बीच गुप्त आलोचना होती है कोने वाली कोठरी में । इसी कोठरी में पहले कुछ सूत कातने का सामान, टूटा हुआ खोल, बड़ी-बड़ी सुखायी हुई लौकी रखी जाती थी । अब वहां यह सब कुछ नहीं है । अब तो वहां कई 'नोगाधारी' (एक किस्म की चटाई) और तीन टूटे पैर वाले पीढ़े रखे हैं । इसी कोठरी में इन दोनों औरतों की बातचीत ज्यादा अंतरंग हो जाती है । पहले ही दिन दोनों इसी कोठरी में

जाते ही एक-दूसरे के करीब आ गयीं। एक ने दूसरे को अच्छी तरह से पहचान लिया।

मनबड़ी ने कहा, "बहन आपको ईश्वर ने अच्छा 'वंचित' किया। आप इस तरह कैसे दिन बिता रही हैं ?"

"मत पूछो, बाई। अब तो ऐसे ही रहने की आदत हो गयी है। मनबड़ी तेरे साथ बात करना तभी अच्छा लगेगा यदि तू मुझ से मेरी कोई बात न पूछे।"

उस दिन से मनबड़ी ने ऐसी कोई भी बात नहीं पूछी। बासंती के बारे में उसने इधर-उधर की बातें दूसरों के मुंह से सुनी हैं। बासंती के अपने मुंह से कुछ नहीं सुन पायी है। बासंती बड़ी ही जटिल लड़की है अवश्य, पर किसी तरह भी खराब नहीं है। उसकी रुचि भी स्वतंत्र है। एक दिन कहेगी, "मनबड़ी, कठनातली से मुट्ठीभर शेफाली फूल ले आना।" मनबड़ी पूछेगी, "क्यों ?" बासंती कहेगी, "रात को नींद न आने से उसकी खुशबू से उजागर रहना अच्छा लगेगा।" दूसरे दिन कहेगी, "मनबड़ी बाई, याद आ रहा है, सोनाई पार में संभव फुकन के घाट के पास एक बड़ा-सा कदंब का पेड़ है। अब तो शायद पेड़ के नीचे छोटे-छोटे कई पौधे निकल आये होंगे। वहां से एक पौधा लाकर हमारी आम बारी के पीछे रोप देना।" मनबड़ी कहेगी, "निश्चय" और वह कदंब पुली रोप देगी। कभी कोई दिन बासंती कहेगी, "मनबड़ी, कल रात को मैं चुपके से उठकर खलिहान पहुंच गयी थी। बहुत देर 'खेर' पर ही लेटी रही। एकदम चटक चांदनी। 'खेर' का घर भी कैसा लग रहा था !" मनबड़ी भी चालाक है। ऐसी बात सुन कर वह होंठ दबा कर हंसेगी और पूछेगी, "खोबा खुबुनी (असम की एक लोक-कथा के नायक-नायिका···) के रात में सोने का घर जैसा क्या ?" बासंती उत्तर देगी, "मरने वाली, तुझे और कोई दूसरी उपमा नहीं मिली ?"

शरद काल। आश्विन मास। दरगियाल गांव में भारी उथल-पुथल। आज से रास यात्रा के लिए अखाड़ा शुरू हुआ है। आजकल सांझ को कानूनगो घर में नहीं रहते। बासंती को ऐसा ख्याल हो रहा है, खोल, ताल और गीत के पद शाम का गहरा अंधेरा दूर कर रहे हैं (नाम घर ज्यादा दूर नहीं है। थाप, कांस, खोल-मृदंग का शब्द और गीत के पद घर में ही कान में पड़ते हैं)। गीत-पद कैसे मन-प्राण मताल कर देते हैं ! तिलक सूत्रधारी के अर्थ भटिमा (व्याख्यान) भी प्राण बेचैन कर देते हैं। "बीरंद विपिन बिहार विशारद इंदु परकाशी··· ।"

उसके बाद ही खोल के बोल, "रिक्षा थेई थेला रिकति, रित्ता थेई थेई थेनाखिति, थेना थेई तत्ता खिति…"

इसी शरद में मनबड़ी और बासंती एक-दूसरे के ज्यादा नजदीक हो गयीं। बासंती ने दुख से पूछा, "मनबड़ी, तू जब सांझ के बाद चांद के साथ-ही-साथ दोइचकला आती है, तब तेरा मन चमक उठता है क्या ?"

"यह क्या पूछ रही हो। अब हमारे वह दिन नहीं रहे हैं बेटी। चार की मां बन चुकी हूं। रास्ते में जाते हुए बारह कुड़ी चिंता। बाल-बच्चों ने खाया या नहीं, कलीमन का दर्द उतरा या नहीं, यही सब सोचने में ही पथ का अंत हो जाता है।"

"नहीं, तू झूठ बोल रही है। यह शरद काल है। घर में अंदर रहते हुए भी अनुभव हो रहा है कि पेड़ फल-फूल के भार से झुक गये हैं। सोनाई पार के 'चापरि' (नदी पार का ऊंचा स्थान।) में शायद चकवा-चकवी चुग रहे हैं। माधव देव ने क्या यूं ही यह पंक्ति, भनीता के लिए रची थी, जलर यतेक मल येहेन शरत काले स्वाभावते निर्मल होवय।" (जल में जितना मैल होता है शरद काल में वह भी निर्मल हो जाता है।)

"हम इतनी विद्या वाली औरतें नहीं हैं बेटी।"

शरद काल में सोनाईपरिया गांव शरद के फल की तरह ही सरस हो गया है, धान के पठार और इंसानों के मन भी। सोनाई पार में 'गंगा चिलनी' अपने परों से जैसे प्रणय की वार्ता देती जा रही है। बासंती का अंतर भी भर उठा है। बाहर की छोटी-सी दुनिया में मन देने-लेने का ज्वार उठा है। इसीलिए हर दो-तीन दिन बाद ही मनबड़ी बासंती को नयी-नयी प्रेम कहानियां सुनाती है: यदु सातोला की लड़की चंपा के एक हाथ का कंगन सोनाई पार में पाया गया था। कहते हैं, वह सुधना के साथ गोपन में नदी के तीर पर बैठी थी। वह लोग इतने मशगूल थे कि कंगन खुल जाने का पता ही नहीं लगा।

'बाप के अखाड़े में रहते समय मां रसोई में थी। ऐसे ही समय धर्मेबर घर आया। मनमती ने पास ही पुरुष की गंध पायी। किसी के मुंह से आवाज नहीं। पर जब वह घर वापस आयी तो सबकी नजरें पड़ीं। उसके कपड़ों पर कई जगह सिंदूर के दाग थे।'

'जूरन मेधा की विधवा बहू को एक साल का बच्चा लेकर किसी के साथ भाग

जाना चाहिए था क्या ? जिसके साथ वह गयी है, वह…'

"कल रात सुंदर के घर की बहू के कमरे में 'पोला' (बांस का बना बेडा) काट कर चोर घुस आया था। बेटा आजकल 'पाम' (खेत) में रहता है। सुना है, चोर ने गठरी कपड़े-वपड़े कुछ नहीं लिए। यह किस किस्म का चोर है। असली बात क्या है ?'

'मेंढक का ब्याह ! बहू अपने कमरे का किवाड़ बंद नहीं करती। कोई एक, कौन होगा—हमारा 'बडसाज' प्रायः ही आते हैं। कल घर के दूसरे लोगों ने खटपट की आवाज सुनी। वह फौरन भाग गया।'

इस तरह की अलग-अलग सोनाईपरिया कहानियां सुन कर बासंती को तृप्ति मिलती है। आखिर में मनबड़ी ने जो कहानी सुनाई उसने बासंती को जरा भी तृप्ति नहीं दी। इस कहानी के युवा-युवती ने उसके मन में रक्त-मांस का रूप ले लिया। उन लोगों के लिए उसके मन में गहरी सहानुभूति हुई।

"दोइचकला के मगू बायन की लड़की का नाम कांचनमती। उसका रूप सोने पर सुहागा। सारे दोइचकला में उसी के लिए गड़बड़ मची है।"

"कैसे ?"

"इसमें बहुत-सी बातें हैं बेटी। मौसम की भविष्यवाणी की जा सकती है। सोनाई में निमिष में डुबकी लगाने वाले 'शिहू' (पानी में रहने वाला जानवर) को भी फौरन पहचाना जा सकता है, किंतु जवान लड़की क्या चीज है, नहीं पहचानी जा सकती।"

"आखिर हुआ क्या ?"

"बायन के घर में आधीयार खेती (फसल कटने के बाद उस आदमी का आधी फसल पर हक होता है) मजदूर बाजू की वजह से ही सारी गड़बड़।"

पहले दिन मनबड़ी ने इतना ही बताया कि खेत मजदूर 'बाजू-हीरा', मगू बायन के हाथों-हाथ पकड़ा गया। पिछले दो सालों से बाजू उनके घर में मजदूरी कर रहा है। लड़का बड़ा सीधा। अच्छा खेतीहार। वह बायन का प्रिय पात्र हो गया था। जैसे बायन का दाहिना हाथ। बाजू की वजह से ही बायन के घर के खेत की फसल सालाना बढ़ती जा रही है। पिछले साल गुड़ की भेली प्रायः चार कुड़ी। किंतु हित ही विपरीत हुआ। बाजू और कांचनमती बुरी तरह से फंस चुके थे। एक दिन दोपहर मगू बायन ने दलंग घाट के बाजार से आकर देखा कि

बाजू कांचनमती के कमरे से बाहर निकल रहा है। बायन गुस्से से कांपने लगा। वह लड़की के कमरे में क्यों जायेगा ? बाजू के जाने के बाद बायन ने बीवी से कांचनमती के बारे में पूछताछ की। वह बिस्तर पर चित्त होकर पड़ी है। सो रही है। दोपहर होने के पहले ही लड़की को क्यों नींद आ रही है, इसका पता मां को नहीं लगा किंतु मां-बाप को ही बात का पता देर से लगा। गांव के लोग तो पहले से ही कानाफूसी कर रहे थे।

मनबड़ी ने कहा, "कांचनमती के सोने के कमरे में जाने से ही दिल कैसा-कैसा हो जाता है। आपकी उम्र की औरत का तो उस कमरे में जाते ही शरीर हड़-बड़ा उठेगा।"

बासंती ने व्यग्र होकर पूछा, "तू क्या बायन के घर जाती है ?"

मनबड़ी ने जवाब दिया, "अकसर ही जाती हूं। पर उसका कमरा एक अलग ही तरह से सजा हुआ है। दीवारों पर रंग-बिरंगे फोटो टंगे हुए हैं। देखने से ही शर्म आती है। कहते हैं यह सब फोटो अंग्रेजी किताबों में रहती हैं और यह सब अंग्रेजी किताबें कहां की हैं जानती हो ? बिरेन दुकानदार के माल बेचने के लिए लायी हुई रद्दी कागजों के बीच ही ऐसी एक-आध किताब निकल आती है। बाजू इन्हीं किताबों में से फाड़ कर उसे देता है। उसके कमरे में 'कपौ' [cactus कैक्टस की तरह का एक फूल] फूल भी रहता ही है। आजकल तो बकुल, जूही की खुशबू से कमरा महकता रहता है।"

"अच्छा, अब यह सब छोड़ो और बताओ मगू बायन ने बाजू को क्या कहा ?"

"उस दिन तो कुछ नहीं कहा। दूसरे दिन उसे सिर्फ सावधान ही नहीं कर दिया, बल्कि खेत का हिस्सा न देकर उसे भगा दिया।"

बासंती ने एक लंबी-सी सांस ली।

कई दिन मनबड़ी ने कांचनमती की बात नहीं की। ग्यारह दिन के बाद कहा कि कांचनमती ने बाप से मार खायी है। मां ने भी ऐसा डांटा कि सांस ही बंद हो जाय। कांचन को आजकल अलग कमरे में नहीं सोने दिया जाता। मां के पास ही सोना पड़ता है। रात में मां हाथ लगा कर देख लेती है कि लड़की है या नहीं।

बासंती को बहुत बुरा लगा। पूछा, "अच्छा मनबड़ी बाई, बाजू यदि सुंदर लड़का है तो कांचनमती को उसी को दे क्यों नहीं देते ?"

मनबड़ी फौरन बोल पड़ी, "अच्छी बात कह रही हैं आप। बायन शुद्ध

'कलिता' (उत्तर भारत की कायस्थों की तरह) जात है। उसके अलावा मगू बायन गंधार बायन जैसे नामी आदमी का पुत्र। और बाजू 'हीरा' (निम्न जात का आदमी) जात का। एक जमाने में उसकी मां मिट्टी के बर्तन बेचती फिरती थी। 'हीरे' के लड़के के साथ यदि लड़की घर बसा ले तो बायन वंश का सम्मान कहां रहा। हमारे जैसे लोगों की हद तक तो ठीक है। 'कोंच' और 'कलिता' के बीच फर्क कितना ? बाजू एक बहता हुआ लड़का। जमीन-जायदाद कुछ भी तो नहीं है। सिर्फ सोनाई पार में एक झोंपड़ी है।"

मनबड़ी का बाजू के बारे में इस तरह कहना बासंती को पसंद नहीं आया। उसके दिल को आघात पहुंचा। उसने कहा, "अच्छा बाई, क्या तुझे इस जोड़ी के लिए थोड़ी भी हमदर्दी नहीं है ?"

मनबड़ी चुप ही रही।

एक पखवाड़े के बाद। मनबड़ी की सोनाई पार बाजू से भेंट हुई थी। उसने कहा, "इस बार वह एक 'पूरा' जमीन 'आधी' में लेकर खेती करेगा। उसने उससे और ज्यादा पूछताछ नहीं की। किंतु दो दिनों में ही फिर गड़बड़ी हो गयी। जब कांचनमती के दोनों कंगन नहीं दिखायी दिये, तो मां ने इसके बारे में पूछा। वह चुप रही। उस पर मार पड़ी। वह मां-बाप के लिए एक भारी समस्या बन गयी। उस दिन से उसकी अवस्था तो और भी दुख-जनक हो गयी है। उसका कमरा बाहर से बंद कर दिया गया। वह सूख कर कांटा होती गयी। मां-बाप को ख्याल आया कि इस तरह से बंद रखने के पहले ही वह बाजू से मिली होगी। दोनों कंगन निश्चय ही उसने बाजू को दिये हैं।"

"बाजू को कंगन क्यों देने पड़े मनबड़ी ?"

"प्रीत की रीत समझना बड़ा कठिन है बेटी। खेत का हिस्सा न देने की वजह से बाजू की अवस्था हीन हो गयी थी। वह कहां से खाता। अब अगर आधी खेती करेगा तो भी फसल बाद में ही होगी। उसका बुरा हाल है। इस महीने में वह दो बार शहर जा चुका है। एक बार मुझे दलंग घाट पर मिला, दूसरी बार हाथी चूग में। उसका इस तरह शहर जाना देखकर लगता है वह कंगन बेचकर ही तर गया है। सोनाई के हर साल खाद लाने से ही क्या होगा। यहां भी धान का दाम है, क्विंटल में बत्तीस रुपया। इन मैंमनसिगिया लोगों के पटसन की खेती करने की वजह से ही, शायद धान की कीमत चढ़ी है। यह लोग चढ़े हुए दामों पर

पटसन बेचकर धान खरीद कर खाते हैं।"

मनबड़ी ने यह सब बातें दुखी होकर कही थीं। सोनाई के पार क्या था और अब क्या हो गया। एक समय था, जब दूध यूं ही मिल जाता था। अब तो दूध देवताओं की चीज बनकर रह गया है। अब यहां कुटा धान ऐसे एक किलो भी नहीं मिलता। सोनाई पर पुल बन गया है। पक्के रास्ते पर मोटरें-बसें चलने लगी हैं। बहुतों ने उन्नति होने की बात बड़े गर्व से कही है। किंतु क्या सही मानों में उन्नति हुई है। लोगों की संख्या तो बढ़ गयी है किंतु खेती की जमीन नहीं बढ़ी। पहले की तरह अब किसान व्यापारी का धान नहीं बेच सकते। जिस घर के लोग धान बेच सकते हैं। उसी घर के लोगोंका दूसरा भी रोजगार है। दोइचकला का बायन सालाना सौ क्विटलधानबेचता है। उधर शहर में उसका लड़का नाजीर भी लगा हुआ है। जमीन के अभाव में अब सोनाईपरिया लोगों को अन्य स्थानों पर जाना पड़ रहा है। कुछ लोग काकी जाकर बस गये हैं। एक साथ ग्यारह खोल बजाने वाले, बांसुरी में फूंक मार कर लड़की बाउल बनाने वाले, खूबसूरत नौजवान भी अब शहर में चपरासी पियन लग गये हैं।

"तो तू क्या समझती है? क्या वह लोग इसी तरह ही रहेंगे। इतना दुख वह लोग कैसे सहन करेंगे। समझी, मनबड़ी मनुष्य के जीवन में मौका एक ही बार आता है। उन लोगों का और देर करना उचित नहीं होगा।"

इतना कह कर बासंती ईश-ईश करने लगी। उसकी आंखें सजल हो गयीं। मनबड़ी को ख्याल आया, कांचनमती और बाजू मौका देखकर काम करने की वजह से ही उन्हें भी इसी तरह रहना पड़ेगा जैसे बासंती को सारा जीवन पिंजरे के पक्षी की तरह रहना पड़ा।

"बासंती, मैंने बहुत सोच समझकर देखा है, कांचनमती को अब इस जन्म में और शांति नहीं मिलेगी। वह यमकाल जैसे मां-बाप के हाथों में पड़ी है।"

"मैं तो विश्वास नहीं कर सकती मनबड़ी। वह लोग जरूर किसी-न-किसी दिन भाग ही जायेंगे। मैंने तेरे ही मुंह से यह सब बातें सुनी जरूर हैं पर मैं तुमसे ज्यादा समझती हूं।"

दूसरे एक दिन मनबड़ी ने आकर बताया कि बाजू कर्ज के लिए रुपया ढूंढ़ता फिर रहा है। कहता है एक साल बाद वापस कर देगा। उत्तरी असम में कई नये-नये स्थानों के भूगर्भ में तेल पाया गया है। उन सब जगहों पर हजारों मजदूर

काम कर रहे हैं। वह लोग तेल निकालने वाली नाली जमीन में बैठा देते हैं। मकान वगैरा बनवाने के लिए भी बहुत लोगों की जरूरत है। दिन हाजरा करने से भी पांच-छह रुपया मजदूरी मिल जाती है। शहर जाकर बाजू ने मालूम किया है कि उसे दिन हाजरा का काम आसानी से मिल जायेगा। किंतु वहां जाने के लिए खर्च चाहिए। और उसको कोई कर्ज नहीं देता।

यह सुनकर बासंती को बहुत अच्छा लगा उसने कहा, "अब समझ गयी मनबड़ी। वह लोग अब जरूर ही भाग जायेंगे। वह उत्तरी असम जाने से उसको भी साथ लेकर जायेगा। मुझे इस बात का पक्का भरोसा है।"

मनबड़ी ने जवाब दिया, "भला मुझे इन सब बातों का कैसे पता चले। हम भी तो किसी दिन प्यार के वश होकर किसी के साथ चले आये थे। यह सब दाव-पेंच की समझ नहीं थी। आज भी आव-भाव नहीं मालूम।"

एक सप्ताह के बाद मनबड़ी ने आकर बताया कि चाबुकधरा के लोग कांचनमती को अंगूठी पहना गये हैं। और वैसाख की चार तारीख को शादी होने वाली है। यह सुनकर भी बासंती हताश नहीं हुई। उसने कहा, "मेरी बात याद रखना मनबड़ी, वह लोग जरूर भागेंगे। वह सिर्फ मौके की ताक में हैं।"

"कैसे पता लगा?"

"कांचनमती दूसरे की अंगूठी पहनकर हंसमुख रहेगी। तो मां-बाप समझेंगे कि उसने बाजू को त्याग दिया है। और वह ज्यादा ख्याल नहीं रखेंगे। उनका संदेह भी दूर हो जायेगा। उसके ऊपर कड़ी नजर रखने में ढील देंगे। शादी होकर जाने वाली लड़की पर मां-बाप का प्यार ज्यादा हो जाता है। इसी सुविधा में वह भाग जायेंगे। अगर वह लोग इस तरह के मौके का लाभ नहीं उठायेंगे तो सारी जिंदगी पछतायेंगे। मेरी जैसी अवस्था हो जायेगी।"

यह सब बातें बासंती ऐसे आवेग से कह रही थी जैसे किसी अनजान देवता के सामने ही अपने भाव व्यक्त कर रही हो। मनबड़ी की उपस्थिति भी भूल गयी और अपने बारे में किसी को न बताने वाली बात भी अनजाने उसके मुंह से निकल पड़ी थी। उस मुहुर्त में वह चौंक उठी। होंठ सूख गये थे। आंखें बंद कर ली थीं। मनबड़ी उसकी यह करुण हालत देखकर हतवाक हो गयी थी और बासंती के जीवन का आभास पा लिया था। उसका मन बासंती से बहुत कुछ पूछने को कर रहा था। पर पूछ नहीं पायी। उसका दिल तोड़ दुख और फिर ऐसी हालत में

और बातें पूछकर उसे दुख देना, कटे हुए घाव पर नमक छिड़कने की तरह होगा। बासंती शांति से रहे। परम पुरुष उसे कृपा-दृष्टि से देखें। दुख सह-सहकर अचानक उसे शांति का पथ मिल जाये !

उस दिन इतनी ही।

अगले दिन बासंती ने बड़ी गंभीरता से पूछा, "तू अकेली शहर जा सकेगी ?" मनबड़ी ने जवाब दिया, "क्यों नहीं। आजकल बस-मोटर के जमाने में शहर जाना तो बड़ा सहज हो गया है। पिछले साल जमीन नीलाम होने के समय में अकेली ही शहर पहुंच गयी थी।"

"तो अच्छी बात है। शहर जाकर तुझे एक चीज बेचनी पड़ेगी। क्यों बेचना चाह रही हूं, इस विषय में कुछ मत पूछना।"

इतना कहकर वह अपने सोने के कमरे में गयी। बक्स से दो कंगन लाकर मनबड़ी के हाथ में दे दिये। कहां और कैसे बेचने चाहिए वह भी बता दिया। "शहर में बरगद के पेड़ के पास एक लाल रंग का टीन-पात लगा हुआ स्कूल है। उसके दो कदम आगे जाने से ही एक सुनार की दुकान दिखायी देगी।" मनबड़ी जैसी औरत को बढ़िया कंगन बेचते हुए पकड़े जाने का कोई डर नहीं है क्योंकि वह सुनार चोरी का माल ही खरीदता है।

दो दिन बाद मनबड़ी ने कंगन बेचकर जो रुपये प्राप्त हुए थे वह दे दिये और कहा, "बाजू पैसों के लिए चारों ओर घूम रहा है। कहीं से भी रुपये का जुगाड़ नहीं हो पा रहा है।"

बासंती को जैसे चैन मिल गया। पहले की तरह ही गंभीर होकर बोली, "पीछे के बागान की सब सब्जी उखाड़ फेंकने के काबिल हो गयी है। उसी स्थान पर कुदाल मारकर अदरक और हल्दी रोपने से अच्छा है, तू यह बात कानूनगो को बताना तो वह तुझे किसी आदमी को लाने के लिए कहेंगे। फिर तू कुदाल मारने के लिए बाजू को बुला लाना। मुझे उसके साथ बात करने की इच्छा हो रही है। उसे देखने का भी दिल है।"

कहने के मुताबिक बाजू जमीन खोदने के लिए पीछे के बगीचे में आया। बासंती ने बाजू के साथ बातचीत की। पहले तो बाजू विश्वास ही नहीं कर पा रहा था कि पृथ्वी पर इतनी हमदर्द औरतें भी हो सकती हैं।

"तेरे बारे में सब बातें सुन चुकी हूं।"

बाजू शर्म के मारे कुछ नहीं बोला । बासंती फिर बोली, "उत्तरी असम कब जाओगे ?"

"कुछ ठीक नहीं है । बहुत रुपया चाहिए, यूं ही कुछ दिन चलाने जैसा उपाय नहीं है । फिर भी वैशाख के पहले ही जाना पड़ेगा ।"

"उसको भी साथ ले जाओगे ?"

"सोच तो ऐसा ही रहा हूं ।"

बासंती का मन खिल गया । उसके बाद ही उनकी बातचीत सहज हो गयी । बासंती के सामने बाजू का आंसू बहाना मनबड़ी ने दूर से ही देखा । मनबड़ी को संदेह हुआ शायद बासंती अपने अतीत जीवन की तदानुरूप बात बाजू को बता कर अपना अनुताप हलका कर रही है । कारण कंगन बेचकर मिला हुआ तीन कुड़ी दस रुपया बाजू के हाथ में देते हुए बासंती का कहना मनबड़ी के कान में पड़ा, "जितनी जल्दी हो सके उतनी ही जल्दी । देर होने से उसका मन पलट सकता है । तुझे भी सुविधा नहीं मिल सकती है । समझ लो बाजू जीवन में मौका एक ही बार आता है । मेरी जैसी मौका खो देने वाली औरत कहीं नहीं होगी ।"

बाजू शाम तक चला गया । मनबड़ी को बासंती के बारे में बड़ा कौतूहल हुआ । उसने झिझकते हुए पूछा, "अच्छा अगर वह दोनों भाग भी गये तो उससे आपको क्या लाभ होगा ?"

बासंती ने गंभीर होकर कहा, "इंसान सिर्फ लाभ-नुकसान देखकर ही काम करता है क्या ? उनकी कहानी सुनने के बाद से ही मैं सोचती रही हूं, भगवान उनका भला करे और मुझे उन दोनों के भाग जाने की खबर सुनने की प्रबल इच्छा हो रही है ।"

वैसाख पहुंच ही नहीं पाया । फागुन के चार दिन ही बीतने पाये थे कि कांचन-मती मगू बायन को धोखा देकर बाजू के साथ कहीं चली गयी । मनबड़ी के कहे अनुसार सोनाई में मछलीकछुओं को भी पता न चले, इस तरह से उन्होंने आधी रात में सोनाई पार की । लोगों को कुछ भी पता नहीं चल सका । वह कहां गये हैं, यह बात सिर्फ बासंती और मनबड़ी ही जानती हैं । बासंती के नयनों से आनंद अश्रु-धार बहने लगी ।

कांचनमती के जाने के बाद बासंती के मन में बहुत परिवर्तन आ गया । पहले

वह नीरव ही दुख सहन करती थी। अब वह अस्थिर हो गयी। धनंजय की चिंता फिर से मन में आने लगी। सोचा, पहली बार से अब मन और कठोर करना पड़ेगा। अपने सुनाम की बात भूल जानी पड़ेगी। सास-ससुर की माया भी छोड़ देनी पड़ेगी।

मनबड़ी के साथ उसकी दोस्ती ज्यादा गहरी हो गयी। उसको ध्रुव विश्वास हो गया कि मनबड़ी बहुत विश्वास योग्य औरत है और उसको प्यार भी करती है। एक दिन बड़े आवेग से मनबड़ी को अपनी सब बातें बता दीं। मनबड़ी के सामने उसे तनिक भी संकोच नहीं हुआ। मथुरा को भी उसने सब सच बात बतायी थी पर पूरी बात नहीं बतायी थी। आज सारी सत्य-कथा दूसरे किसी प्राणी को कहने के बाद उसका मन हलका हो गया। मनबड़ी ने भी बासंती की इच्छा का समर्थन किया।

"मनबड़ी तू उनको पहचानती है क्या?"

"मैं तो जानती हूं। पर वह मुझे नहीं पहचानते।"

"तो फिर एक काम करना। मैं तुझे एक चिट्ठी दूंगी। जैसे भी हो, तू उनको दे देना। पर देखना, किसी को पता न चलने पाये।"

मनबड़ी ने वचन दिया। उसने पाभचिला जाकर धनंजय से अकेले में भेंट की और बासंती के बारे में सब कुछ बताया। धनंजय गहरी चिंता में पड़ गया। मनबड़ी की लायी हुई चिट्ठी कई बार पढ़ी, 'प्यारे धनंजय, आखिरी बार की भेंट से पता चल गया था कि तुम भी मेरी ही तरह जिंदगी भुगत रहे हो। मनबड़ी मेरे बारे में सब कुछ बता देगी। हम अभी बूढ़े नहीं हुए हैं। अभी तो बहुत दिन जिंदा रहना है। हम बाकी जीवनकाल क्या ऐसे ही बिता देंगे? क्या इस बारे में कोई व्यवस्था नहीं हो सकती? बहुत-सी पोथी-पुस्तकें पढ़ीं। फिर भी पर जन्म के पुण्य के विषय पर मुझे पूरा विश्वास नहीं हुआ है। जिस ईश्वर ने इस जन्म में ऐसा निदारुण व्यवहार किया है वही ईश्वर पर जन्म में सुख देंगे, ऐसा विश्वास कौन कर सकता है। मैं समझती हूं, मैं तुम्हारी हो गयी, सुनकर लोग हतप्रभ हो जायेंगे। किंतु···'

धनंजय जीवन में सबसे ज्यादा अचंभित हुआ। अंतिम बार जिस बासंती को इतना सहनशील समझा था, जिस बासंती ने मन की दारुण अवस्था में भी हिंदू विधवा कहकर गर्व-बोध किया था और मन की यातना को आजीवन वहन कर

। निश्चित प्रतिश्रुति जिसकी आंखों और मुंह पर दिखायी दी थी, उसी बासंती ॰ मन का अकस्मात परिवर्तन, अदम्य साहस, सामाजिक मूल्य-बोध को तुच्छ करने की प्रबल इच्छा, और उसकी हो जाने की व्याकुलता का आभास पाकर वह महासंकट में पड़ गया। पत्र दोनों हाथों में कांपने लगा। कपाल पर पसीना दिखायी देने लगा। मनबड़ी को कुछ कहते-कहते रुक गया। अवश होकर कुछ देर बैठा रहा।

मनबड़ी को एक अनजानी आशंका ने अस्थिर कर दिया। शेष में धनंजय ने झिझकते हुए धीरे-धीरे कहा, "मैं आज और चिट्ठी नहीं दूंगा। तू कहना, मैं सोच रहा हूं। कैसे क्या व्यवस्था करनी होगी, इसके बारे में मैं खुद दरगियाल जाकर बात करूंगा। मैं परसों वहां जाऊंगा।"

मनबड़ी ने सारी बातें तफसील से बतायीं। बासंती की चिंता और बढ़ गयी। तो आखिरी बार उसका अपना ही अपमान हुआ क्या ? क्या उसने उसको स्वार्थी और चरित्रहीन समझा होगा ?

दो दिन, दो रात बासंती ने खाना, सोना छोड़ दिया। धनंजय अपने कहे अनुसार उसके पास नहीं आया। इसलिए उसके न कहने पर भी मनबड़ी पाभ-चिला गयी, वहां सब बातें जानकर उसे बड़ी निराशा हुई। सोनाई के उत्तर पार के लोग जिसे देवता की तरह मानते थे वही धनंजय बरुआ अपना घर-बार, मछुए महलदार को बेचकर कहीं चला गया। कहां गया किसी को नहीं पता। वह किसी को कुछ भी बताकर नहीं गया। सिर्फ पाभचिला के गांव बूढ़ा (गांव का मुखिया) को इतना बताया कि वह अब पाभचिला या सोनाई पार कभी नहीं आयेगा।

मनबड़ी ने सोचा था कि यह खबर सुनते ही बासंती मूर्छित हो जायेगी किंतु यह सुनकर उसने सिर्फ एक बार ऊपर की ओर देखा। सारा आकाश जैसे पीला पड़ गया हो। दोनों आंखें आंसुओं से भर आयीं। मनबड़ी को कुछ न कहते हुए वह बिल्ली के बच्चे की तरह अपने सोने के कमरे में चली गयी और अंदर से दरवाजे में कुंडी लगा ली।

इसके बाद से बासंती ने मनबड़ी के साथ भी बातचीत बंद कर दी। पहले की तरह 'निमाटी' (चुपचाप रहने वाली) कन्या जैसी हो गयी। ससुर की ताक पर रखी हुई पुस्तकें वह अपने कमरे में ले आयी। गंगा चील के पंखोंमें छह ऋतुओं के रंग लगे। जीने का प्रबल आग्रह पंख में सघन स्पंदित हो उठा। सोनाई के ऊपर

झपटकर, ऊपर-नीचे उड़ते हुए गंगा चील ने नदी में मछली तैरने का^{नी}
दिया। ना

गंगा चील के पंख की हवा बासंती के शरीर में भी लगी थी। किंतु वह रुकी ही रही। सुशोभित सोनाई पहले की तरह बहती रही।

राज बन्धु इन्डस्ट्रियल कं., सी-61 मायापुरी फेज II, नयी दिल्ली-110064 में मुद्रित।